27

5, III

साहित्याङ्क—

विद्यार्थियोंके लिए मूल्य १॥) रु०

त्रैमासिक

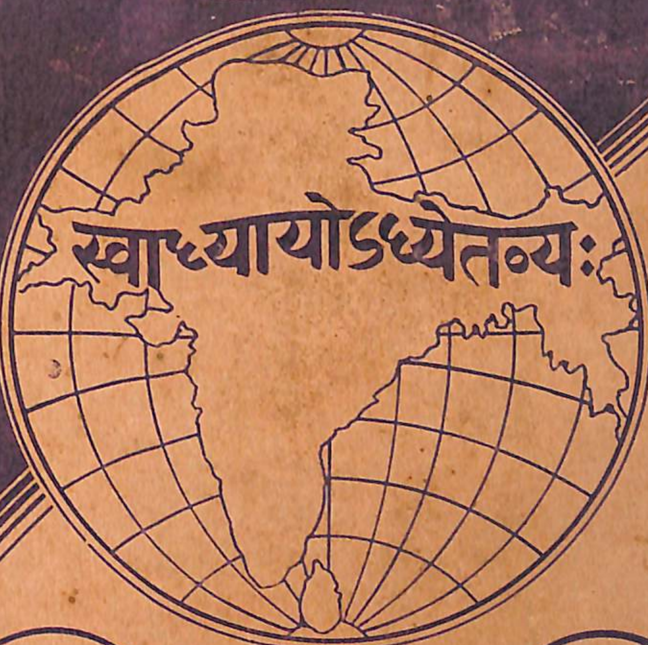
श्रीः

श्रीस्वाध्याय

[साहित्याङ्क]

वर्ष ५
सं० २००३

संख्या ३
चैत्र



वार्षिक मूल्य ३॥)

इस अङ्क का मूल्य २)

संस्थापक—
श्रीमान् अमृतवाग्भव आचार्य

सम्पादक—
श्री पं० हरदेव शर्मा त्रिवेदी

विषय-सूची

श्रीस्वाध्याय

संस्थापक तथा प्रधानाध्यक्ष—

सर्वतन्त्रस्वतन्त्र महामहिम आचार्य

श्री १०८ मान् अमृतवाग्भवजी महाराज

संरक्षक—

बघाटमहीमहेन्द्र धर्ममार्तण्ड—

राजा साहब श्री १०५ मान् दुर्गासिंह जी बहादुर C. I. E. सोलन।

रावराजा कैप्टेन श्री १०५ मान् गिरिधारीशरणसिंहजी भरतपुर।

श्रीमान् दीवान रुद्रशरणप्रतापसिंहजी जमीनदार साहब उपरोड़ा स्टेट सी.पी.

सहायक—

श्री १०५ मती माँजी महाराणी साहिबा (सिरमौरीजी) बघाटराज्य।

श्री १०५ मती सौ० राणी साहिबा वृन्दावनवाली जी (भरतपुर)।

श्रीमान् स्व० पं० चतुर्भुजजी राजपुरोहित ताल्लुकेदार, भरतपुर।

रावबहादुर धर्मालङ्कार श्री १०५ मान् महाराज प्रभुनाथसिंहजी नरसिंहगढ़।

श्री १०५ मान् राजकुमार मानसिंहजी बार.एट-लॉ. जज हाईकोर्ट उदयपुर।

श्रीमान् दानवीर सेठ श्रीगोपालजी मोहता, उदयपुर (मेवाड़)।

श्रीमान् सरदार कुँवर रणदीपसिंह जी साहब नाहन (सिरमौर)।

श्रीमान् कुँवर शिवसिंह जी B. A., L-L. B. सेशनजज सोलन।

श्रीमान् सरदार जगजीतसिंह जी ढिल्लों B. A., L-L. B. नाभा।

श्री पं० देवकीनन्दन जी कथावाचक, यादव कीर्तन मण्डल, अम्बाला।

श्रीमान् ला० बांकेलाल राजकुमार आढ़ती, खड़ (पंजाब)।

सम्पादक और व्यवस्थापक—

ज्यो० मा० ज्यो० र० श्री पं० हरदेव शर्मा त्रिवेदी ज्योतिश्शास्त्री

उपसम्पादक—

साहित्यरत्न काव्यतीर्थ श्री पं० भवानीशङ्कर त्रिवेदी शास्त्री

प्रकाशक—

श्रीस्वाध्यायसदन सोलन (पंजाब)

श्रीस्वाध्यायके नियम तथा उद्देश्य

उद्देश्य—

समस्त संसारको हितकी ओर ले जाना तथा इहलौकिक और पारलौकिक मोक्ष (स्वातन्त्र्य) प्राप्त कराना 'श्रीस्वाध्याय'का मुख्य उद्देश्य है।

सञ्चालक गणोंके नियम—

संरक्षक—

(१) जो महानुभाव ३००) तीन सौ रुपयेसे अधिक प्रतिवर्ष सहायता देंगे वे 'श्रीस्वाध्याय' के संरक्षक माने जायेंगे।

सहायक—

(२) जो सज्जन ५०) से ३००) तक प्रतिवर्ष सहायता देंगे, वे 'श्रीस्वाध्याय' के सहायक माने जायेंगे।

'श्रीस्वाध्याय' के नियम—

(१) 'श्रीस्वाध्याय' आश्विन शुक्ल १०, पौष शुक्ला १०, चैत्र शुक्ला १० और आषाढ़ शुक्ल १० को प्रकाशित होता है। इसका वार्षिक मूल्य ३॥) और एक प्रतिका १) रु० है।

(२) जिन सज्जनोंके लेख श्रीस्वाध्याय-सदनकी ओरसे प्रार्थना-पूर्वक मंगवाये जायेंगे वे अवश्य प्रकाशित होंगे। अन्य लेख यदि गवेषणापूर्ण मौलिक और उपयोगी समझे जायेंगे तो यथासमय प्रकाशित हो जायेंगे, अन्यथा नहीं।

(३) लेख, कविता, चित्र, समालोचनार्थ पुस्तकों की दो-दो प्रतियां और विनिमय (परिवर्तन) के पत्र पत्रिकायें सम्पादक 'श्रीस्वाध्याय' सोलन (पंजाब) के पतेसे भेजने चाहिएं।

(४) लेख, कविता आदि प्रकाशनार्थ सामग्री स्पष्ट, अक्षरोंमें कागजके एक ओर ही लिखी होनी चाहिए।

(५) किसी लेखके प्रकाशित करने या न करने उसे घटाने बढ़ाने तथा उसे लौटाने न लौटानेका सम्पूर्ण अधिकार सम्पादकको है। अस्वीकृत लेख डाक व्यय प्राप्त होने पर लौटाये जा सकेंगे।

ग्राहकोंके नियम—

'श्रीस्वाध्याय' के स्थायी ग्राहक वर्षारम्भके प्रथमांकसे (आश्विनमास विजयादशमीसे) ही बनाये जाते हैं, चाहे वे मूल्य कभी भेजें। यदि विजयादशमीका 'नववर्षाङ्क' समाप्त हो जावे; या कोई ग्राहक अवधि समाप्त होने पर पीछे विशेषांक न लेना चाहे तो बीचमें किसी भी समयसे ग्राहक हो सकते हैं। ऐसी स्थितिमें उनसे पूरा वार्षिक मूल्य ३॥) रु० न लेकर वर्षसमाप्ति तक (अषाढ़ तक) के शेष अङ्कोंका मूल्य ही लिया जायगा। 'नववर्षाङ्क' के बिना तीन अङ्कों या नौमासका मूल्य ३) रु० और एक अङ्कका मूल्य १) रु० मनीआर्डर द्वारा पेशगी आना चाहिए। वी० पी० मंगानेसे उक्त मूल्यमें तीन आने अधिक रजिस्ट्री खर्चके बढ़ जावेंगे।

इस 'साहित्याङ्क' का मूल्य २) रु० है, परन्तु वर्षारम्भसे ही जो स्थायी ग्राहक बन चुके हैं उनको अधिक कुछ नहीं देना पड़ेगा। जो आगामी आषाढ़ तक ६मा ही ग्राहक बनेंगे उन्हें १॥) में यह अङ्क मिलेगा।

मूल्य भेजते समय मनीआर्डरके कूपन पर अपना नाम पूरा पता और ग्राहक नम्बर स्पष्ट अक्षरों में लिखना चाहिए।

'श्रीस्वाध्याय' का नमूना बिना मूल्य किसीको नहीं भेजा जाता। जिन सज्जनोंके जबाबी पत्र या उत्तरके लिए टिकट आवेंगे उन्हींको तत्काल उत्तर दिया जावेगा। 'श्रीस्वाध्याय' प्रकाशित होनेकी तिथि (शुक्ला दशमी) को प्रत्येक ग्राहकके नाम बड़ी सावधानीसे भेज दिया जाता है। यदि किसी ग्राहकके पास न पहुँचे तो १५ दिनके अन्दर हमें सूचना देनी चाहिये।

पता—व्यवस्थापक, श्रीस्वाध्यायसदन, सोलन, (शिमला)

प्रेमी पाठकोंसे निवेदन

गताङ्ककी सूचनानुसार यह अङ्क निश्चित समयसे पूर्व पाठकोंकी सेवामें न पहुँच कर एक दैवी आपत्तिके कारण दशदिन विलम्बसे पहुंच रहा है इसका हमें महान्खेद है। परन्तु पृष्ठ ७-८ पर "इस अङ्ककी अपनी बात" शीर्षकसे हमारी परिस्थितिका अनुभव करते हुए आशा है पाठक इस अङ्कको पाकर सन्तुष्ट ही होंगे। सोलनमें प्रेस न होनेसे 'श्रीस्वाध्याय' को महान् कठिनाई है। पाठकोंका सक्रिय सहयोग ही पत्रकी इस कठिनाईको दूर कर सकता है। जो सज्जन इस पत्रसे हार्दिक स्नेह रखते हैं वे सभी यदि कमसे कम दो-दो नये ग्राहक और बना देवें और पृष्ठ ७८ में प्रकाशित हमारी योजनाके अनुसार मासिक संस्करणका मूल्य ८) रु० प्रत्येक ग्राहकसे भिजवा दें तो हम शीघ्र ही दिल्लीमें शाखा कार्यालय स्थापित करके आगामी छठे वर्षसे ही इस पत्रको सुन्दर मासिक रूप दे सकेंगे। 'श्रीस्वाध्याय' के हितैषियोंने हमें कई बार लिखा है कि "आप मासिककी योजना रक्खें और अपील निकालें तो हम भी आपको बहुतसे ग्राहक देंगे और सहायक भी बनावेंगे।" उन सब सज्जनोंके लिए अब यह परीक्षाका समय है। जितने अधिकसे अधिक ग्राहक बनाकर हमें सहयोग दिया जावेगा उतनी ही अधिक सेवा इस पत्र द्वारा जनता-जनार्दनकी हो सकेगी। मासिक होने पर यह पत्र निश्चित तिथिसे दो दिन पूर्व प्रतिमास पाठकोंकी सेवामें पहुँचता रहेगा।

बहुतसे ग्राहक पत्र लिखते समय न तो अपना पूरा पता लिखते हैं और न ग्राहक नम्बर ही, ऐसे सज्जनोंको अङ्क भेजने और उत्तर देनेमें बड़ी कठिनाई होती है। कृपया प्रत्येक सज्जन मनीआर्डरके कूपन और पत्रमें अपना पूरा पता और ग्राहक नम्बर स्पष्ट अक्षरोंमें लिखा करें।

ग्राहकोंको आवश्यक सूचना

यह तो प्रायः सब प्रेमी ग्राहक जानते ही हैं कि 'श्रीस्वाध्याय' के स्थायीग्राहक वर्षारम्भ विजया-दशमी (आश्विन मास दशहरे) से ही बनाये जाते हैं और जिन ग्राहकोंने दशहरेसे पहले ही अपना वार्षिक मूल्य ३।।) मनीआर्डरसे भेज दिया था वही विशेष लाभमें रहे। विजयादशमीका नववर्ष विशेषाङ्क २) रु० मूल्यका (अब जिसका ५) रु० मूल्य है) और २) रु० का यह साहित्याङ्क तथा पौष और आषाढके एक एक रुपयेके दो साधारण अङ्क (कुल ६) रु० का साहित्य उन्हें ३।।) में प्राप्त हुआ। जो सज्जन पहले मनीआर्डर भेजकर स्थायी ग्राहक नहीं बनें वे इस लाभसे वञ्चित रहे। बहुतसे सज्जनोंने 'नववर्षाङ्क' समाप्त होने पर मार्गशीर्ष पौष माघ मासमें अपना पूरा वार्षिक मूल्य ३।।) मनीआर्डरसे भेजा था, उन्हें गत पौष मासका 'हैमन्ताङ्क' भेजा जा चुका है और अब यह 'साहित्याङ्क' तथा आगामी आषाढ़का ग्रीष्माङ्क भी उन्हें मिल जायेंगे। आगामी आषाढ़के 'ग्रीष्माङ्क' के साथ ही इस वर्षमें होने वाले नये पुराने सभी ग्राहकोंका मूल्य समाप्त हो जावेगा। अतः आषाढ़के बाद जिनका वार्षिक मूल्य पहले प्राप्त हो जावेगा उन्हीको छठेवर्षका 'नववर्षाङ्क' मिल सकेगा। अब इस 'साहित्याङ्क' (वसन्ताङ्क) से जो सज्जन स्थायी ग्राहक बनना चाहें वे इस अङ्कका १।।) रु० और आगामी आषाढ़के ग्रीष्माङ्कका १) रु० मिलाकर कुल २।।) रु० मनीआर्डरसे भेज देवें। यदि केवल एक यह साहित्याङ्क ही लेना हो तो २) रु० भेजें।

आषाढ़के अनन्तर आगामी छठे वर्षसे ही हम 'श्रीस्वाध्याय' को मासिक रूपमें प्रकाशित करनेका प्रयत्न कर रहे हैं। मासिक संस्करणका मूल्य पेशगी मनीआर्डरसे ८) रु० होगा। जो सज्जन अभी १०) दश रुपये मनीआर्डरसे भेज देंगे उन्हें यह २) रु० मूल्यका साहित्याङ्क तुरन्त भेज दिया जावेगा और आषाढ़ शु० १ को ग्रीष्माङ्क भी भेजा जावेगा तथा छठे वर्षके मासिक अंकके स्थायी ग्राहकोंमें उनका नाम लिख लिया जावेगा। आशा है हमारे प्रेमी ग्राहक महानुभाव अधिकसे अधिक मासिक संस्करणके लिये ग्राहक बनाकर अपने इस प्रिय पत्रको शीघ्र ही मासिक रूप देनेमें सहायक होंगे।

मनीआर्डर भेजने और पत्र व्यवहारका पताः—

व्यवस्थापक 'श्रीस्वाध्याय' सोलन (शिमला)

आगामी अंक

आगामी आषाढ़ मासका 'ग्रीष्मांक' १० दिन पूर्व तैयार हो जावेगा और हमें आशा ही नहीं पूर्ण विश्वास है कि यदि भगवान्‌की कृपा रही तो आषाढ़ शु० ३ ता० १ जुलाई तक हम नया अङ्क सब गाहकोंके हाथमें पहुंचा देंगे। आगामी अङ्कसे ज्योतिर्विज्ञान परिशिष्टांकके लिए भारतके कई बड़े बड़े अनुभवी ज्योतिषाचार्योंने अपने ज्योतिषविषयक लेख और अनुभूत चांस भेजना स्वीकार किया है—उन सब विद्वानोंसे हम निवेदन करते हैं कि वे अपना अनुभवपूर्ण लेख ज्येष्ठ शु० १५ ता० १४ जून तक कार्यालयमें सोलन पहुंचानेकी कृपा करें। विलम्बसे आने वाले लेख स्थान न पा सकेंगे।

युक्तप्रान्तीय जनताके लाभार्थ खुर्जामें 'श्रीस्वाध्याय' की शाखा स्थापित की गई है। इस शाखाके संचालक-विशुद्ध ज्योतिषकार्यालयके अध्यक्ष श्री पं० विशुद्धानन्दजी गौड़ ज्योतिषाचार्य हैं। अतः समीपके सज्जन खुर्जाशहरमें भी रुपये जमा कराकर अङ्क वहीं से प्राप्त कर सकते हैं।

—व्यवस्थापक

श्रीमान् राजपुरोहितजीका सत्कार्य

इस अङ्कसे भरतपुरके सुप्रसिद्ध रईस विद्यानुरागी सहृदय राजपुरोहित श्रीमान् पं० विद्याधरजीने अपने स्वर्गीय पूज्य पिता (श्री १०८ पं० चतुर्भुजजी राजपुरोहित) की अमरकीर्तिको अक्षुण्ण रखनेके हेतु सदाके लिये उन्हें 'श्रीस्वाध्याय' का सहायक बनाकर पूर्णपितृभक्तिका परिचय देते हुए सत्साहित्यप्रेमी श्रीमन्तोंके सामने आदर्शउपस्थित किया है। इस सुकार्यके लिये हम आपका हार्दिक अभिनन्दन करते हुए आशा रखते हैं कि भविष्यमें इसी प्रकार आप अपने इस प्रिय पत्रकी उन्नतिमें सहयोग देते रहेंगे।

—सम्पादक।

स्वाध्यायोऽध्येतव्यः। ❀ श्रीः ❀ स्वाध्यायान्न प्रमदितव्यम्।

श्रीस्वाध्याय

[वसन्तांक]

स्वराष्ट्रशिक्षां गृह्णीयाच्चिकीर्षुः स्वां समुन्नतिम्।
दूरदृष्टिर्यया भूत्वा न कदाऽपि विषीदति [राष्ट्रालोक]

वर्ष ५ | सोलन, चैत्र शु० १० गुरुवार सं० २००३ वि० | संख्या ३

तत्तद्राष्ट्रे मानवानां व्यवस्थां शोभासम्पच्छालिनीमार्यरीत्या।
प्रेम्णा लोके स्थापयँस्तत्त्वदर्शी श्रीस्वाध्यायः कल्पतां विश्वभूत्यै॥
—अ० वा० आचार्य

मनुष्य को

[श्रीयुत कविवर उदयशङ्करजी भट्ट]

भविष्य दूर पर खड़ा मनुष्यको बुला रहा।
चलो बढ़ें बढ़े चलें, बनुष्य चुलबुला रहा॥

दिवस चले निशा चली,
रुकी नहीं उषा चली,
महान् पन्थ पार कर—
मनुष्य की तृषा चली,
न रुक सका मनुष्य यह मनुष्य कुल बुला रहा।

घड़ी घड़ी बदल रही—
घड़ी घड़ी उगल रही—
'इन्कलाब—इन्कलाब'
क्रान्तियां मचल रहीं।

मनुष्य यह न, प्रेत जो मनुष्य को भुला रहा।

सघन घिरे, गगन फटे,
तिमिर हटा कुहर छटे,
प्रशस्त पन्थ जगमगा—
उठा, विहंग आ जुटे,
बढ़ा कदम, न मुड़, न रुक, निसर्ग स्वर्ग आ रहा।

मनुष्य हैं मनुष्य बन,
मनुष्य हैं विशालतम,
कि विश्व कल्पवृक्ष का,
मनुष्य तू अमर कुसुम,
कि रोम-रोम विश्व का यही तुझे सुना रहा।

एक कविता

(जो श्री नेताजीको अत्यन्त प्रिय थी)

[प्रसिद्ध अंग्रेजी कवि 'सुइनवर्न'की सुपरफ्ल्यूमिना बेबिलोनिअस' Super Flumina Babilonious शीर्षक कविता श्रीयुत सुभाषचन्द्र वसु 'नेताजी'की बहुत प्रिय कविताओंमें से एक है। इस कवितामें यहूदी इतिहासके आधार पर इटलीके उस स्वाधीनता संग्रामका निर्देश किया गया है जो वीर इटालियनोंने आस्ट्रियाके तात्कालिक अत्याचारी विदेशी शासनके विरुद्ध छेड़ा था। पाठक पायेंगे कि 'नेताजी' को प्रिय इस कविताके वर्ण्य विषय वे स्वयं बन गए। कवितामें उनका व्यक्तित्व-जीवन पूर्णरूपसे प्रतिफलित हो रहा है। संक्षिप्त गद्यानुवाद यहां दिया जा रहा है। —[सम्पादक]

अनुवाद

विदेशकी नदीके तट पर बैठकर हम लोग तुम्हें (अपने देश वासियोंको) गरम आंसुओंके साथ स्मरण कर रहे हैं। जब हम कारागारमें बन्दी थे और युगान्त-यातनाएं सह रहे थे तो तुम इतने असहाय थे कि हमारी ओर देख नहीं सके।

विदेशकी इस नदीके किनारे पर हम उठकर खड़े हो गए हैं और एक नया तराना छेड़ रहे हैं। यह तराना नहीं, बन्दिनी मातृभूमिके लिए मुक्तिकी भेरी है और कह रही है कि तुम्हारी यन्त्रणाओंका अवसान हो गया।

मां! हम तुम्हारे लिये न जाने कितने दूर देशान्तरोंमें फिरते रहे हैं, हमारे हृदयोंमें रुद्ध पिपासाओंकी चितानल प्रज्ज्वलित हो रही है, जलकी एक बून्दके लिये हम न जाने कहां कहां गए हैं। (किन्तु) गर्वभरी वाणीमें हमें कहा गया 'हम जानते हैं, तुम्हारा हृदय दृढ़ है फिर भी तुम झुकोगे—तुम्हें झुकना पड़ेगा तुम दास हो व दासी पुत्र हो। प्रभुसेवा ही तुम्हारा व्रत है। पुरस्कारमें जूठन और बेतोंका प्रहार तुम्हें मिलता ही रहेगा।

जननी! तुम्हारी नदियोंके किनारों पर जो नगर नगरियां हैं उनमें विलासकी वारुणी बह रही थी, दिवास्वप्नों और नृत्य गीतोंकी भर-मार थी, लोग होठों पर मीठी ज्वाला लिये रजतरजनी में फूलोंके झूलों पर सुख तन्द्रारत थे, उनके ललाट पर कलंकके टीके लगे थे, फिर भी उनके कुन्तल-कुञ्चित-सुवसित व संवारे हुए थे, और उनके कण्ठोंमें मल्लिकाकी मालाएं लिपट रहीं थीं। उन्होंने तुम्हारे पर्वतोंकी उपत्यकाओं और नदियोंके तटों पर यह कभी नहीं देखा कि उनके पिता-पितामह आदि पूर्वज अपना परिचय तक खो बैठे हैं। वे अपनी शक्तिका मन्त्र भूल गए थे अपने इष्टदेवताओंसे अलग हो गए थे और मधुमदिरा हीमें मत्त हो रहे थे। तुम्हारी नद॰ नदियोंकी सूखी खाड़ियोंमें तीव्र तृषाको शम करने वाला ज्वार फिर आया तो मां! तेरी सन्तानोंने वे मिथ्याके मुकुट उतार कर धूलमें फेंक दिये और कलङ्कके चिन्ह मिटा दिये।

* * *

इन वीरोंके नेताको विदेशी शासकोंने जीवित ही समाधि देदी थी, एक घरमें बन्द कर द्वारको ईंटोंसे बन्द करवा दिया था। जब ये वीर देश-भक्त उस नेताके निकट पहुंचे तो देखा कि समाधिके रक्षक प्रहरी सुप्त पड़े हैं, कपाट खुले हैं और वह दिव्यदर्शन-पुरुष बाहर खड़ा है। उस समय उसने जननीके वीरपुत्रोंको निम्न ओजस्वी एवं अश्रुतपूर्व सन्देश दिया।

सन्देश

देखो जननीकी कायासे प्रेतों द्वारा लपेटा हुआ कफन हट गया है, पिशाच प्रहरी स्वप्न विचारमें ऐसे अचेतन हो रहे हैं जैसे किसीने

औषधिसे मूर्च्छित कर दिया हो। और देखो यह सिंहासन सूना पड़ा है, स्वर्ण-ज्योति-किरीटिनी अनिन्द्य सुन्दरी मां इसपर विराजमान नहीं है, किन्तु मैं कहता हूँ कि मेरी मां मृता नहीं है। तुम अपनी आखें पोंछ डालो, वह त्रिभुवनमोहिनी राजराजेश्वरी मेरे कण्ठसे तुम्हें यह सन्देश दे रही है कि—किसी कुलीनका, किसी राजवंशका या स्वयं राजाका कभी विश्वास मत करो। मनुष्य स्वयं अपने कर्मों का फल प्राप्त करता है, अपने बनाए सिंहासन पर बैठता है। विश्वके लिये जो आत्मबलिदान करता है वही अमर है, जिसने मृत्युकी सब मांगे पूरी कर दी हैं उसने क्षण भरके विनिमयमें अनन्त, अविनाशी और दिव्य सिंहासन प्राप्त कर लिया है। स्मृतिके हिमाद्रि शिखर पर जीवन यात्राके उत्समें मानव मानसमें कीर्तिकी वह किरण जहां भी कहीं पड़ जाएगी, संजीवनी बन जाएगी। जिस दीपका आज निर्वाण हुआ है कालकी कोखमें जिसका बलिदान विफल जान पड़ता है, वह तो सुन्दर शाश्वत और चिर ज्योतिष्मान् हो गया है"।

देश और जातिके त्राताकी यह दिव्यवाणी सारे देशमें फैली और आज भी सुन पड़ रही है। इसी लिये मृतप्राय जाति जननीका स्तन्य पानकर फिर भी जीवित हो गई है। अब यहां देश हीमें प्रकाश फैलेगा और देवताकी लीला खेलेगी।

इस अंककी अपनी बात

अपने साहित्यका अध्ययन ही स्वाध्याय कहलाता है। इस प्रकार अपने साहित्याध्ययनकी ओर जनमन आकृष्ट करना और उसके द्वारा राष्ट्र व समाजको समुन्नत-स्वात्मबोध युक्त करना 'श्रीस्वाध्याय' का अपना कर्तव्य है। अब तक यह पत्र अपने इस कर्तव्यका किस प्रकार पालन करता आ रहा है यह पाठकोंसे अविदित नहीं। यूं तो इस पत्रके प्रत्येक अङ्ककी सामग्री उत्कृष्टसाहित्यगुणोपेत ही होती है, फिर भी भारतीय साहित्यकारों, उनकी कृतियोंका संक्षिप्त सरस परिचय देनेकी बलवती इच्छाने इस वर्ष एक सुन्दर साहित्याङ्क पाठकोंकी भेंट करनेके लिए उत्साहित किया। और उसके लिए कार्य भी बड़े उत्साहसे आरम्भ कर दिया गया—प्रभूतमात्रामें सामग्री जुटा ली गई—निश्चय किया गया कि कमसे कम १५० पृष्ठका एक सुन्दर अङ्क विक्रम नववर्षारम्भसे (ता० ३ अप्रैलसे) पूर्व ही पाठकों तक पहुंचा दिया जाय। तदर्थ श्रीयुत पूज्य पितृव्यपाद (श्री पं० हरदेवजी शर्मा त्रिवेदी) लाहौर से 'श्रीविश्वविजय-पञ्चाङ्ग' प्रकाशनके कार्यसे निवृत्त होते ही कई एक अत्यावश्यक गृहकार्यों को—यहां तक कि आसन्नप्रसवा श्रीमती अ० सौ० बहिन जयमङ्गलादेवीजीकी अवस्थाका भी कुछ विचार न कर प्रस्तुत अङ्कके प्रकाशनार्थ देहली जा डटे।

किन्तु बीच हीमें भयङ्कर विघ्नकारिणी विपत्ति आ टूटी—बहिनके मृत शिशुका प्रसव सोलनमें न हो सका—जीवन मरणकी दोलामें झूलती हुई उसे शिमला लेडी-रीडिङ्ग-हास्पिटलमें पहुँचाई गई। फलतः सामग्री जुटानेके गुरुतर कार्यको बीच हीमें छोड़कर इधर तो मुझे शिमला पहुँचना पड़ा और उधर पितृव्यचरणोंके लिए भी सहसा प्रकाशन स्थगित कर शिमलेके लिए प्रस्थान करना आवश्यक हो गया।

ईश्वरकी महान् कृपा और श्री १०५ मान् धर्ममार्तण्ड बघाटनरेश महोदय एवं श्री १०५ मती परमसाध्वी भगवद्भक्तिपरायणा राजमाता सिरमौरी जीकी उदार सहायता और सत्प्रयत्नके प्रतापसे

बहनके जीवनकी रक्षा तो हो गई पर इस महान् संकटके कारण प्रथम तो इस साहित्यांकके प्रकाशन में ही अनावश्यक एवं असह्य विलम्ब हो गया, दूसरे सामग्री भी पूरी नहीं दी जा सकी। जितने विशाल और भव्यरूपमें अनेक चित्रोंसे सुसज्जित इस अङ्क को प्रकाशित करनेका आयोजन था वैसे रूपमें न निकल सका। कई विद्वान् कलाकारोंके लेख कविता और समालोचनाएं भी इसमें तत्काल मुद्रित न हो सकीं। विलम्ब हो जानेके कारण ग्राहकोंकी उतावलीसे चित्र भी नहीं दिये जा सके। तथापि आशा है कि उक्त परिस्थितियोंको देखते हुए इस अङ्कको प्रस्तुत रूपमें पाकर भी पाठक सन्तुष्ट ही होंगे।

यह अङ्क पाठकोंकी सेवामें भेंट करते हुए उन महानुभावोंके लिए कृतज्ञता प्रकट करना परमावश्यक है जिनकी कृपा-सहयोग व सत्प्रयत्नोंसे ऐसी अवस्थामें भी यह अङ्क इतना शीघ्र पाठकों तक पहुँच सका। सर्वप्रथम बघाटमहीमहेन्द्र धर्ममार्तण्ड श्री १०५ मान् दुर्गासिंहजी बहादुर (सोलन महाराज) महामान्या श्री १०५ मती राजमाता सिरमौरीजी, श्रीमान् कुँवर शिवसिंहजी सेशनजज साहब और उनकी धर्मपरायणा ममत्वमयी श्री १०५ मती माताजीने बहिन जयमङ्गलाके सङ्कट कालमें अत्यन्त आत्मीयता दर्शाते हुए उसके प्राणोंकी रक्षाका महान् श्रेय प्राप्त किया तदर्थ आपको धन्यवाद देनेके लिए उपयुक्त शब्द सूझ नहीं पड़ते, अतः यही हार्दिक शुभ कामना है कि भगवान् इन महानुभावोंको दीर्घायुष्य एवं सदा सुखैश्वर्य सम्पन्न बनाये रखें। शिमलामें श्रीयुत आदरणीय रायजादा पं० मेलाराम जी वैद्य, श्रीयुत माननीय पं० शान्तिधरजी नेहरू इनकमटैक्स आफीसर साहब और श्री पं० मिहिरचन्द्रजी वैद्यराजने जो अपूर्व सहयोग दिया उसके लिए हम आपके चिरकृतज्ञ हैं। इनके अतिरिक्त अन्य जिन अनेकों इष्टमित्र सहयोगियोंने सहयोग दिया और पत्र भेजकर बहनकी स्वास्थ्य कामना की उन सब सज्जनोंके प्रति विनम्रभावसे कृतज्ञता प्रकट करते हुए—समयाभावसे सबको पृथक उत्तर न लिखा जानेके लिए क्षमा मांगकर—यह निवेदन करता हूँ कि भगवान्के परम अनुग्रह और आप लोगोंके शुभाशीर्वादसे शिमला हास्पिटलमें बहनका स्वास्थ्य अब क्रमशः सुधर रहा है।

प्रस्तुत अङ्कको स्वल्प समयमें छापकर पाठकों तक पहुँचानेका श्रेय श्रीयुत आदरणीय पं० कृष्णचन्द्रजी विद्यालंकार (सम्पादक—साप्ताहिक 'वीर-अर्जुन') और बन्धुवर श्री पं० बाबूरामजी त्यागी को है। श्री विद्यालंकारजीने बहुतसा साहित्य जुटाने और प्रूफ संशोधन कार्यमें पर्याप्त सहयोग दिया एवं श्री त्यागीजीने आत्मीयता पूर्वक कम्पोजिङ्ग और छपाईके कार्यको शीघ्रसे शीघ्र पूर्ण करवानेका प्रयत्न कर हमारे परिश्रम और व्ययको सफल किया, इसके लिए इन महानुभावोंको जितने भी धन्यवाद दिये जायें थोड़े हैं।

अन्तमें हम उन सब मान्य लेखकोंके भी अत्यन्त आभारी हैं—जिन्होंने अपनी गवेषणात्मक अमूल्य रचनाएं भेजकर इस अङ्कको सजाया। जिन सुप्रसिद्ध कलाकारों और मान्य लेखकोंकी मौलिक रचनाएं उपर्युक्त परिस्थिति—वशात् समयाभावसे इस अङ्कमें नहीं जा सकीं उन सबसे हम शिरसावनत क्षमा प्रार्थी हैं। भगवान्की कृपा और इसी प्रकार सहृदय विद्वानोंका सहयोग बना रहा तो आगामी वर्षका 'साहित्याङ्क' हम बहुत सुन्दर रोचक आकर्षक एवं सचित्र ठोस सामग्रीसे परिपूर्ण रूपमें भेंट कर सकेंगे।

विनीत—
भवानीशङ्कर त्रिवेदी (उपसम्पादक)

वैदिक साहित्यमें वायुयान-विज्ञान

[लेखक—चतुर्वेद भाष्यकार श्री पं० जयदेव जी शर्मा विद्यालंकार मीमांसातीर्थ]

वेद के ६ मन्त्रोंका उल्लेख 'श्रीस्वाध्याय' के वर्ष ५ म संख्या १ आश्विन अंकमें कर चुके हैं। अब वेद मन्त्रोंका क्रमसे उल्लेख करते हैं।

७—आयं गौः पृश्निरक्रमाद् असदन् न मातरं पुरः।
पितरं च प्रयन्त्स्वः॥ यजु० ३। ६॥

अर्थ—यह 'पृश्नि' गौ है जो माताकी ओर आता, उस पर गति करता और पिता रूप सूर्य या आकाशकी ओर भी जाता है।

अगला मन्त्र है जसमें इसी 'पृश्नि गौ' को 'महिष' नामसे कहा है।

८—अन्तश्चरति रोचनाऽस्य प्राणद् अपानती।
व्यख्यन्महिषो दिवम्॥ यजु ३। ७॥

वह महि (दिवं वि अख्यत्) द्यौ को विविध प्रकार बतलाता उसको प्रकाशित करता है। (अस्य अन्तः रोचना चरति) इसके भीतर दीप्ति विचरती है, वह क्रिया उत्पन्न करती है। वह उसको (प्रअनत्) आगे वा ऊंचे, दूर तक ले जाती है, वही (अप अनती) वही उसे नीचे, पीछे भी वापस लाती है।

वेद इस वस्तुको 'गौ' और 'महिष' दो नामोंसे पुकारता है, गौ कहिये या महिष एक ही बात है। गमन साधन होनेसे वह गौ है। विशाल या बड़े भारी आकाशमें गति करनेसे 'महिष' कहाता है। उसकी चालक शक्ति 'रोचना' है। यह रोचना विद्युत् शक्ति है। जिसके अगले मन्त्रमें 'वाक्' नामसे कहा है। निरुक्तकार यास्क आचार्यने विद्युत्को 'मध्यमिका वाक्' और 'पावीरवी' नामसे कहा है। वेद बतलाता है कि उस वाक् नाम विद्युत्का आकाशगामी यन्त्रमें ३० स्थानों पर प्रयोग करना चाहिये। वह उन ३० यन्त्रों द्वारा आकाशके प्रत्येक स्थानमें जानेमें समर्थ होता है। मन्त्र इस प्रकार है।

९—त्रिंशद् धाम विराजति वाक् पतङ्गाय धीयते।
प्रति वस्तो रह द्युभिः॥ यजु० ३। ८॥

अर्थ—वाक् विद्युत् पतंग नामक वायुयानको चलानेके लिए उसके तीस धाम, धारण करने वाले केन्द्रों पर स्थापित किया जाता है, उन (द्युभिः) दीप्ति युक्त स्थानोंसे वह विमान (प्रति वस्तोः) प्रत्येक स्थानमें रह सकता है। द्युभिः द्योतनैः। महीधरः।

'पतंग' शब्दके विमान वाचक होने पर हम पूर्व लेख में विचार कर आये हैं।

१०—स्वाहा यज्ञं मनसः स्वाहोरोरन्तरिक्षात् स्वाहाद्यावा पृथिवीभ्या ꣳ स्वाहा वाताद् आरभे स्वाहा। यजु० ४। ६॥

इस मन्त्रकी वाक्य योजना इस प्रकार है। (यज्ञं मनसः स्वाहा आरभे) यज्ञको मनसे प्राप्त स्वाहासे चलाऊं। (उरोः अन्तरिक्षात् स्वाहा यज्ञम् आरभे) विशाल अन्तरिक्ष भागसे भी उसी स्वाहा द्वारा यज्ञ का संचालन करूं। (स्वाहा द्यावापृथिवीभ्यां यज्ञम् आरभे) स्वाहा नाम चालक शक्तिसे द्यौ और पृथिवीसे यज्ञको चलाऊं। और (स्वाहा वाताद् यज्ञ आरभे) वायुसे स्वाहा नाम शक्तिसे यज्ञको चलाऊं।

इस मन्त्रमें (स्वाहा आरभे) 'स्वाहासे चलाऊं' यह वाक्य अटपटा सा जान पड़ता है। स्पष्ट है कि 'स्वाहा' कोई साधन है। जिस द्वारा 'यज्ञ' को चलाया जाना अभीष्ट है। पूर्व लिख आये हैं 'स्वाहा' स्व-आ-हा अर्थात् स्वयं गति उत्पन्न करने वाला यन्त्र या Automobile Force है। स्वाहा शब्दको समझाने के लिए भाष्यकार महीधर लिखते हैं—

स्वाहा शब्दस्य निपातत्वेन अनेकार्थत्वात् उचिता अर्थाः ब्राह्मणानुसारेण ग्राह्याः। अत्र स्वाहा शब्दो ऽभिगमनार्थः।

स्वाहा शब्द निपात होनेसे उसके अनेक अर्थ हैं। अतः ब्राह्मण ग्रन्थके अनुसार 'स्वाहा' शब्दके उचित अर्थ लेने चाहियें। यहां अभिगमन, प्राप्ति पहुँचना अर्थ है। स्वाहा शब्दमें तीन पद स्पष्ट हैं 'स्व-आ-हा' स्व=स्वयं, आ= अभिमुख, या चारों ओर हा=गति या हन्=ताड़न। स्वयं अपने आगेकी ओर जाने, प्रेरणा करने या ले चलने वाले, धकेलने वाले बल यन्त्र वा साधनको 'स्वाहा' कहना चाहिये। 'यज्ञ' वह यन्त्र है जिसके सब अंग सुसंगत हैं।

११—श्येनायत्वा सोममृते विष्णवे त्वा० ॥ यजु० अ० ५।१ ॥

अर्थ—उचित साधन, 'हवि' को व्यापक सर्वत्र जानेमें समर्थ 'विष्णु' सोमको धारण करने वाले 'श्येन' यन्त्रके निर्माणके लिये प्राप्त करें।' 'श्येन' क्या पदार्थ है? यास्क आचार्य कहते हैं—

श्येनः शंसनीय गच्छति। निरु० ४।६॥

जो प्रशंसनीय रीतिसे जानेमें समर्थ है वह वेद में श्येन नामसे कहा है। वह अपने भीतर सोम पदार्थको धारण करता है। वह 'विष्णु' अर्थात् व्यापक आकाशमें गमन करनेसे स्वयं विष्णु है, वा व्यापक विस्तृत आकाशमें जानेके लिए उसका उपयोग करना चाहिये। यह अभिप्राय वेद मन्त्रका प्रतीत होता है। 'सोम' शब्द यहां पारिभाषिक शब्द प्रेरणा देने वाले पदार्थका वाचक उसी प्रकार है जैसे अंग्रेजीमें 'फ्यूल' (Fuel) ईंधन, तेल या पेट्रोल के लिए प्रयुक्त होने लगा है।

अब 'सोम' के गुणों पर विचार करते हैं।

१२—सोम क्रय प्रसंगमें यजुर्मन्त्रका विनियोग है—

शुक्रं त्वा शुक्रेण क्रीणामि चन्द्रं चन्द्रेणामृतममृतेन। यजु० ४।२६॥

इस मन्त्रमें शुक्र, चन्द्र और अमृत ये तीन पद सोमके गुण बतलाने वाले विशेषण हैं। 'शुक्र' का अर्थ उवटाचार्यने किया है—शुक्रं अक्लिष्ट कर्माणम् शुक्रम्-इत्युदक नाम। निघण्टु १।१२॥ शुक्रं शोचते ज्वलति कर्मणः निरु० ८।११॥ ध्यान पूर्वक 'शुक्र' पदकी रचना देखिये 'शु—क्र' =शीघ्र कारी, आशु कारी, सुगमतासे काम सम्पादन करने वाला, दीप्तियुक्त ज्वलनशील पदार्थ शुक्र या 'सोम' है। वह गति देनेसे 'सोम' और ज्वलनशील, दीप्तियुक्त होने से 'शुक्र' कहाता है। वह यन्त्रकी शक्ति या गतिको निरन्तर बनाये रखने या मरने न देनेसे 'अमृत' है। वह सुख जनक होनेसे 'चन्द्र' है। इस प्रकार सोम वह पदार्थ है जो यन्त्रमें तीव्र गति उत्पन्न करनेमें समर्थ है--वह ज्वलनशील तेल भी हो सकता है, वह जल (अमृत) भी हो सकता है, वह पारा 'चन्द्र' भी हो सकता है, ऐसे तीनों प्रकारके पदार्थ एंजिन चलानेमें समर्थ हैं, वे सब 'शुक्र' सोम कहे गये हैं।

१३—यवोऽसि यवयास्मद् द्वेष्यो यवयारातीः। दिवे त्वाऽन्तरिक्षायत्वा पृथिव्यै त्वा। शुन्धन्तां लोकाः पितृवदना॥ यजु० ५।२६॥

अर्थ—हे यव! तू यव है, हमारे द्वेषी शत्रुओं को दूर कर। तुझे द्यौलोक, अन्तरिक्ष लोक और पृथिवी लोकमें जानेको तैयार करता हूँ। इस प्रकार देश व प्रजाके पालक रक्षक पुरुषों (पितृ) से अधिष्ठित लोक, देश शुद्ध, शत्रु रहित, निष्कण्टक हो जावें।

कर्मकाण्डमें इस मन्त्रसे 'उदुम्बर' वृक्षकी मनुष्यकी ऊंचाईकी एक शाखाको भूमिमें गाड़ कर पास जौ डालकर शाखा पर जल छिड़कते हैं।

यह कर्मकाण्ड प्रतिनिधिवादसे है। वस्तुतः गूलर की शाखा और जो जिस वस्तुके प्रतिनिधि हैं वेद मन्त्रका मुख्यार्थ वही पदार्थ है। 'उदुम्बर' अतिबलशाली पदार्थका प्रतिनिधि है, 'यव' शत्रुनाशक उपायों का प्रतिनिधि है, अर्थात् बलवती शत्रु सेना उदुम्बर की शाखा है, जिसके तीन रूप हो सकते हैं, एक भूमिगत दूसरी अन्तरिक्षगत तीसरी उससे भी ऊपर द्यौलोकमें; उसको नाश करनेके लिये यवके आकारका नाराकारी अस्त्र अपेक्षित हैं, आकार साम्यसे उन

स्फोटकारी अस्त्रोंका नाम भी 'यव' है। ये अस्त्र अन्तरिक्ष और उससे भी ऊपर द्यौलोक (दिव्य नभस्) तकके विमानचारी शत्रुओंको नाश करनेके लिए या दिव्यनभस् और अन्तरिक्ष मार्गसे उत्पतन करके दूरस्थ शत्रुओंका नाश करने वाले हों।

ऐसे ही अस्त्रोंका उपयोग जर्मनीने इंगलैण्ड का विध्वंस करनेके लिए प्रयोग किया है। वे सब अस्त्र 'यव'के आकारके थे, आकाशसे जो बाम्ब फेंके जाते हैं वे भी यवके आकारके होते हैं। इसी प्रकार टारपीडो भी इसी आकारके होते हैं। इस अस्त्रका नाम Vee 1. Vee 2. V. 3. आदि दिया है, इसके आकारको देखकर कोई सिगरेट या खम्भेका सा कहा जाता है। परन्तु ठीक आकार इसका 'यव' के-समान है।

इसी अध्याय के मन्त्र २३ और २५ में दुष्टों का सर्वनाश करने के लिए भूमि में मगन गोलों के प्रयोग या सुरंगों का प्रयोग भी लिखा है, जो यहां वैष्णवी 'वलगहत्' हैं। अर्थात् बलपूर्वक वेगसे गमन कर के शत्रुको मार करती हैं। वे हिंसा करनेसे 'कृत्या' कहाती हैं।

इस प्रसंगमें विमान प्रकरणसे भिन्न होनेसे उनका वर्णन यहां नहीं करते। केवल आकाश मार्ग से जाकर शत्रुनाश करनेसे 'यवास्त्रों' का वर्णन कर दिया है।

द्युतान मारुत—

अब हम 'द्युतान मारुत' का वर्णन करते हैं।

उद् दिवं स्तभान अन्तरिक्षं पृण। दृꣳहस्व पृथिव्यां। द्युतानस्त्वा मारुतो मिनोतु ॥ यजु० ॥

अर्थ—हे उदुम्बरी शाखा, तू चाहे आकाशको थाम ले, चाहे अन्तरिक्षको भर दे, पृथ्वीको जकड़ ले, अर्थात् उसमें भूगर्भी दुर्ग बनाकर अपनेको दृढ़ करले, तो भी द्युतान मारुत तुझे नाश करनेमें समर्थ है।

पूर्व हमने लिखा है कि प्रबल शत्रुसेना उदुम्बरी शाखा है। (उदुम्बर= उरु बल) वह उस आकाश अन्तरिक्ष और पृथिवी इन तीनों स्थानोंमें भी अपना अधिकार करले, तोभी द्युतान मारुत उनके आकाशचारी विमानों, भूमिस्थित यान्त्रिकबलों और दुर्गका नाश करनेमें समर्थ है।

'द्युतान मारुत' क्या पदार्थ है? यह एक विवेचनीय वैदिक अस्त्र है। भाष्यकार उव्वट और महीधर लिखते हैं—'द्युतानः दीप्यमानः मारुतो वायुः।' अर्थात् चमचमाता वायु। इसका कुछ स्पष्टीकरण निम्नलिखित ऋग्वेदके

(१) द्युतानं वो अतिथिं स्वर्णरं अग्निं होतारं मनुष्यः स्वध्वरम्। ऋ० ६।१५।४॥

'द्युतान' आप लोगोंके बीच व्यापक, 'स्वर्नर' आकाशमें गति देकर पदार्थों को ले चलने वाला अग्नि है। मनुष्य को अनेक पदार्थ देता और उत्तम रक्षाकारी साधन है।

(२) अध द्युतानः पित्रोः सचासाऽमनुत गुह्यं चारु पृश्नेः। मातुष्पदे परे अन्तिसद् गोर्वृष्णः शोचिषा प्रयतस्य जिह्वा॥ ऋ० ४।५।१०॥

द्यौ और पृथिवी दोनोंके बीचमें 'द्युतान' है जो पृश्नि अर्थात् वर्षने वाले मेघसे अन्तरिक्षमें विचरता माना जाता है। जब माता अर्थात् पृथिवी के अति समीप बरसते मेघकी 'गौ' विद्युत्की चमक रूप उस अधिक विस्तृत 'द्युतान' की जिह्वाके समान लपलपाती है।

(३) प्र प्रायमग्निर्भरतस्य शृण्वे वियत् सूर्यो न रोचते बृहद्भाः। अभि यः पूरुं पृतनासु तस्थौ द्युतानो दैव्यो अतिथिः शुशोच॥ ऋ० ७।८।४॥

मनुष्य जब इस 'द्युतान' को एक स्थानपर एकत्र कर लेता है, उसके अधीन होकर वह सूर्यके समान चमकता है। वह शत्रुओं पर भी संग्रामों में अच्छी तरह व्यापता है, वह दिव्य कान्ति युक्त होकर फैल कर चमका करता है।

इससे स्पष्ट होगया है कि 'द्युतान' विद्युत्का नाम है। इसको एकत्र करके सूर्यके समान तीव्र प्रकाशका बना सकते हैं। इसका प्रयोग शत्रुओंके

नाश और आत्मरक्षाके लिए कर सकते हैं। 'मारुत द्युतान' वह है जो मरुतों वायुओं व वायुओंके समान वेग से शत्रुपर आक्रमण करने वाले, वायुमार्गसे जाने वाले विद्युत् अस्त्र हैं। इनसे अन्तरिक्ष, पृथिवी और आकाशस्थ शत्रु सेनाका भी नाश किया जा सकता है। यह उदुम्बरीशाखा और मारुत द्युतानका रहस्य है।

१२—११ वें लेखांक में बतलाये 'यव' के वर्णन का तुल्य मन्त्र अ० ६। १ भी है। २ य मन्त्र में एक विशेष बात है—

अग्रेणीरसि। स्वावेशः। उन्नेतृणाम् एतस्य वित्तात् अधित्वा स्थास्यति। देवस्त्वा सविता मध्वानक्तु। सुपि-प्पलाभ्यस्त्वौषधीभ्यः। द्यामग्रेणास्पृक्षः। अन्तरिक्षं मध्येनाप्राः। पृथिवी मुपरेणादृᳫंहीं॥ यजु० ६। २॥

अर्थ—तू आगे ले चलने वाला, 'अग्रेणी' प्रमुख है। ऊपर ले चलने वाले यन्त्रों में से यह उत्तम बैठने योग्य है। विद्वान् इसको जाने। वही इस यन्त्र पर अध्यक्ष होकर बैठेगा। सविता देव मधु से आंजे। तुझे उत्तम फलवाली औषधियां चलावें। अग्रभाग तू द्यौको छूता है, मध्य भागसे अन्तरिक्षको प्राप्त होता है। और 'ऊपर' अर्थात् नीचेके भागसे पृथ्वी पर दृढ़ होकर ठहरता है।

इस मन्त्रमें स्पष्ट ऐसे यन्त्रका वर्णन है जो द्यौ, अन्तरिक्ष, और पृथिवी तीनों स्थानोंपर जानेके तीन प्रकारके साधन उस यन्त्रमें उसके अग्रभाग, मध्यभाग और ऊपर=उपल या अन्तभाग पीछेके या अधोभागमें लगे हैं। जो पुरुष उस यन्त्रको ऊपर ले जाते हैं उनको वेदने उन्नेतृ=उन्नेता कहा है, हिन्दीमें उनको 'उड़ाका' या Pilot पाईलट् या हवाबाज कहते हैं। उनके लिये उस यन्त्रमें बैठने सोने रहने आदि का उत्तम प्रबन्ध है। उसमें वे सुखपूर्वक रह सकते हैं। वह यन्त्र अपने उन्नेता नामक चालकोंके लिए उत्तम घरके समान है। उसमें उनको सब प्रकारकी खाने पीने, बैठने उठने सोने आदि की सुविधा है। उसका कैप्टिन, अध्यक्ष, अधिष्ठाता वही बनाया जाता है जो यन्त्रकी सब बातोंको भली प्रकार जानता हो। वेद उसका नाम 'अधिष्ठाता' बतलाता है। जो व्यक्ति उस महायन्त्रका चालक (Driver) है वह 'सविता' है। वह मधुसे उसे आंजता है। ऐसे यन्त्रको उत्तम फलवाली, रोगनाशक, पुष्टिकारक खाद्यपदार्थोंसे सम्पन्न करता है। 'मधु' वह द्रव्य है जिसके प्रयोगसे यन्त्रने आकाश में चलना है। सुपिप्पल औषधि वह पदार्थ है जिससे चालक पुरुषोंको भोजन प्राप्त होना है। यन्त्र और चालक दोनों के उपयोग (Consumption) के लिए पर्याप्त सामग्री होना आवश्यक है। विमानमें कितनी मात्रा (Feul) तेल, अलकोहल आदि की है इस बातका विधान वेदके अगले मन्त्रसे बताया जावेगा।

साहित्यसेवी पृथ्वी-पुत्र बनें

[लेखक — श्री डा० वासुदेव शरण जी अग्रवाल एम. ए. पी. एच. डी.]

हिन्दीके साहित्य-सेवियोंको पृथिवी-पुत्र बनना चाहिये। वे सच्चे हृदयसे यह अनुभव कर सकें—

'माता भूमिः पुत्रोऽहं पृथिव्याः' (अथर्ववेद १२।१।१२)

यह भूमि माता है, मैं पृथ्वीका पुत्र हूँ। लेखकों में यह ज्ञान न होगा तो उनके साहित्यकी जड़ें सुदृढ नहीं होंगी, आकाशवेल की भांति वे वायुमें तैरती रहेंगी। विदेशी विचारोंको मस्तिष्कमें भरकर उन्हें अधपके ही बाहर उंडेल देनेसे किसी साहित्यका लेखक लोकमें चिर-जीवन नहीं पा सकता। हिन्दी साहित्यकारोंको अपनी खुराक भारतकी सांस्कृतिक

और प्राकृतिक भूमिसे प्राप्त करनी चाहिये। लेखक जिस प्रकारके जीवन रसको चूसकर बढ़ता है, उसी प्रकारकी हरियाली उसके साहित्यमें भी देखनेको मिलती है। आज लोक और लेखकके बीचमें गहरी खाई बन गई है। उसको किस तरह पाटना चाहिये इस पर सब साहित्यकारोंको पृथक् पृथक् और संघ में बैठकर बिचार करना आवश्यक है।

प्राकृतिक भूमि।

हिन्दी लेखकको सबसे पहले भारत भूमिके भौतिक रूपकी शरणमें जाना चाहिये। राष्ट्रका भौतिक रूप आंखके सामने है। लाखों वर्षोंसे इसकी सत्ता एक सी चली आई है। राष्ट्रकी भूमिके साथ साक्षात् परिचय बढ़ाना आवश्यक है। एक-एक प्रदेश को लेकर यहां की पृथिवीके भौतिक रूपका सांगोपांग अध्ययन हिन्दी लेखकोंमें बढ़ाना चाहिये। यह देश बहुत विशाल है। यहां देखने और प्रशंसा करनेके लिए अतुल सामग्री है, उसका ज्ञान करते हुए हमें एक शताब्दी लग जायगी। पुराणोंके महामना लेखकों ने भारतके एक-एक सरोवर, कुंड, नदी और झरनेसे साक्षात् परिचय प्राप्त किया, उसका नाम करण किया और उसको देवत्व प्रदान कर उसकी प्रशंसामें माहात्म्य बनाया। हिमवंत और विंध्य जैसे पर्वतोंके रम्यप्रदेश हमारे अर्वाचीन लेखकोंके सुसंस्कृत महात्म्य गानकी प्रतीक्षा कर रहें है। देश के पर्वत, उनकी ऊंची चोटियाँ, सब हिंदी के लेखकों की लेखनी का वरदान पानेकी बाट देख रही हैं। देश की नदियाँ, वृक्ष और बनस्पति, औषधी और पुष्प, फल और मूल, तृण और लताएं, सब पृथिवीके पुत्र हैं। लेखक उनका सहोदर है। लेखकको इस विशाल जगत्में प्रवेश करके अपने परिचयका क्षेत्र बढ़ाना चाहिये। चरक और सुश्रुत ने औषधियोंके नामकरणका जो मनोरम अध्याय शुरू किया था उसका सच्चा उत्तराधिकार प्राप्त करनेके लिये हिन्दीके लेखक को बहुत परिश्रम करनेकी आवश्यकता है। और सबसे अधिक आवश्यक है एक नया दृष्टिकोण, जिसके बिना साहित्यमें नवीन प्रेरणाकी गंगाका अवतरण नहीं हुआ करता। हिन्दीके लेखकोंको वनोंमें जाकर देशके बनचरोंके साथ सम्बन्ध बढ़ाना है। वन्य पशु सभी उसके सगोत्री हैं, वे भी तो पृथिवी पुत्र हैं। अथर्ववेदके पृथिवीसूक्तके ऋषिकी दृष्टिमें जो कुछ पृथिवीसे जन्मा है सभी पूजाके भावसे देखने योग्य है —

'हे पृथिवी, जो तेरे वृक्ष, वनस्पति' शेर, बाघ आदि हिंसकजंतु, यहां तक कि सांप और बिच्छू भी हैं वे भी हमारे लिये कल्याण करने वाले हों।'

पश्चिमी जगत्में पृथिविके साथ यह सौहार्द का भाव कितना आगे बढ़ा हुआ है। भूमध्यसागर या प्रशान्त महासागरकी तलहटीमें पड़े हुए सीप और घोंघों तककी सुध-बुध वहांके निवासी पूछते हैं। भारतीय तितलियों पर पुस्तक चाहें तो अंग्रेजीमें मिल जायगी। हमारे जंगलोंमें कुलांचे मारने वाले हिरनों और चीतलोंके सींगों की क्या सुन्दरता है हमारे देशके असल मुर्गोंकी बढ़िया नस्लने संसारमें कहां २ जाकर कुश्ती मारी है इसका वर्णन भी अंग्रेजोंमें ही मिलेगा। ये सब विषय एक जीवित जातिके लेखकोंको अपनी ओर खींचते हैं। क्या हिन्दी साहित्यके कलाकार इनसे उदासीन रह कर भी कुशल मना सकते हैं? आज नहीं तो कल हमें अवश्य ही इस सामग्री को अपने उदार अंकमें अपनाना पड़ेगा। यह कार्य जीवनकी उमंगके साथ होना चाहिये। यही साहित्य और जीवनका सम्बन्ध है।

देशके गाय और बैल, भेड़ और बकरी, घोड़े और हाथीकी नस्लों का ज्ञान कितने लेखकोंको होगा! पालकाप्यमुनिका हस्त्यायुर्वेद अथवा शालिहोत्रका अश्व-शास्त्र आज भी उपलब्ध है पर उनका उत्तराधिकार चाहने वाले मनुष्य नहीं। मल्लिनाथ ने माघकी टीकामें 'हय लीलावती' नामक ग्रंथके उद्धरण दिये हैं, जिनसे ज्ञात होता है कि घोड़ों की

चाल और कुदानके सम्बन्धमें भी कितना बारीक विचार यहां किया गया था, पश्चिमी एशियाके अलअमर्ना गांवमें ईसासे १४०० वर्ष पूर्व की एक पुस्तक मिली है, जिसमें अश्वविद्याका पूरा वर्णन है। उसमें संस्कृतके अनेक शब्द जैसे एकावर्तन, द्व्यावर्तन, त्र्यावर्तन आदि घोड़ों की चालोंके विषय में पाये गये हैं। उस साहित्यके दायमें भाग मांगने वाले भारतवासियोंकी आज कमी दिखलाई पड़ती है। हमने अपने चारों ओर बसने वाले मनुष्योंका भी तो अध्ययन नहीं प्रारम्भ किया। देशी नृत्य, लोक-गीत, लोकका संगीत, सबका उद्धार साहित्य सेवाका अंग है। एक देवेन्द्र सत्यार्थी क्या, सैंकड़ों सत्यार्थी गांव-गांव घूमें तब कहीं इस सामग्रीको समेट पायेंगे। इस देशमें मानों अपरिमित साहित्य सामग्रीकी प्रतिक्षण वृष्टि हो रही है, उसको एकत्र करने वाले पात्रोंकी कमी है। लोककी रहन-सहन, वेष, आभूषण, भोजन और वस्त्र, सबका अध्ययन करना है। जनपदोंकी भाषाएं तो साहित्य की साक्षात् कामधेनुएं हैं। उनके शब्दोंसे हमारा निरुक्त शास्त्र भरा पुरा बनेगा। हिन्दी शब्द निरुक्त बिना जनपदोंकी बोलियोंका सहारा लिए बन ही नहीं सकता। जनपदोंकी बोलियां कहावतों और मुहावरों की खान हैं। हम चुस्त राष्ट्रभाषा बनानेके लिए तरस रहे हैं, पर उसकी जो खानें हैं उनको खोद कर सामग्री प्राप्त करनेकी ओर हमने अभी तक ध्यान नहीं दिया। हिन्दी भाषाकी तीन हजार धातुओंको यदि ठीक तरह ढूंढा जाय, तो उनकी सेवासे हमें भाषाके लिए क्या शब्द नहीं मिल सकते ? पर हमारा धातु पाठ कहां है, वह हिन्दीके पाणिनिकी बाट देख रहा है। खेल और क्रीड़ायें क्या राष्ट्रीय जीवन के अंग नहीं हैं ? मेले, पर्व और उत्सव सभी हमारी पैनी दृष्टि के अन्तर्गत आ जाने चाहियें। इस आंख को लेकर जब हम अपने लोक के आकाश में ऊंचे उठेंगे सैकड़ों हजारों चीजों को देखने की योग्यता हमारी आंख में स्वयं आ जायगी।

संस्कृत—साहित्यकी शरण

हमारा विशाल संस्कृत-साहित्य हमारे आदर्शों और विचारों का ब्राह्म सर है। वहां से लोक सरस्वती जन्म पाकर सबको प्रकाश और बल देगी। पुरातन संस्थाओं और सिद्धान्तोंका अध्ययन करने के बाद हम राष्ट्रगठन का सच्चा रहस्य जान पायेंगे। पौर जानपद सभाओंसे साहित्य और समाजकी परिषदों से, श्रेणी, निगम और पूग की समितियों से परिचय प्राप्त करने के लिए हमें अपनी संस्कृति की भूमि की शरण में जाना चाहिये, जिसका द्वार संस्कृत-साहित्य में खुला हुआ है। इस देश में आलोचनाके सिद्धान्तोंके बारेमें क्या सोचा जा चुका है, रस, रीति, ध्वनि क्या है, उनका दार्शनिक और साहित्यिक स्वरूप क्या है, और मानव जीवन के सनातन मन भावों के साथ उनका क्या सम्बन्ध है, इसको बिना पढ़े जो आलोचक केवल मैथ्यू आर्नल्ड या वोर्सफील्ड के विचारों को घोटकर हिन्दी साहित्य की क्रूर समीक्षा करने लग जाते हैं उनका लिखा हुआ साहित्य और चाहे जो हो, लोक की वस्तु नहीं बन सकती; राष्ट्रिय बुद्धि के कीटाणु उसमें नहीं पनप सकते। शब्दोंके निर्वाचन और व्याकरण या शिक्षा के किन सिद्धान्तों का इस देश में पहले विचार हो चुका है उसकी बारहखड़ीसे जो अपरिचित रह जावें, वे लेखक हिन्दी के भाषा शास्त्र का विवेचन करते हुए कोरे पश्चिमी ज्ञान की लाठीके सहारे ही चल पावेंगे। इस समय हिन्दीको नई वर्णमालाका स्वरूप स्थिर करनेके लिए, अर्ध एकार और अर्ध ओकार पर खासी बहस देखने में आती है। पर क्या हमें मालूम है कि ईसा से कई सौ वर्ष पहले सामवेद की सात्यमुग्रि और राणायनीय शाखाओं के आचार्यों ने अपनी परिषदों में इन दोनों उच्चारणों का ठीक निर्णय कर दिया था ? इस प्रकारके कितने विमर्श भारतके अतीत साहित्य से हमें प्राप्त करने हैं। यूनानके साहित्य और संस्कृति का उत्तराधिकार यूरुप ने

प्राप्त किया,. अपने आपको उस विद्या दाय में सम्मिलित करके यूरुप के विद्वान् अपने को धन्य मानते हैं। तो क्या भारतवासी अपने इस ब्रह्मदायसे पराङ्मुख रह कर अपने राष्ट्रके भावी ज्ञान कोषका स्वास्थ्य निर्माण कर सकेंगे? कदापि नहीं। हमको तो इस विराट् साहित्यके रोम-रोममें भिद कर हिन्दी भाषाके द्वारा उसको नए रूपोंमें देखना पड़ेगा। उसके साथ हमारा सम्बन्ध आजका नहीं है। वह साहित्य हमारे पूर्वजोंके भी गुरुओंका है। अपने राष्ट्रीय नवाभ्युत्थानके समय हम उस मूल्यवान् साहित्यको श्रद्धापूर्वक प्रणाम करते हैं। हिन्दी लेखक जब तक ऋषि-ऋण से उऋण नहीं होंगे, वे लोक-साहित्यकी सृष्टिमें पिछड़े रहेंगे। कल्पना कीजिए कि व्यास की शत-साहस्री-संहिताको, जिसे पूर्व लोगोंने श्रद्धाके भावसे पंचम-वेद की पदवी दी थी, छोड़ कर हम कितने दरिद्र रह जाते हैं! उस 'जय' नामक इतिहासको, अथवा आदि-कविके शब्द ब्रह्मके नवावतार 'रामायण' को साथ लेकर आगे बढ़नेमें हमारा विद्यादाय कितना समृद्ध बन जाता है।

भारतके साहित्यकारोंको, विशेषतः हिन्दीके साहित्य-मनीषियोंको चाहिए कि इस नवीन दृष्टि-कोणको अपना कर साहित्यके उज्ज्वल भविष्यका साक्षात् दर्शन करें। दर्शन ही ऋषित्व है। ऋषियोंकी साधनाके बिना राष्ट्र या उसके साहित्यका जन्म नहीं होता।

काव्य-कला

[लेखक—श्री पं० बलजिन्नाथ जी शास्त्री बी० ए०]

काव्य कला किसे कहते हैं। कलाका लक्षण और प्रयोजन क्या है। कलामें कौन-कौन-सी विभूतियां होती हैं। इस प्रकारके विषयों पर आजकल अनेक पुस्तकें हिन्दीमें छप गई हैं। 'कला' कला ही के लिए होती है (Art for the arts' sake) की गूंज आज कल चारों ओर फैल रही है। पश्चिम के कलाकारों और कला तत्त्वज्ञों का प्रभाव आधुनिक भारतीय लेखकों पर बहुत मात्रामें पड़ रहा है। क्योंकि आधुनिक भारतीय लेखक प्रायः सभी अंग्रेजीके विद्वान् हुआ करते हैं। उन्हें भारतीय तथा पाश्चात्य दोनों विचारधाराओं का परिचय पर्याप्त होता ही है। अतः आधुनिक हिन्दीके विद्यार्थी इन महानुभावोंके ग्रन्थोंसे कलाके विषयमें बहुत कुछ सीख सकते हैं। परन्तु एक बात अवश्य यहाँ बतलाने योग्य है। वह यह है कि आधुनिक भारतीय लेखकोंमेंसे किसीको भी लें, प्रायः ऐसा देखनेमें आएगा कि पाश्चात्य विचारधाराका तो उसे पर्याप्त परिचय है परन्तु भारतीय आर्य विचारधाराका परिचय बहुत ही थोड़ा होता है। भारतीय कलातत्त्वज्ञों के ग्रन्थोंको आजकल बहुत थोड़े लोग पढ़ते हैं; जो भी पढ़ते हैं उनमेंसे भी अधिकांश तो पुस्तकोंके अंग्रेजी अनुवाद और उपोद्घातमात्र को पढ़कर सन्तोष करते हैं। यह बात अवश्य बुद्धिमें रखनी चाहिए कि जो रहस्य मूल पुस्तकको पढ़नेसे प्रकट होता है उसकी पूरी छाया भी अनुवादमें नहीं मिलती। मेरी समझमें नहीं आता कि अभिनवगुप्त जैसे कलातत्त्वज्ञोंके शब्दोंका किस भाषामें पूरा पूरा अनुवाद हो सकता है। अतः इस लेखमें आपको कलाके विषयमें भारतीय विचारों का थोड़ा-सा परिचय दिया जाता है।

कलासे हमारा अभिप्राय यहां काव्य कलासे है। 'कला' शब्दका प्रयोग भी यहाँ अंग्रेजी के (Art) शब्दका अनुकरण है। वस्तुतः कला शब्द प्रत्येक प्रकार की कला का नाम है। भारत में प्रसिद्ध ६४ प्रकार की कलाएं मानी जाती थीं। काव्य भी एक कला है। प्राचीन भारतीय आचार्यों ने इसको 'काव्य' नाम ही दिया। परन्तु इस समय काव्य शब्दका अनुवाद अंग्रेजीके Poetry' पोएट्री शब्दमें करते हैं। जो वस्तुतः ठीक नहीं। Poetry तो केवल पद्य काव्यका नाम है। काव्यशब्दका समानार्थक शब्द अंग्रेजीमें है ही नहीं। इसी कारण उन्होंने Art शब्द का प्रयोग किया जिसका कि हमने काव्यशब्दके होते हुए भी प्रयोग किया। अस्तु यह तो नाम मात्र का विवाद है।

कला अथवा काव्यका प्रयोजन क्या है? आप को उत्तर मिलेगा कि कला का प्रयोजन कला ही है। परन्तु हम आप को बतलाना चाहते हैं कि यह कोई उत्तर नहीं। जिस कलाका सम्बन्ध केवल कला ही से है कलाकारसे कोई नहीं, जिसका फल अचेतन कला ही को मिलता है चेतन कलाकार तथा कला के चेतन उपासकों को नहीं, उस कलामें कोई प्रवृत्त ही क्यों हो? प्रयोजनके बिना तो उन्मत्तकी भी प्रवृत्ति नहीं होती। अतः इस प्रश्नका उत्तर कुछ और है। आचार्य मम्मट कहते हैं "सद्यः पर निर्वृतये" और इसके व्याख्यानमें बतलाते हैं कि काव्यके बनाने, पढने, सुनने और देखने (क्योंकि दृश्यकाव्य अर्थात् नाटक देखा जाता है) का सबसे बड़ा प्रयोजन है आनन्द। काव्यों मेंसे आदि काव्य हम वाल्मीकि की रामायणको मानते हैं। उसका भी मुख्य प्रयोजन आनन्द ही है। प्रेम मोहित क्रौंच पक्षियोंकी जोड़ीमें से एक को शिकारीने मारा, यह देखकर वाल्मीकिको अत्यन्त दुखः हुआ। उस दुःख का उद्वेग उसको तब दूर हुआ जब उसने जी खोल कर रामायण में करुण रस का गान किया। तब उसको शान्ति मिली। यह शान्ति भी तो आनन्द ही का नामान्तर है। आनन्द ही काव्यका मूल है और आनन्द ही इसका जीवन है, अब भी कोई काव्य बनाता है तो आनन्दही के लिए, कोई कलाको पढता है तो आनन्द हीके लिए। इस कारण "कला आनन्दके लिए होती है" यही कहना ठीक है "कला कलाके लिए होती है" यह कहना तो केवल अन्धपरम्पराका अनुसरण करना है।

जब आप कलाकी समालोचना करते हैं तो आप आजकल प्रायः इस विचारको मनमें रखते हैं कि कला वास्तविकता से कितना सम्बन्ध रखती है। शैक्सपीयरकी इसी कारण आप प्रशंसा अधिक करते हैं कि उसकी कला उसके समयके इंग्लैण्ड का पूरा अनुकरण करती है। उसकी कला की घटनाएं तो सर्वथा वास्तविक प्रतीत होती हैं। मुं० प्रेमचन्द जी के उपन्यासोंमें भी प्रधान गुण यही है कि वास्तविक प्रतीत होते हैं। मनुष्य यह भूल जाता है कि यह केवल कल्पना मात्र ही है। अतः आधुनिक विचार अधिकांशमें इसी ओर जोर पकड रहा है कि उत्तम कला वही है जो संसारका पूरा पूरा अनुकरण करे। परन्तु यदि यही कला का मुख्य लक्षण मान लिया जाय तो श्रीहर्ष जैसे महाकविके लिए कहीं स्थान ही नहीं रहता। ऐसी अवस्थामें तो कालिदास को भी किसी गुफामें जाकर छिपना पड़ेगा। परन्तु ऐसा नहीं होता, जो कोई कालिदासको पढता है मुग्ध हो जाता है, कालिदासकी कलाके वर्णन और घटनाएं सत्य हैं? अथवा असत्य हैं? इस बातको तो मनुष्य भूल ही जाता है। कालिदास हमें आनन्दके उस संसारमें ले चलता है जहां आनन्द ही आनन्द है, जहां दूसरा पदार्थ कोई है ही नहीं। उस आनन्द संसारमें तो वास्तविकता भी कोई वस्तु नहीं और अवास्तविकता भी कोई वस्तु नहीं। क्योंकि वह केवल आनन्दका ही संसार है। यही कारण है कि मम्मट जैसे तत्त्वज्ञोंने कहा कि कविकी सृष्टि प्रजापतिकी सृष्टिसे अधिक विचित्र है। कवि प्रजापतिसे कहीं बढ़ चढ़ कर है। उसकी सृष्टि केवल आनन्द मय सृष्टि है।

यहाँ कई लोग शंका करते हैं कि यद्यपि कविने सृष्टि की, परन्तु उसकी काल्पनिक सृष्टिका आधार तो कोई वास्तविक संसार ही है। वास्तविक संसारके बिना वह किसकी कल्पना करे। कल्पना करते समय भी वह वास्तविक संसार ही का आश्रय लेता है। हम इस विषयमें कहते हैं कि जिस संसारको आप वास्तविक मानते हैं यह भी तो वस्तुतः काल्पनिक है। यह उस कवि की कल्पना है उस कलाकारकी कला है जिसको भगवद्गीता ने—

"कविं पुराणमनुशासितारम्" कहा है। उस 'कवि, ने भी अद्वैतस्वरूप अपने आप ही के आश्रय पर इस अनेक प्रपंचस्वरूप विचित्र जगत्की कल्पना की है। ठीक ऐसा ही काम कालिदास आदि कवियों ने किया। अतः वास्तविकता और अवास्तविकता काव्यकी कसौटी नहीं। काव्यकी कसौटी है आनन्द। 'परम कवि'की मूल सृष्टि कल्पनाका सार भी आनन्द ही है। वास्तविकतामें भी तभी चमत्कार रह सकता है जब उसका सार आनन्द हो और अवास्तविक कल्पना भी तभी सुन्दर बन सकती है जब आनन्द ही से ओत प्रोत हो।

इसी प्रकारसे कवि की स्पष्टता, गम्भीरता; कोमलता, कठोरता; आदिका विचार करते समय भी काव्यके आत्मभूत आनन्दको कभी भूलना न चाहिए। इसी आनन्द का नाम रस है। उपनिषद् भी कहते हैं—"रसो वै सः, रसं ह्येवायं लब्ध्वानन्दी भवति ॥"

चरित-ग्रन्थ

[लेखक—श्री प्रो० भगवद्दत्त जी बी० ए० रिसर्चस्कालर]

अनेक वर्तमान लोगों की धारणा है कि भारत का इतिहास पूर्णतया कभी नहीं लिखा गया। यह बात भ्रम मात्र है। तिब्बत के ग्रन्थकार अनेक भारतीय इतिहास लेखकों का नाम लिखते हैं। इनके अतिरिक्त प्रत्येक पराक्रमी राजा अपना चरित या इतिहास लिखवाया करता था। शोकसे लिखना पड़ता है कि वैसे शतशः ग्रन्थ अभी तक अनुपलब्ध हैं। ऐसे अनुपलब्ध और कुछ लब्ध ग्रन्थोंका वर्णन यहां किया जाता है।

चरित-ग्रन्थोंकी प्राचीनताः—चरित-ग्रन्थ बहुत पुरातनकालसे बनते चले आ रहे हैं। महाभारत पर्व में भीष्म युधिष्ठिरसे कहते हैं:—

पुराणमितिहासश्च तथाख्यानानि यानि च।
महात्मनां च चरितं श्रोतव्यं नित्यमेव च ॥

अर्थात्—पुराण, इतिहास आख्यान, और महात्माओंके चरित राजाको सुनने चाहिएं।

चरितका अर्थ:—आचार्य कौटिल्यने अर्थशास्त्रके पांचवें अध्यायमें 'इतिवृत्त' और 'चरित' को समानार्थक बताया है। शाश्वतकोष श्लोक ३६६ में 'इतिवृत्त' का पर्यायवाची 'अवदान' शब्द भी माना है।

आगे उपलब्ध और अनुपलब्ध चरितग्रन्थोंका उल्लेख किया जाता है:—

१—पुरुरवा-चरितः—मत्स्यपुराण २४-२८ में लिखा है:—

सा पुरुरवसः प्रीत्या गायन्ती चरितं महत्।
लक्ष्मीस्वयंवरं नाम भरतेन प्रवर्तितम् ॥

अर्थात् भरत रचित 'लक्ष्मीस्वयंवर' नामक पुरुरवा चरितको वह गाती थी।

प्रह्लाद चरितः—यह चरित महाभारतमें स्मरण किया गया है।

३—ययातिचरितः—इसीको नहुष-चरित भी कहा है। देखिए 'मत्स्यपुराण' ४२-२६॥

४—चन्द्रचूड़-चरितः—चन्द्रगुप्त चरित—चन्द्रगुप्त मौर्यके कालमें उसका चरित उसके किसी

अन्तरंग कवि द्वारा लिखा गया था। वंगदेशके सेन राज्यके काल में होने वाला कवि उमापति इस बातका संकेत करता है जैसेः—

निष्पन्ने सति चन्द्रचूड़चरिते तत्तन्नृपप्रक्रिया—
जातैः सद्धर्मरातिराजकशिरोरत्नावलीनां त्रयम् ।
तत्तस्वर्णशतानि विंशतिशती रूप्यस्य लक्षत्रयम् ।
ग्रामाणां शतमंतरङ्गकवये चाणक्यचन्द्रो ददौ ॥

इससे विदित होता है कि चाणक्यके चन्द्र अर्थात् चन्द्रगुप्त मौर्यने 'चन्द्रगुप्त-चरित' की पूर्ति पर अपने अन्तरंग कविको बहुत दान दिया।

५—बुद्ध चरितः—सुप्रसिद्ध बौद्ध कवि अश्वघोषका 'बुद्ध-चरित' अब भी प्रसिद्ध, उपलब्ध और मुद्रित है।

६—शूद्रक-चरितः—'रामिल' और 'सोमिल' का शूद्रक-चरित अनेक ग्रन्थोंमें वर्णित है। शूद्रक एक प्रसिद्ध सम्राट था, उसका इतिवृत्त इतिहास निर्माणमें बड़ी सहायता दे सकता है।

७—समरार्क-चरितः—इसकी खोज होनी चाहिए। जैनाचार्य हरिभद्र सूरिने समरार्क चरित अथवा 'समरादित्य चरित' रचा। इसमें किसी समरादित्यका चरित है। इस ग्रन्थके विषयमें जैन ग्रन्थकार धनपाल अपनी तिलकमञ्जरीमें लिखता हैः—

निरोद्धुं पार्यते केन समरादित्यजन्मनः ।
प्रशमस्य वशीभूतं समरादित्यजन्मनः ॥

इस पुस्तककी अनेक हस्तलिखित प्रतियां अब भी प्राप्त हो सकती हैं। देखिये जैन पुस्तक प्रशस्ति-संग्रह।

८—हर्षचरितः—गद्य कवि भट्ट बाणका यह ग्रन्थ सुविदित ही है।

६—जगदेकवीर-चरितः—सन् १६३८ में त्रिवेन्द्रम् से 'सूक्तिरत्नहार' नामका एक सूक्ति-ग्रन्थ मुद्रित हुआ था। उसमें 'जगदेकवीर-चरित' से दो श्लोक उद्धृत किये गये हैं। यह चरित विजयी महाराज 'कोंगुणी वर्मा' पर लिखा गया था, उसकी मृत्यु सन् ६७५ ईस्वीमें हुई।

१०—विक्रमाङ्क देव-चरितः—यह चरित विल्हण कविकी रचना है। कल्याणके महाराज त्रिभुवन मल्ल विक्रमादित्यका ऐश्वर्य इसमें वर्णित है।

११—नवसाहसाङ्क-चरितः—पद्मगुप्त अपर नाम परिमल कालिदासने इस चरित ग्रन्थकी रचना की थी। इसमें महाराज सिन्धुराजके विवाहका वर्णन है।

१२—प्रभावक-चरितः—जैनाचार्य प्रभाचन्द्रने संवत् १३३४ में इस ग्रन्थकी रचना की थी। इसमें प्रभावशाली जैन महापुरुषोंका वर्णन किया गया है। अनेक बहुमूल्य ऐतिहासिक घटनाएं इस चरितमें उल्लिखित हैं।

१३—पृथ्वीराज चरितः—यह ग्रन्थ पृथ्वीराजके समकालिक जयानक कविका लिखा हुआ है। इसमें अन्तिम हिन्दू सम्राट पृथ्वीराज सम्बन्धी अनेक उपयोगी घटनायें वर्णित हैं। यह ग्रन्थ पृथ्वीराज-रासोसे अधिक प्रामाणिक और ऐतिहासिक है।

इनके अतिरिक्त तीन और ग्रन्थ हैं। जो इतिहास निर्माणमें बहुत सहायक हो सकते हैं। वे निम्नलिखित हैं:—

१—गौड़विजय-काव्यः—शारदा-तनय "भाव प्रकाशन" में लिखता है:—

'एवं प्रकल्पयेत् काव्यं तद् गौड़विजयो यथा'

वाक्पतिराजके प्राकृत 'गौड़-वध' के समान यह कोई महान् काव्य होगा। यह अभी तक अप्राप्त है।

२—महुमद विजयः—वाक्पतिराज 'गौड़ वध' में इसका उल्लेख करता है 'ध्वन्यालोक' में आनन्द वर्धनाचार्य किसी 'मधुमथन-विजय' का स्मरण करता है, सम्भव है यह वही काव्य हो। 'ध्वन्यालोक' की लोचन टीका में अभिनवगुप्ताचार्यने इसके कई श्लोक उद्धृत किये हैं।

३—गौड़ वधः—वाक्पतिका यह काव्य मुद्रित हो चुका है। प्रतीत होता है कि यह काव्य अपूर्ण है। इसकी और हस्तलिखित प्रतियोंकी खोज करनी चाहिये।

एक आलोचनात्मक लेख—

'साकेत' में परमयशस्वी महाराज दशरथ

[लेखक—साहित्यरत्न श्री पं० गोवर्द्धनदास जी महता, सं० सम्पादक 'विश्वमित्र']

सूर्यवंशके उन परम-सौभाग्यशाली महाराज दशरथजीकी गुणगाथाओंका वर्णन करना हमारी सीमित शक्तिसे परे है, जिनके यहां कि स्वयं परमात्माने पुत्र-रूप में अवतार धारण करके राक्षसोंका संहार किया और इस धराधाम में ऐसे आदर्श राम-राज्यकी स्थापना की, जिसमें कि:—

दो.-बरनाश्रम निज-निज धरम, निरत वेद पथ लोग।
चलहिं सदा पावहि सुखहिं, नहिं भयशोक न रोग॥

चौ०-दैहिक दैविक भौतिक तापा।
रामराज नहिं काहुहि व्यापा॥
सब नर करहिं परस्पर प्रीती।
चलहिं स्वधर्म निरत श्रुतिनीति॥
चारिउ चरन धरम जग मांही।
पूरि रहा सपनहु अघ नाहीं॥
राम—भक्ति—रत नर अरु नारी।
सकल परम गतिके अधिकारी॥
अल्प मृत्यु नहिं कवनिउ पीरा।
सब सुन्दर सब निरुज शरीरा॥
नहिं दरिद्र कोउ दुखी न दीना।
नहिं कोउ अबुध न लच्छन हीना॥
सब निरदंभ धरमरत पुनी।
नर अरु नारी चतुर सब गुनी॥
सब गुनज्ञ पण्डित सब ज्ञानी।
सब कृतज्ञ नहिं कपट सयानी॥

[राम-चरित मानस उत्तर-काण्ड]

दशरथजीके चरित्रकी महानताका कारण यह है कि उन्होंने सत्यकी रक्षाके लिये अपने प्राण प्रिय पुत्रको बनवास दे दिया और स्नेहकी रक्षाके लिये अपने प्राण न्योछावर कर दिये। श्रीरामका वचन भरतजीके प्रति:—

चौ०—राखेउ राउ सत्य मोहि त्यागी।
तनु परिहरेउ प्रेम पनु—लागी॥

[अयोध्या-काण्ड]

महर्षि बाल्मीकिजी दशरथजीके चरित्रका वर्णन करते हुए लिखते हैं:—"श्रीदशरथजी परम तेजस्वी मनु महाराजकी भांति ही प्रजाकी रक्षा करने वाले थे। वे वेदके ज्ञाता, विशाल सेनाके स्वामी, दूरदर्शी अत्यन्त प्रतापी, नगर और देशवासियोंके प्रिय, महान् यज्ञ करने वाले, धर्म प्रेमी, स्वाधीन, महर्षियोंके सदृश सद्गुणों वाले, राजर्षि, त्रैलोक्य प्रसिद्ध पराक्रमी, शत्रु नाशक, उत्तम मित्रों वाले, जितेन्द्रिय, अतिरथी, धन धान्यके संचय में कुबेर और इन्द्रके समान सत्यप्रतिज्ञ एवं धर्म अर्थ तथा कामका शास्त्रानुसार पालन करने वाले थे।"

[बाल्मीकि-रामायण]

हिन्दी में गोस्वामी तुलसीदासजी ने श्रीरामके जीवनका इतना पूर्ण चित्राङ्क कर दिया कि भावी कवियोंके लिये राम-काव्यका सृजन करना कठिन कार्य हो गया। अभी तक अनेक राम-काव्य लिखे गये, पर किसीका भी इतना प्रचार नहीं हुआ जितना कि रामचरित—मानसका। वर्तमान युग में श्री. मैथिलीशरणजी गुप्तने 'साकेत'की रचना करके राम-भक्त-कवियों में अपना नाम अमर कर लिया। जिस प्रकार 'राम-चरित-मानस' अमर है, उसी प्रकार 'साकेत' भी। माण्डवीके शब्दों में—

खेतोंके निकेत बनते हैं और निकेतोंके फिर खेत,।
वे प्रासाद रहें न रहें, पर अमर तुम्हारा यह साकेत

[एकादश-सर्ग]

'साकेत' चरित्र प्रधान काव्य है। ऊर्मिला देवीके चरित्र की प्रधानता होते हुए भी, अन्य पात्रोंके चरित्र चित्रण बड़े सुन्दर रूप में अंकित हुए हैं। यहां हम दशरथजीके चरित्र पर विचार करेंगे। साकेत में दशरथजीका उल्लेख चार सर्गों के अंदर मिलेगा। द्वितीय, तृतीय, षष्ठ तथा सप्तम।

द्वितीय-सर्ग—

मुनि वशिष्ठ जी और दशरथजी भरतजीके न होनेके विषय में बातचीत करते हैं, फिर अपने अभीष्ट स्थानोंको चले जाते हैं। तत्पश्चात् उस रात्रिका आगमन होता है, जिसमें कि दशरथजीके जीवनकी दो वरदानों वाली करुण घटना घटित होती है, इस नूतन-खेलको देखनेके लिये रात्री किस ठाट-बाटके साथ आती है, देखिये:—

अरुण संध्याको आगे ठेल,
देखनेको कुछ नूतन खेल,
सजे विधुकी वेंदी से भाल,
यामिनी आ पहुँची तत्काल।

भूपवर कैकईका अभिनय देखकर जड़ तुल्य हो गये। कैकई का रूप:—

न पाकर मानो आज शिकार,
सिंहिनी सोती थी सविकार।
पड़ी थी बिजली सी विकराल,
लपेटे थे घन जैसे बाल।

उन्होंने विनय-पूर्वक इस रोषका कारण पूछा:—

प्रिये! किस लिये आज यह क्रोध,
नहीं होता कुछ मुझको बोध।

गोस्वामीजीके दशरथ ने भी पूछा है:—

बार बार कह राउ, सुमुखि, सुलोचनि, पिकवचनि।
कारन मोहिं सुनाउ, गजगामिनो निज कोपकर ॥

भूपवर ने पहिले तो कैकईके इस रोषके कारणकी छानबीन की, पर जब कुछ समझ में नहीं आया, तब अनुमान से ही पूछना आरम्भ कर दिया:—

हुआ हो यदि कुछ रोग-विकार,
बुलाऊं वैद्य करूं उपचार।
अमृत भी मुझको नहीं अलभ्य,
कि मैं हूँ अमर सभा का सभ्य।
किया हो कहीं किसी ने दोष,
कि जिसके कारण है यह रोष।
बता दो तो तुम उसका नाम,
दैव है उसपर निश्चय वाम।
सुनूं मैं उसका नाम सुभिष्ट,
कौन सी वस्तु तुम्हें है इष्ट।
जहां तक दिनकर कर प्रसार,
वहां तक समझो निज अधिकार।
किसीको करना हो कुछ दान,
करो तो दुगुना आज प्रदान।
भरा रत्नाकर सा भाण्डार,
रीत सकता है किसी प्रकार।

गोस्वामीजी ने भी दशरथ से ऐसी ही बातें कहलवाई हैं:—

चौ०—अनहित तोर प्रिया केइ कीन्हा,
केहि दुइ शिर जेहि यमुचह लीन्हा।
कहु केहि रंक हि करौं नरेशू,
कहु केहि नृप हि निकासहूं देशू।
सकौं तोर अरि अमरौं मारी,
काह कीट बपुरे नर नारी।
जानसि मोर सुभाउ वरोरू,
मनु तव आनन चंद चकोरू।
प्रिया प्रान-सुत सरवसु तोरे,
परिजन प्रजा सकल वस तोरे।

साकेत में दशरथजी कैकईको 'दो वरदानों'की याद दिलाते हैं:—

तुम्हें पहले ही दो वरदान,
प्राप्त हैं, फिर भी क्यों यह मान?

पर, राम चरित-मानस में कैकईको ही उनका स्मरण आता है। वह उलहना देती है:—

दो०—मांग मांग पै कहहु पिय, कबहुं न देहु न लेहु।
देन कहेहु बरदान दुई, तेउ पावत सन्देहु॥

साकेतकी कैकईका उलहनाः—

चलो रहने दो झूठी प्रीति,
जानती हूँ मैं यह नृप नीति।
दिया तुमने मुझको क्या मान,
वचन भय वही न दो वरदान।

जब कैकई यह कहती है कि 'न दोगे वे दो वर भी भूप' तब दशरथ जी प्रतिज्ञा करते हैं:—

सत्य से ही स्थिर है संसार,
सत्य ही सब धर्मों का सार।
सत्य ही नहीं, प्राण परिवार,
सत्य पर सकता हूँ सब वार।

रामचरित्र-मानस की प्रतिज्ञाः—

चौ०—रघुकुल रीति सदा चली आई,
प्रान जाहु वरु वचन न जाई।

कैकई के 'दो वरदान' सुन कर नृप की दशाः—

वज्र सा पड़ा अचानक टूट,
गया उनका शरीर सा छूट।

राम-चरित-मानस में नृप की दशा :—

चौ०—सुनि मृदु-वचन भूप हिय सोचू,
शशिकर छुअत विकल जिमि कोकू,
गयउ सहमि नहीं कछु कहि आवा,
जनु सचानवन झपटेउ लावा,
विवरन भयऊ निपट नरपाल,
दामनी हनेउ मनहुं तरु ताल।

नृप कैकईसे ही सबसे अधिक प्रेम करते थे, पर अन्त में उसी ने उनके प्राण ले लिये। नृप का पछतावा :—

जिसे चिन्तामणि-माला जान,
हृदय पर दिया प्रधानस्थान।
अंत में लेकर यों विष दन्त
नागिनी निकली वह हा हन्त।

तृतीय—सर्ग

जहां श्रीराम के राज्याभिषेक की तैयारियाँ की जा रही थीं- समस्त साकेत वासियों के मन-मयूर आनन्द-मग्न हो रहे थे, वहीं अब सहसा कैसा अकल्पनीय परिवर्तन आ उपस्थित हुआ—भरत को राज-गद्दी और रामको चौदह वर्षका वनवास !

जहां अभिषेक अम्बुद छा रहे थे,
मयूरों से सभी मुद पा रहे थे।
वहाँ परिणाम में पत्थर पड़े यों,
खड़े ही रह गये सब थे खड़े ज्यों।

प्रातःकाल होते ही श्रीराम और लक्ष्मण पितृ-वन्दनाके लिये विमाताके प्रासादकी ओर चले।

कमल-दलसे बिछाते भूमितलमें
गये दोनों विमाता के महल में।

जिस समय दोनों भाई अपने पिता जी के सम्मुख जाकर खड़े हुए उस समय उनके नेत्रों ने किस दृश्य को देखा ?

दशा नृपकी विकट संकटमयी थी,
नियति-सी पास बैठी कैकई थी।
अनैसर्गिक घटा सी छा रही थी,
प्रलय घटिका प्रकटता पा रही थी।

रामचरित्र-मानस में दशरथ की दशाः—

जाइ दीख रघुवंश मनि, नरपति निपट कुसानु।
सहमि परेउ लखि सिंहहि निहि, मनुह बृद्ध गजराजु॥

चौ०—सूखहि अधर जरहि सब अंगु,
मनहुँ दीन मनिहीन भुजंगू।

श्रीराम ने रहस्योद्घाटन की प्रार्थना कीः—

कहा तब राम ने—'हे तात! क्या है ?
खड़ा हूँ राम यह मैं, बात क्या है ?
हुए क्यों मौन फिर तुम ? हाय ! बोलो,
उठो, आदेश दो, निज नेत्र खोलो।

भूप कुछ बोल नहीं सके, देखते भर रहेः—

पलक सूजे हुए निज नेत्र खोले,
रहे वे देखते ही, कुछ न बोले !

पूज्य पिताकी 'भंवरमें पोतकी जैसी' अवस्था देख कर श्रीराम कैकईसे पूछते हैं:—

कहो भी—'देवि ! यह क्या है, सुनूं मैं,
कुसुम-सम तातके कण्टक चुनूं मैं।'

कैकई असली रहस्यको तो छिपा जाती है, इतना सा उत्तर देकर मौन धारण कर लेती है कि:—

सुनो, हे राम ! कण्टक आप हूं मैं,
कहूँ क्या और, बस, चुपचाप हूँ मैं।

लक्ष्मण जी जरा चपल स्वभावके थे। उनसे न रहा गया, कह ही तो बैठे: —

कहा सौमित्रने—'मां चुप हुई क्यों ?
चुभाती चित्तमें हो यों सुई क्यों ?'

इसी क्षण नृपको कुछ चेतना आई। श्रीरामका आलिंगन करनेको उनके बाहु आगेको बढ़े, उन्होंने उठनेका प्रयास किया, 'पर पैर उनके लटपटाये।'

अभी तक दोनोंको यह ज्ञात नहीं हो सका, कि यह आखिर माजरा क्या है ? इस स्थान पर कवि घटनाके स्पष्टीकरणके लिए जिस मनोवैज्ञानिक मार्ग को अपनाता है, उसकी प्रशंसा नहीं की जा सकती। श्रीरामकी ठोड़ी पकड़कर, कुछ देर ठहर कर और तब उनका बदन कैकईकी ओर करके नृप कैकईसे कहने लगे:—

कहा गतधैर्य होकर भूपवरने—
'चली है, देख तू क्या आज करने !
अभागिन ! देख, कोई क्या कहेगा ?
यही चौदह बरस वन में रहेगा !
विभव फिर हाय ! तू भव छोड़ती है,
भरतका रामका जुग फोड़ती है !
भरतका भी न ऐसे राज्य होगा,
प्रजा-कोपाग्निका बहु आज्य होगा।
मरूंगा मैं तथा पछतायगी तू,
यही फल अन्तमें बस पायेगी तू !'

इतना कहते कहते भूपाल शोकातुर हो गये, और:—

पुनः करने लगे वे राम-रटना,
समझ ली रामने भी सर्व घटना।

उक्त पंक्तियोंमें, श्रीरामके नेत्रोंके सम्मुख सारा घटना-चक्र घूम गया, यह स्पष्ट है। जब श्रीरामने वन जानेकी आज्ञा मांगी, तब तो नृप और भी अस्थिर हो गये। यहां तक कि उन्हें मूर्छा आ गई:—

हुए क्यों पुत्र तुम हे राम ! मेरे,
यही हैं क्या पिताके काम मेरे !
विधाता ! बस न फिर कुछ कह सके वे,
हुए मूर्छित, न बाधा सह सके वे।

नृपकी यह दशा देख कर:—

धसकने-सी लगी नीचे धरा भी !
किन्तु, पत्नीजी पर न पाषाणी जरा भी !

षष्ठ सर्ग

श्रीरामके विरहमें दशरथ जी आंधीसे उखड़े हुए वृक्षके सदृश शैया पर लेटे हुए हैं। कौशल्या जी और सुमित्रा जी उनके दाएं-बाएं बैठी हुई उन्हें धैर्य बंधा रही हैं। नृपका हृदय-द्रावक कथन—

मैं ही अनर्थका हेतु हुआ,
रविकुलमें सचमुच 'केतु' हुआ।
यदि राम न लौटेंगे वनसे,
तो भेंट न होगी इस जनसे।

अब तो उन्हें केवल एक ही आशा जिला रही है, वह है—सुमन्त्रके आगमनकी प्रतीक्षा। कवि 'आशा' के सम्बन्धमें कितनी सत्य बात कहता है:—

आशा अवलम्ब-दायिका है,
क्या ही कल-गीति गायिका है।
वह आप क्यों न नाता तोड़े,
पर कौन है कि उसको छोड़े।

मार्ग में अनेक तर्क-वितर्क करते हुए सुमन्त्र वापिस लौट आए। श्रीरामको न ला सकनेके कारण उनकी दयनीय अवस्था:—

करमें घोड़ोंकी रास लिए,
निज जीवनका उपहास लिए।
होकर मानो परतन्त्र निरे,
सूना रथ लिए सुमन्त्र फिरे।

सूर्यदेवके अस्ताचल-गामी हो जाने पर उन्होंने नगर-प्रवेश किया:—

जब रजनी आकर प्राप्त हुई,
बाहर ही सांझ समाप्त हुई।
नीरव गतिसे, उदास उरमें,
तब सचिव प्रविष्ठ हुए पुरमें।

राम-चरित-मानसके सुमन्त्र भी रात्रिमें ही नगर-प्रवेश करते हैं:—

चौ०—बैठि विटपतर दिवस गंवावा,
सांझ समय तब अवसर पावा।
अवध प्रवेश कीन्ह अंधियारे,
बैठ भवन रथ राखि दुआरे॥

नृपकी यह दशा देख कर:—

गजराज पङ्कमें धंसा हुआ,
छटपट करता था फंसा हुआ।

सुमन्त्र सोचने लगे कि हे ईश्वर!:—

यह पोत डूब ही जावेगा,
या कूल किनारा पावेगा।

रामचरित मानसमें सुमन्त्रने राजाकी यह दशा देखी:—

चौ०—जाइ सुमंत दीख कस राजा,
अमिय रहित जनु चन्द विराजा।
आसन सयन विभूषन हीना,
परेउ भूमितल निपट मलीना।
लेइ उसांस शोच यहि भांति,
सुरपुरते जनु खंसेउ ययाति।

सुमन्त्रने श्रीराम-लक्ष्मण-सीताका संदेशा सुनाया। उसे सुन कर नृपकी मणि-विहीन-सर्प तथा वारि-बिन मीन जैसी अवस्था हो गई। श्रीराम-रटना करते हुए उन्होंने अपने प्राण विसर्जन किये। उनके अन्तिम उद्गार:—

'मेरे कर युग हैं टूट चुके,
कटि टूट चुकी, सुख छूट चुके।
आंखोंकी पुतली निकल पड़ी,
बस यहीं कहीं है विकल पड़ी!
खा कर भी बार-बार झटके—
क्यों प्राण अभी तक हैं अटके?
हे जीव, चलो अब दिन बीते,
हा! राम, राम, लक्ष्मण सीते!'

राम-चरित-मानसमें श्रीराम रटना करते हुये दशरथ जीका देह त्याग:—

दो०—राम राम कहि राम कहि, राम राम कहि राम।
तनु परिहरि रघुवर विरह, राउ गयेउ सुरधाम॥

भूपतिकी मृत्युका शोक-समाचार पलक मारते ही सारे साकेतधाममें गूंज गया। वशिष्ठजी जैसे तत्व-ज्ञानी मुनि भी अपने अश्रुओंको न रोक सके। रानियोंको धैर्य बंधाते हुये बोले:—

देखा वसिष्ठने और कहा—
'नर देह यहींका यहीं रहा।
वह श्वास-शृङ्खला टूट गई,
आत्मा बंधनसे छूट गई।'

फिर उन्होंने नृप-तनको तेलमें रखवा दिया और संदेशके अक्षर गिना कर दूतोंको भरतजीको बुला लानेके लिए भेजा:—

धैर्य देकर धीर मुनिने ज्ञानके प्रस्तावसे,
तेलमें रखवा दिया नृप-शव सुरक्षित भावसे।
दूत भेजे दक्ष फिर संदेशके अक्षर गिना,
जो बुला-लावें भरतको प्रकृत वृत्त कहे बिना।

रामचरित-मानसका वर्णन:—

चौ०—तेल नाव भरि नृप-तनु राखा,
दूत बोलाइ बहुरि अस भाखा।
धावहु वेगि भरत पर जाहु,
नृप सुधि कतहुं कहहु जनु काहू।
एतनेइ कहेहु भरतसन जाई,
गुरु बोलाइ पठए दोउ भाई।

सप्तम-सर्ग

आज श्रीराम प्रेमी दशरथजीकी अन्तिम बिदाई है। ऐसा कौन अभागा होगा जो इस महोत्सव में सम्मिलित होनेकी इच्छा न रखता हो। आइये,

हम भी साकेत-वासियोंके साथ चलकर भूपतिके अंतिम दर्शन करनेका सौभाग्य प्राप्त करें :—

आज नरपतिका महासंस्कार,
उमड़ने दो लोक पारावार।
है महायात्रा यही, इस हेतु,
फहरने दो आज सौ-सौ केतु।
घहरने दो सघन दुन्दुभि घोर,
सूचना हो जाए चारों ओर।
सुकृतियोंके जन्म में भव-भुक्ति,
और उनकी मृत्युमें शुभ-मुक्ति।
अश्व, गज, रथ हों सुसज्जित सर्व।
आज है सुरधाम यात्रा-पर्व!
सम्मिलित हों स्वजन, सैन्य, समाज,
बस, यही अन्तिम विदा है आज।

सूत, मागध, वन्दि आदि अभीत;
गा उठे जीवन विजयके गीत—।
तुच्छ कर नृप-मृत्यु पत्त समस्त,
पा गये हैं आज अपना लक्ष्य।

शवयान राज-प्रासादसे चल पड़ा। भरतजी के भव्य-भद्र स्कन्ध उसे वहन किये हुए हैं। कुलपुरोहित और कुल—आचार्य साथ हैं। सैंकड़ों झांझू, झालर और शंख बजाते जा रहे हैं। जयघोष से आकाश गुन्जायमान हो रहा है। लोगोंके नेत्रों से आंसू प्रवाहित हो रहे हैं। पांवडोंके बीच में शव-यान मन्द गति से जा रहा है। उभय ओर मनुष्योंकी पंक्ति खड़ी हुई बहुमूल्य वस्तुएं लुटा रही है :—

शेष दर्शन कर सभक्ति, सयत्न,
जन लुटाते थे वसन, धन रत्न।

अब सरयू तीर आ गया। सरिताका जल भी करुण-गद्गद है। वह अपना शोक इस प्रकार प्रकट कर रही है।

आप सरिता बीचि वेणी खोल
कर रही थी कलविलाप विलोल।

राज-शव चिता-रूपी सेज पर विश्राम कर रहा है:—

अगरू चन्दनकी चिता थी सेज,
राजशव था सुप्त, संयत, तेज।
सरस कर भूतल, वरस एकान्त,
क्षितिज पर मानो शरदघन शान्त!

वेद मंत्रों सहित शुचि संस्कार सम्पन्न हुआ अंत में,:—

बोले फिर मुनि यों चिताकी ओर हाथ कर,
"देखो सब लोग, अहा! क्या ही आधिपत्य है!
त्याग दिया आप अज-नन्दन ने एक साथ,
पुत्र हेतु प्राण, सत्य कारण अपत्य है।
पा लिया है सत्य-शिव-सुन्दर सा पूर्ण लक्ष्य,
इष्ट हम सबको इसीका आनुगत्य है!
सत्य है स्वयं ही शिव, राम सत्य सुन्दर है,
सत्य काम सत्य और राम नाम सत्य है!"

तत्पश्चात्:—

कण्ठ-कण्ठ गा उठा, शून्य शून्य छा उठा।
सत्य-काम सत्य है, राम नाम सत्य है!

श्री गो० तुलसीदास और उनकी साहित्य सेवा

[लेखिका — श्रीमती सुशीलाकुमारी शर्मा प्रभाकर विशारद]

यूं तो स्वामी रामानन्दके समय से ही रामभक्ति शाखाका प्रचार हो रहा था, पर उसकी विशेष उन्नति तथा उसके द्वारा हिन्दी-साहित्यका विशेष उपकार सतरहवीं शताब्दीके प्रारम्भिक भागमें ही हुआ था। उस समय हिन्दी साहित्यके सर्वश्रेष्ठ कवि गोस्वामी तुलसीदासके आविर्भावके कारण हिन्दीसाहित्य तथा रामभक्ति-शाखामें चार चांद लग गये। गोसांईजीके जीवन-चरित्र कई व्यक्तियों द्वारा लिखे हुए मिलते हैं, परन्तु उनमें से बाबा वेनीमाधवदास कृत गोस्वामीचरित्र तथा रघुवरदास कृत तुलसीचरित्र प्रसिद्ध हैं। यद्यपि इन दोनों में पारस्परिक भिन्नता पाई जाती है, तथापि जन्मके सम्बन्ध में दोनोंका एक ही मत है। गोस्वामी चरित्र में श्रावण-शुक्ला सप्तमी तिथि रक्खी है, इसी प्रकार सं० १६८० में मृत्यु भी एक जैसी लिखी है। इस सम्बन्धमें यह दोहा प्रसिद्ध है—

"सम्वत सोलह सौ असी, असी गंगके तीर।
श्रावण शुक्ला सप्तमी तुलसी तज्यो शरीर।"

परन्तु बाबा वैनीमाधव ने सप्तमी तिथि न मानते हुए तृतीया मानी है। इतिहासकारोंके मतमें भी यही तिथि ठीक है, क्योंकि तुलसीदासके अनन्य मित्र टोडरके वंशज अभी तक इसी तिथिको गोसांईजीके नाम पर सीधा दिया करते हैं। इन मतोंके अतिरिक्त शिवसिंहसरोजकार गोसाईजी का जन्म-वर्ष १५८३ तथा रामगुलाम द्विवेदी एंव डाक्टर ग्रियरसन १५८६ मानते हैं, क्योंकि उन्हें तुलसीदासकी इतनी बड़ी आयु होने में संदेह प्रतीत होता है। परन्तु स्मरण रहे कि तुलसीदास सरीखे पवित्र आचरण वाले महापुरुषोंके लिये इतनी बड़ी आयुका होना असंभव नहीं हो सकता प्रसिद्धिके अनुसार इनके पिताका नाम आत्माराम दुबे तथा माताका नाम हुलसी था। कहते हैं कि गण्डमूल नक्षत्र में उत्पन्न होनेके कारण जन्मते ही इन्हें माता पिता ने छोड़ दिया था, तबसे लेकर मुनियां नामक दासी ने पांच छः वर्ष तक पाला और बाद में नरहरिदास ने अपने पास रक्खा था। बनारस में इन्हींके पास रहकर गोसांईजी रामानन्दकी कथा सुना करते थे, वहीं पर शेष सनातन नामक एक विद्वान् से इन्होंने शास्त्रका अध्ययन किया। कुछ दिनोंके बाद यमुना-तट-वासी एक ब्राह्मण ने अपनी लड़कीके साथ इनका विवाह कर दिया। यह अपनी स्त्री पर अत्यन्त आसक्त हो गये थे था एक समय उसके मायके जाने पर वह नदी लांघ कर उसीके पीछे जा पहुंचे। तब उसने— "लाज न लागत आपुको दोरेहु आयेहु साथ" इत्यादि दोहे कहे, जिससे तुलसीदास विरक्त हो काशी आ पहुँचे और यहांसे अनेकों तीर्थोंकी यात्रा करते हुए मानसरोवर तक पहुँचे। वहांसे आ कर बहुत दिनों तक चित्रकूट रहे। यहीं पर सूरदासजीके कहने पर इन्होंने कृष्णगीतावलीकी रचना की। बाद में अयोध्या जाकर सं० १६३१ में रामचरित-मानस लिखना आरम्भ किया। इन्होंने अपने अन्तिम दिन काशी में बिताए थे। यहां पर इन्हें बड़े-बड़े विद्वान् मिलने आया करते थे जिन में से प्रसिद्ध विद्वान् मधूसूदन सरस्वती से इनका शास्त्रार्थ हुआ था, जिसमें प्रसन्न होकर उन्होंने तुलसीदासकी इस श्लोक से स्तुति की थी—

आनन्दकानने कश्चित् जङ्गमस्तुलसीतरुः
कवितामञ्जरी यस्य रामभ्रमरभूषिता।

हिन्दी साहित्यका सर्वप्रथम तथा सर्वश्रेष्ठ और सर्वांगपूर्ण विकास यदि किसीके द्वारा हुआ तो केवलमात्र गोस्वामी द्वारा, क्योंकि वीरगाथा काल

सिधार गये। उस समय प्रसादजी सातवीं श्रेणीमें पढ़ रहे थे। पिताकी असामयिक मृत्युके कारण आपका विद्यालय जाना बन्द हो गया और परिवार का सारा भार संभालना पड़ा, परन्तु परिस्थितियोंके विपरीत होने पर भी, अपने लक्ष्यको न छोड़ना ही तो धीरोंका परम कर्तव्य है। आपने स्कूल छोड़कर घर पर ही पढ़नेका प्रबन्ध कर लिया। कुछ समय तक धुरंन्धर विद्वानोंसे संस्कृतका अध्ययन करते रहे। आपने उन्नीस वर्षकी, स्वल्प आयुमें भी गम्भीर ऐतिहासिक गवेषणाएं तथा छायावाद नामक नवीन शैलीकी कविता करना आरम्भ कर दिया था। क्रमशः आपने हिन्दी साहित्य की इतनी ठोस सेवायें कीं कि इससे हिंन्दी जगत् ही क्यों सम्पूर्ण भारत भी कभी उऋण नहीं हो सकता। कवि जी ने कई भिन्न रूपोंमें हिन्दी साहित्यकी भी वृद्धि की। उनमेंसे सर्वप्रथम तो यह की कि हिन्दी साहित्यके काव्यक्षेत्रको परिष्कृत कर सुरुचिकी ओर प्रवृत्त किया और वास्तविक सत्यमार्ग पर चलाया।

कहनेका तात्पर्य है कि प्राचीन काव्यकार या तो शृंगारसे सर्वथा अछूते रहा करते थे, या ऐसे शृंगार से भरे रहते थे कि नाम लेते ही घृणा उत्पन्न हो जाय। वास्तवमें ये दोनों ही मार्ग असमीचीन हैं। इसे प्रत्येक सहृदय स्वीकार करेगा। किन्तु प्रसादजीने साहित्य क्षेत्रमें प्रवेश कर आधुनिक प्रेमका परिचय कराते हुए, कर्तव्य पालन करनेका उपदेश किया।

सच तो यह है कि, बिना श्रृंगारके प्रेम काव्यमें या यों कहो कि मानव जीवनमें स्वाभाविकता आ ही नहीं सकती, किन्तु खाली प्रेम या शृंगारके रहने से विलासिता, अकर्मण्यता बढ़ जाती है और देश तथा जातिका पतन हो जाता है। अतः प्रेम या शृंगार होना चाहिए मर्य्यादित और कर्तव्य-परायणताके साथ। प्रसादजीके प्रत्येक काव्य या नाटकमें ही क्यों, पद पद पर इस आदर्शको अटल पाओगे। यह है प्रसादजीकी साहित्यको परिष्कृत करने एवं सन्मार्ग पर लाने की सेवा।

हिन्दीमें छायावादमें आप सर्वप्रथम माने जाते हैं। छायावादकी महत्ता प्रदर्शित करनेका यह अवसर नहीं, अतः इतना ही कह देना पर्याप्त है कि प्रसाद जी ने इन नवीन शैली तथा नये विचारों द्वारा हिन्दी साहित्य भण्डारको अपूर्णताके दोषसे ही नहीं बचा लिया, प्रत्युतः शतशः कवियोंको अपने मार्ग पर चलाकर तथा अपना अनुयायी बनाकर सर्वदाके लिए अक्षय बना दिया। मौलिक नाटक लेखकोंमें भी आप ही हिन्दी साहित्यमें सर्वश्रेष्ठ नाटककार और पथप्रदर्शक माने जाते हैं, प्राचीन ? की गवेषणा विशेषकर बौद्ध युगके इतिहासके अनुसन्धानके कार्यकी दृष्टिसे तो आपका स्थान हिन्दी साहित्यमें ही नहीं, प्रत्युतः सम्पूर्ण विश्व साहित्यमें ऊंचा है। हां इतना अवश्य है कि इस अनुसन्धानके विषयमें काशीप्रसाद जी जायसवाल आपके समान ही हो गये हैं।

इसके अतिरिक्त आपने उपन्यास आख्यान आदि भी अत्यन्त मार्मिकतापूर्ण लिखे। कहनेका तात्पर्य यह है कि आपकी प्रतिभा सर्वतोमुखी थी और अपने वर्तमान साहित्यके प्रचलित विषयों तथा शैलियों पर तो लिखा ही है साथ ही नई नयी शैली नये-नये विषयों पर भी बहुत कुछ लिखा है, और उस मार्ग पर अन्य कवियोंको चलाकर हिन्दी साहित्यकी जो व्यापक एवं आवश्यक सेवाएं की हैं, उनका पूरा-पूरा वर्णन मैं तो क्या कोई महाकवि भी नहीं कर सकता। बात तो यह है कि वास्तवमें प्रसादजी कोई साधारण मानव नहीं थे, प्रत्युत अलौकिक महापुरुष थे। सर्वथा — किसी भी दिव्य आत्माने हिन्दी साहित्यके मस्तकको पूर्ण साहित्य समुन्नत करनेके लिए मानवी रूप धारण किया था। जिसे कराल काल ने अकाल में ही उठा लिया। उनमें मनुष्यके लिए आवश्यक या महापुरुषों में रहने वाले 'सरस्वती' लक्ष्मी तथा रति सुन्दरता तीनों देवियां निवास करतीं थीं,

किन्तु अत्यन्त सुन्दर और परम धनवान् होते हुए भी आप तत्त्वदर्शीकी भांति जलमें स्थित पद्मपत्रके समान इस नश्वर सुखोपभोग या सांसारिक ऐश्वर्यसे सर्वदा निर्लिप्त रहते थे, आपकी वेष भूषा खान पान सवदा साधारण ही था। "विकारहेतौ सति विक्रियन्ते येषां न चेतांसि त एव धीराः॥" भगवान् शंकरके लिए कही गई कालिदासकी उक्ति जयशंकर पर पूर्णरूपसे लागू होती है! कहां तक लिखें, जय शंकर प्रसाद जीकी वैयक्तिक महत्ता, इनकी काव्य कुशलता, उनकी उदारता, शीलता आदि असंख्य गुणोंका वर्णन करनेमें अनेकों बड़े २ ग्रन्थ लिखे जा सकते हैं, उनके काव्यकी आलोचनाओं पर ही बीसियों ग्रन्थ लिखे गए थे, जबकि वह इस लोकमें थे और न जाने कितने लिखे जाएंगे। अब अधिक न लिखते हुए इतना ही कहना पर्याप्त समझते हैं कि प्रसादजीका हिन्दी साहित्यमें स्थान उतना श्रेष्ठ है, जितना कि महाकवि गोस्वामी तुलसीदास तथा भारतेन्दु बाबू हरिश्चन्द्रका मेरी तुच्छ संमतिमें तो अब तक हिन्दी साहित्यमें यह तीन ही श्रेष्ठ लाल हुए हैं। उनमें भी एक तारतम्य रूपसे देखने पर प्रसादजीका स्थान ऊंचा ही जंचता है। अन्य भाषा कवियोंसे तुलना करने बैठें तो महाकवि कालिदास शेक्सपियर तथा विश्व महाकवि रवीन्द्रनाथ ठाकुरके साथ ही इनका आसन रहेगा। कोई समय आयेगा, जब सरस्वतीके अवतार इस साहित्यके लालका भी संसारमें इतना सम्मान होगा।

महाकवि सूरदास और उनका वात्सल्य वर्णन

एक हजार वर्षके हिन्दी-साहित्यके सुविस्तृत इतिहासमें सोलहवीं शताब्दीका समय सर्वदा स्मरणीय रहेगा, क्योंकि इसी कालमें कवि-कुल-गुरु महात्मा तुलसीदास और सहृदयशिरोमणि महाकवि सूरदास सरीखे सप्त कवियोंकी कृतिके प्रकाशसे साहित्याकाश सर्वदाके लिए विश्व साहित्यमें प्रकाशित हो गया। इसी सुनहरे समयमें सूर सूर कर निकर विकसित कवि-कुल-कमल-काननने अपनी हरिभक्ति रूपी भीनी २ सुगन्धिको गन्धरूपमें बहा कर सहृदयोंके हृदय रूप घ्राण रन्ध्रको आपूरित तथा परितृप्ति प्रदान कर उन्हें दिव्य ब्रह्मानन्दके हिन्दोलेमें दोलायमान कर दिया था। वास्तवमें वह काल कल्पनाकी कूदसे भी परे होगा, जब सूर सरीखोंकी सुधारसयुक्त रसनासे प्रवाहित रचना रूपी सुरसरी ज्ञान ध्यानकी त्रिवेणीने प्रवाहित होकर काव्य रसलोलुप माधुर्यों, सङ्गीतानुरागी तथा ज्ञानियोंको निष्णात किया था, यद्यपि वैयक्तिक रूपसे तुलसीदासकी साहित्य सेवाएं भी अत्यन्त अर्हणीय है तथापि सामूहिक रूपसे देखने पर सूरकी सेवाओंको ही सर्वोत्तम पद प्राप्त होता है। कहनेका तात्पर्य यह है कि गोस्वामी जी महाराजने अपने आप ही सारी सेवाएं कीं, अन्य कवियोंको उस पर चलनेके लिए न प्रेरित किया, और न बादमें हिन्दी साहित्यकी शोभा बढ़ाने वाले वैसे कवि हुए, इसके विपरीत सूरने स्वयं तो साहित्य सेवाएं की, अनेक कवियोंको भी अपने पथ पर चला कर पर्याप्त प्रतिष्ठा प्राप्त कर ली। सूरकी परम्परामें अष्ट छापके कवि तो प्रसिद्ध हैं। उनके अतिरिक्त बिहारी आदि शृङ्गारी कवि भी सूरकी छाया पर चले।

इसका आशय इतना ही है कि सत्रहवीं शताब्दी में आविर्भूत इन दोनों भारतकी विभूतियोंने साहित्य आकाशमें चार चान्द लगा दिए। इस समय हम यहां केवल मात्र कुछ सूर हीके सम्बन्धमें लिखने बैठे हैं।

हां, तो सर्वप्रथम विचारणीय बात यह है कि उनका जन्म कब और कहां हुआ? कहां पले और कहां पढ़े? उनका रचना काल और क्षेत्र कौन सा है? तथा वे कब गोलोक सिधारे?

इसके उत्तरमें यही कहा जा सकता है कि संस्कृतके कवियोंकी भांति हिन्दी कवि भी इस अपनी भौतिक देहको, क्षणभङ्गुर शरीरके वृत्तान्तको अथवा यूं कहे कि अपने आपको ही प्रख्यात नहीं

करना चाहते थे। वह काव्य-रचना करते थे, पर स्वान्तः सुखाय, यह बात अलग है कि संसारने उनकी सरस रचनाओंसे असीम आनन्द प्राप्त किया और लाभ उठाया। पर उन्होंने वह कविताएं अपने ही आनन्दके लिए लिखी थीं इसमें सन्देह नहीं। इसीलिए वह आत्मश्लाघा करना तो दूर रहा, आत्म-परिचय देना भी अनुचित समझते थे, यदि कहीं इस सम्बन्धमें लिखा गया, तो वह अपर्याप्त है।

अतः इन कवियोंका परिचय देनेके लिए अन्य कवियोंकी कृतियां इतिहास, उक्ति एवं अनुमानका सहारा लेना पड़ता है, उनका जीवन वृत्तान्त लिखनेके पूर्व यह कह देना परमावश्यक प्रतीत होता है कि सूरके सम्बन्धमें कई मतभेद हैं। उनमेंसे सर्व प्रथम यह कि हिन्दी साहित्यमें सूरके नाम वाले पांच कवि हो चुके, इनमेंसे प्रसिद्ध सूरदास सूरसागरके सवालाख गीतोंमें श्रीमद्भागवतका भावानुवाद करने वालेके सम्बन्धमें कुछ कहना है। इनका जन्म समय तो सभी सम्वत् १५४० के लगभग बतलाते हैं; पर जन्म स्थानके सम्बन्धमें दो मत हैं। कई कहते हैं कि इनका जन्म स्थान देहलीके समीप सिंहग्राममें हुआ, दूसरे कहते हैं कि आगराके समीप रेणुका क्षेत्र (रूणकता ग्राम) इनका जन्म धाम है। इनमें दूसरा मत ही अधिक सम्मत समझा गया।

इसी प्रकार इन्हें कई सारस्वत ब्राह्मण कहते हैं। कई इन्हें ब्रह्म भट्ट कहते हैं। कह नहीं सकते कि इन दोनोंमेंसे कौनसा मत ठीक है। इससे केवल यह ज्ञात होता है कि यह ब्राह्मण अवश्य थे। कहते हैं कि इनके छः भाई और थे, जो कि युद्धमें मारे गये थे। यद्यपि इनके भक्त इन्हें जन्मान्ध मानते हैं, तथापि जिन जिन रूपों, वर्णनों एवं आकारोंके चलते फिरते चित्र खींचे हैं, उन्हें देखते हुए इनका जन्मान्ध होना कोई भी स्वीकार नहीं कर सकता। एक मत यह भी है कि एक बार यह एक नवयुवती सुन्दरीको बहुत देर तक एक टक देखते रहे। तब उसने इनके पास आकर कहा—कि 'महाराज क्या आज्ञा है? उससे लज्जित होकर सूरदासने कहा मेरी आंखें निकाल दो। युवतीने वैसा ही किया। सूर नेत्रहीन हो गये। किन्तु इनका अपने आप अन्धा होना जंचता नहीं, क्योंकि यह स्वयं ही अपने अन्वेषनका भगवान्को उलहना देते हैं, "सूरको कहां नैनहुकी हानि"। यह भी कहा जाता है कि जब यह अपने घरसे मथुरा चले तो वे कुएंमें गिर पड़े और भगवान् कृष्णने निकाला और सनेत्र कर दर्शन दिए। तब उन्होंने भगवान्से कहा कि जिन आंखोंसे आपके दर्शन किये हैं, उनसे अब सांसारिक जीवोंको न देखूं। इसलिए आप मुझे फिर अन्धा कर दीजिए। तदुपरान्त सूरदास गोघाटमें रह भगवान् के गुण गाने लगे एक बार महाप्रभु श्री वल्लभाचार्य जी महाराज वहां पर इन्हें अपने साथ ले गये। तबसे यह महाराजके दरबारमें रहकर भागवतके भावोंके आधार पर श्रीकृष्ण कीर्तन करने लगे। इनका गोलोक वास १६४०) लगभग माना जाता है।

यद्यपि सूर ने श्रृंगार, विनय, रूपमाधुरी, प्रणय, विरह आदि अनेकों विषयों पर अपनी कविता की है, तथापि यहां पर उनके वात्सल्य वर्णन पर व्यापक विचार प्रकट किए जाएंगे, क्योंकि अन्य सब रचनाओंके सुन्दर होने पर भी जो सुन्दरता स्वाभाविकता इन की बालक्रीड़ाओं के वर्णन में दिखाई देती है, वह अन्यत्र कहीं भी नहीं। अन्य किसी कविकी बातको जाने दीजिए, स्वयं सूरके अन्य गीत अन्य विषयों पर लिखे हुए फीके जंचते हैं। इसी लिये तो कहा है कि यदि सूरदासका दूसरा नाम वात्सल्य रखदिया जाए, तो अत्युक्ति न होगी।

देखिये यशोदा बाल गोपालको पालने झुलाती हुई क्या ही सुललित लोरियां आलाप कर रही है।

मेरे लालको आऊ निदरीय काहे न आनी सुवावे,
तू काहे नहिं वेगि आवे तोको कान्ह बुलावे।

और उधर कृष्णकी अवस्था देखिए:—

कबहुँ पलक हरि मून्द लेत हैं, कबहुँ अधर फरकावे।

प्रिय पाठक, तनिक देखिये तो सही, इस कृष्णके झुलाने और सुलाने में कितनी स्वाभाविकता से काम लिया गया है। आगे चलिये, अब कृष्णके दान्त निकल आये हैं और घुटनेके बल रेंगने भी लग पड़े। इस दान्त निकलने और रेंगनेकी जैसी तस्वीर सूर ने खेंची है वह अपना उपमान आप ही है। जरा आगे देखिए। अब भगवान् कुछ बड़े हो गये, चार पांच वर्षके होगये अब वह अपनी शिकायत कर सकते हैं और रूठना भी जानते हैं, दूध उन्हें भाता नहीं तो माता चोटीके बड़ी होजाने के लालच से ही अन्त में उन्हें दूध पिला ही देती है। वह भी सोचते हैं कि अच्छा एक बून्द दूध ही है चलो पी लेते हैं चोटी तो बड़ी हो जाएगी। कई दिन इस प्रकार चलता रहा, पर चोटी मोटी होती दिखाई न दी तो आखिरमें शिकायत कर दी।

"मैया कबहीं बढ़ैगी चोटी !"
कितिक बार मोहि दूध पिवत भई,
यह अज हूँ है छोटी।
तू जो कहवि बलकी बेनी,
ज्यों है है लांबी मोटी।
कांदत गुहत न्हावत औछत,
नागिनि सी भुई लोटी।
काचो दूध पिवावती पचि-पचि,
देति न माखन रोटी।
सूर स्याम चिरजीवौं दौऊ भैया,
हरि हलधरकी जोटी।

प्रत्येक हिन्दू विशेष कर प्राचीन हिन्दु, क्योंकि आज कल तो बाबू (बन्दर) नाम धारी व्यक्ति चोटीको रखना ही नापसन्द करते हैं, तो फिर उन्हें चोटीके बढ़ने या न बढ़ने से क्या, इस चोटीके बड़े होनेकी महत्ता और उसके बहाने बच्चोंको उनकी प्रिय वस्तु दिखा देना खूब जानते हैं। (शेष फिर—)

भारतीय साहित्यकी दो नवीन गवेषणाएं !—

सांख्य शास्त्रका चिरविस्मृत ग्रन्थकार 'माधव'

[लेखक — श्री प्रो० भगवद्दत्त जी बी. ए. रिसर्चस्कालर]

धर्मकीर्तिके प्रमाण वार्तिक का टीकाकार 'कर्णक गोभि' लिखता है:—

'यथा सांख्य नाशक माधवेन सांख्य सिद्धान्त-स्यान्यथा रचनं कृतम्।

कुमारिलके श्लोक वार्तिक पर टीका लिखने वाला भट्ट उम्बेक लिखता है:—

'सांख्य नायक माधवस्तु आह'।

सम्भवतः कर्णक गोभिके पाठमें नाशक' के स्थानमें 'नायक' पाठ अधिक उपयुक्त होगा। भट्ट उम्बेक सातवीं शताब्दी विक्रम अथवा उसके पहलेका ग्रन्थकार है। ऐसे पुराने कालका 'माधव' सांख्य ज्ञानके लिये बड़ा सहायक होगा। उसके ग्रन्थकी खोज करनी चाहिये।

मलिक मुहम्मद जायसी के 'पद्मावत' की कथा का मूल

हिन्दी-साहित्यके इतिहासके सभी लेखक लिखते हैं कि पद्मावत की कथा का पूर्वार्ध जायसी कीअपनी कल्पना का फल है। यहां तक कि आचार्य श्री पं० रामचन्द्रजी शुक्ल ने भी इसे जायसी की ही कल्पना मान लिया है।

कथाका यह भाग वस्तुतः जायसी का अपना नहीं प्रत्युत 'कल्कि पुराण' से लिया गया है। कल्कि पुराण अध्याय चार श्लोक २७ से शुरू अपनी कथाका आरम्भ करता है। वह सिंहलद्वीपकी राजकुमारी पद्मा का वर्णन करता है। उसी राजकुमारीका वृत्तान्त अगले द्वितीयांशके तृतीयाध्याय तक मिलता है। अर्थात् सात अध्यायोंमें यही कथा चलती है।

नोट — आगामी अंकमें पद्मावत और कल्कि-पुराणकी कथा पर विस्तृत तुलनात्मक प्रकाश डाला जाएगा। —लेखक।

काव्यमें अलंकारोंकी आवश्यकता

बहुतसे आचार्योंका कथन है कि काव्यमें अलंकारोंका रहना नितान्त आवश्यक नहीं है, क्योंकि अलंकार कविता कामिनीके सौन्दर्यको बढ़ाने वाले अस्थायी धर्म है। जिस प्रकार मानव शरीरके लिए अलंकारोंका रहना परमावश्यक नहीं है, उसी प्रकार कविताके लिए भी। क्योंकि यदि कोई सजीव व्यक्ति विद्या विनय शौर्य आदि गुण सम्पन्न होकर अलंकारसे रहित भी क्यों न हो, मनुष्य ही कहलाता है, अलंकारके अभावसे उसकी मानवता में तो कोई कमी नहीं आती, हां यदि वह अलंकृत हो तो उसका सौन्दर्य बढ़ अवश्य जायगा। इसी प्रकार काव्यमें उसकी आत्मा रसका रहना अत्यन्त आवश्यक है। रस और गुणादिकोंसे युक्त कोई भी अलंकार न हो तो भी कोई आपत्ति नहीं, किन्तु यदि किसी काव्यमें आत्म स्थानीय रस तो हो नहीं और उसे अलंकारोंसे लाद दिया जाए तो वह ठीक वैसे ही अशोभनीय हो जायगा, जैसे सोने चांदीसे लदा हुआ निष्प्राण मुर्दा शरीर।

कुछ लोगोंके मतके अनुसार अलंकार सौन्दर्य के उत्पादक नहीं, प्रत्युत वर्धक मात्र हैं, इसी लिए वह इन्हें अस्थायी और अनावश्यक धर्म मानते हैं।

किन्तु तात्विक दृष्टिसे विचार करने पर उक्त सिद्धान्त सत्य प्रतीत नहीं होता। वास्तवमें तो काव्य में चाहे और कोई भी वस्तु हो या न हो अलंकार तो अवश्य रहने ही चाहियें। और चाहिए ही क्यों रहते भी हैं, क्योंकि बिना अलंकारके कभी कोई कविता बन ही नहीं सकती। कहते हैं कि भारतेन्दु बाबू हरिश्चन्द्रने एक ऐसी कविता लिखनेकी प्रतिज्ञा की कि जिसमें कोई अलंकार न हो, परन्तु उस कवितामें विद्वानोंने दर्जनों अलंकार बता दिए थे। इसलिए अलंकारोंको काव्यकी सुन्दरता बढ़ाने वाला नहीं प्रत्युत उत्पादक ही मानना उचित है। जैसा कहा है............

काव्य-शोभाकरान् धर्मानलंकारान् प्रचक्षते।

काव्यकी शोभा उत्पन्न करने वाले धर्मोंको अलंकार कहते हैं।

वास्तवमें बात यों है कि सौन्दर्य जनक सामग्री या धर्म ही का नाम ही तो अलंकार है। सोने चांदी के बने टुकड़ों ही की संज्ञा तो आभूषण नहीं है, अलंकार प्रत्येक वस्तुके भिन्न भिन्न प्रकारके हो सकते हैं और उनकी सत्तासे तत्तद् वस्तुके सौन्दर्यमें चार चांद लग जाते हैं। विशेष रूपसे काव्य तो अलंकार चमत्कारके कारण अत्यन्त प्रभावशाली व आकर्षक हो जाता है। प्रकृतिवर्णनादिसे सम्बद्ध सैंकड़ों कविताएं ऐसी मिल सकती हैं, जिनमें किसी भी रसका अस्तित्व न हो, किन्तु आज तक एक भी ऐसी कविता देखनेमें नहीं आई, जो अलंकारसे शून्य हो। चाहे कोई अलंकारकी आवश्यकता स्वीकार करे या न करे, प्रत्येक कवितामें यह स्वयं ही आ विराजते हैं।

जो व्यक्ति अलंकारसे रहित शब्दार्थ भी काव्य हो सकते हैं, ऐसा स्वीकार करता है वह यह क्यों नहीं मान लेता कि अग्नि भी ताप (उष्णता) से रहित हो सकती है।

अतः इन सब बातों पर विचार करते हुए निस्संकोच रूपसे कह सकते हैं कि काव्यमें अलंकारों का अत्यन्त महत्त्व पूर्ण स्थान है। बिना अलंकारोंके काव्य रचना हो ही नहीं सकती।

छन्द और अलंकारोंमेंसे काव्यके लिए कौन अधिक उपयोगी और आवश्यक है?

यों तो अलंकार और छन्द दोनों अपने अपने स्थान पर आवश्यक व महत्त्वपूर्ण हैं ही, संसारभरके

सभी साहित्य में दोनों को ही समुचित स्थान मिला है फिर भी युक्ति व प्रमाणोंके आधार पर एक दूसरे की अपेक्षा प्रत्येकको महत्त्वपूर्ण स्थान मिला है। हों तो पहले छन्दों की महत्ता बताने वालों की बात सुन लीजिए।

सर्वप्रथम छन्दोंके कारण उक्तिमें एक विलक्षण चमत्कार व प्रभाव आ जाता है। बड़ीसे बड़ी सभाओंमें भी जहाँ अच्छे-अच्छे वक्ताओंको भी बोलनेका अवसर न मिले, प्रत्येक व्यक्ति कविता सुननेका अवसर तो प्राप्त कर ही लेता है। श्रोतागण गद्यको सुननेके लिए न तो उतने उत्सुक ही होते हैं और न उससे उतने प्रभावित ही। छन्दोहीन या गद्यात्मक रचना का लेखक पाठकों के साथ सर्वदा नहीं बना रह सकता। पर पद्यात्मक रचनाका लेखक और उसकी कृति तो जनताका कण्ठहार ही हो जाती है। प्रेमचन्दजीकी रचना का सन्दर्भ भी शायद ही किसी को याद हो पर कबीर, तुलसी, रहीम और बिहारी केदोहे प्रत्येक हिन्दी-भाषीकी जिह्वा पर बने ही रहते हैं। यह छन्दोंकी ही तो कृपा है। इसके अतिरिक्त छन्दोंके कारण काव्यमें एक संगीतात्मकता आ जाती है। और संगीतात्मकता के नाते काव्यमें प्रभाव अत्यधिक व्यापक हो जाता है। मनुष्यकी तो बात ही क्या, पशु पक्षी भी संगीतसे प्रभावित हो जाते हैं। सबसे बड़ी बात यह है कि वेद भगवान्ने जहाँ अलंकारों की बात तक नहीं पूछी वहाँ छन्दोंको अपना प्रमुख अंग माना है। इस प्रकार की युक्तियों से छन्दोंकी महत्ता सिद्ध की जा सकती है।

अब छन्दोंकी अपेक्षा अलंकार अधिक महत्त्व रखते हैं, इस सिद्धान्तको स्वीकार करने वालोंकी बात सुन लीजिए।......सर्वप्रथम तो अलंकार छन्दों की अपेक्षा इस लिए अधिक व्यापक तथा महत्त्वपूर्ण है कि छन्द तो कुछ ही रचनाओंमें पाये जाते हैं, किन्तु अलंकार शतप्रतिशत रचनाओंमें पाये जाते हैं। क्योंकि काव्यके प्रमुख दो भेदों में एक गद्य में तो छन्दों का नाम तक भी दिखाई नहीं पड़ता। परन्तु अलंकार तो गद्य और पद्य दोनों में समान रूप से अपना अस्तित्व बनाये रहते हैं। इतनी ही नहीं, प्रत्युत वर्तमान युगके छायावाद और रहस्यवादात्मक बेठिकाने समाप्त होने वाली कविताओं से भी छन्दों का बहिष्कार कर दिया गया है। अर्थात् आज तो छन्दों के एकमात्र आधार कविता या पद्य काव्यमें भी छन्दोंको अर्धचन्द्र देकर निकाला जा रहा है और दूसरी ओर अलंकारों का क्या कहना! प्राचीन सभीके सभी अलंकार तो हैं ही, नित्य नवीन भी बनाये जा रहे हैं। ऐसी अवस्था में भला छन्दोंको अलंकारों की अपेक्षा अधिक महत्त्वपूर्ण कैसे कहा जा सकता है?

शेष रहा प्रश्न प्रभावाधिक्य का, सो प्रभाव भी छन्दोंका नहीं प्रत्युत संगीत अथवा लय का है, न कि छन्दोंका। स्मरण रहे कि सूरदास विद्यापति आदि प्राचीन तथा आधुनिक निराला पंत बच्चन आदिके गीतों से छन्दों का कोई सम्बन्ध नहीं है। अतः प्रभाव के नाम पर भी छन्दों की विशेष महत्ता नहीं सिद्ध की जा सकती।

छन्द वेदोंका अंग है, अलंकार नहीं, इस कथन से भी छन्दोंकी विशेष महत्ता सिद्ध नहीं हो सकती। कारण यह है कि अलंकार भले ही वेद का अंग न हो परन्तु वेदके प्रत्येक मंत्रमें कोई न कोई अलंकार विद्यमान है। अतः वेद का अंग न होंने से अलंकारों का कुछ भी बनता बिगड़ता नहीं, साथ ही अलंकार बड़ेसे बड़े आदिकवि महाकविकी रचना या ईश्वरीय रचना और बड़ेसे लेकर साधारण अपढ़ गंवार की भाषा तक में अलंकार ओत प्रोत रहते हैं। अतः हम इस निष्कर्ष पर पहुँचते हैं कि अलंकार ही छन्द की अपेक्षा अधिक व्यापक तथा महत्त्व पूर्ण हैं।

———

प्रियप्रवासके श्रीकृष्ण

[लेखिका सुश्री राजकुमारी शर्मा प्रभाकर]

हिन्दी-साहित्यमें कृष्णभक्ति शाखाके भक्त कवियोंने श्रीकृष्णकी प्रेममयी माधुर्य्यपूर्ण मूर्तिको अपना वर्णनीय विषय मानकर अथाह रसका स्रोत प्रवाहित किया। श्रीकृष्णकी हास-विलास-क्रीड़ा-केलि-पूर्ण मूर्त्ति ही चित्रित की गई। उन्हें इस बातका विचार नहीं था कि राष्ट्र और समाजका रुख किस ओर है और जनताकी लौकिक प्रवृत्ति पर उनके भावोंके तूफानोंका क्या प्रभाव पड़ेगा। रीति-कालमें पूर्ववर्ती कवियोंकी भावनाओंका उलटा ही प्रभाव पड़ा और कृष्णका चरित्र अश्लील चित्रोंका विषय बन गया। जिसके फलस्वरूप सर्व-साधारण जनताके मस्तिष्क और मनको स्वस्थता प्राप्त न हो सकी। शुद्ध भावनाएं विकृतावस्थाको पहुँच गईं। इन कवियोंकी रचनाओंमें श्रीकृष्णकी लोक-धर्म-रक्षक कल्याणकारी मूर्त्ति प्रकट न हो सकी। रासधारी कृष्णके दर्शन ही उपलब्ध हुए।

यद्यपि पूर्वोक्त कवियोंने आध्यात्मिकताकी सृष्टि लौकिक भावनाओंके आधार पर की किन्तु अशिक्षित जनता इतनी गहराईमें गोते लगाकर मोती प्राप्त न कर सकती थी, परिणाम-स्वरूप विलासिता-सागरमें डूब गई और अपने इष्टदेवता को भी वैसे ही रूप में देखने लगी। उक्त रूपमें कृष्णसाहित्य हमें प्रचुर मात्रामें उपलब्ध होता है, किन्तु जिस रूपकी भूख हमें सदियोंसे थी उसकी संतुष्टि आधुनिक कालमें श्रद्धेय महाकवि श्रीयुत पं० अयोध्यासिंह जी उपाध्याय 'हरिऔध' के 'प्रियप्रवास' से हुई।

मध्यकालमें श्रीकृष्ण-चरित्र विषयक अनेक फुटकल कवितायें और छोटे छोटे शृंगारिक काव्य रचे गये, पर 'महाकाव्य' एक भी उपलब्ध नहीं हुआ। इसका कारण यह था कि महाकाव्यके लिये नायकके चरित्रमें अनेकरूपता लानेके लिये जितनी सामग्रीकी आवश्यकता थी उतनी उन भक्त कवियोंको प्राप्त न हुई, क्योंकि उनकी दृष्टि भागवत्के दशम-स्कन्धके गोकुलके गोप गोपियोंसे युक्त रासधारी नटवर या राधाके प्रेमी कृष्ण पर ही अटकी रही। सूरदासजीका कृष्ण मित्र, पुत्र, उत्पाती, चोर, लुटेरा था, यहां तक कि भारी धोखेबाज था, सब कुछ वह अपने कृष्ण में देखते थे। यूं कहिये कि संसारभरके गुण दोषोंका ठेका कृष्णके माथे लगाकर स्वयं खिलखिला कर हंस देते थे। सूरदास कहते हैं—

चोरी करत कान्ह धरि पाये
निसि वासर मोहि बहुत सतायो अब हरि हाथहिं आये।
माखन दधि मेरो सब खायो बहुत अचगरी कीन्ही।

इस प्रकार सूरदासजीने कृष्णके साथ भिन्न भिन्न प्रकारके खिलवाड़ किये। यद्यपि वात्सल्य-रस-पूर्ण बाल्यवर्णनमें सूरदासजी अपने होड़का अन्य कवि साहित्यमें नहीं रखते, पर कृष्णका वैविध्यपूर्ण चित्र तो 'प्रियप्रवास' में दृष्टिगोचर हुआ। प्रथम तो हरिऔधजीका प्रशंसनीय कार्य यह है कि उन्होंने कृष्ण विषयक महाकाव्य रचकर साहित्य के बड़े भारी अभावको पूर्ण किया। मैं यहांपर इस महाकाव्यके दूसरे विशिष्ट गुणोंका वर्णन करती हुई श्रीकृष्णके सम्बन्धमें अपने विचार प्रकट करूंगी।

इस महाकवि ने वर्षों की हमारी आवश्यकताको समझते हुए श्रीकृष्णके विकृत चरित्रको शुद्ध, पवित्र रूप प्रदान किया और उन्हें आदर्श नेता

धर्म-जन-रक्षक कल्याणकारीके रूपमें प्रकाशमें लाया। 'प्रियप्रवास' करुणरस प्रधान महाकाव्य है, इस लिये इसमें श्रीकृष्णका हंसता खेलता, गोप गोपाङ्गनाओंका प्रेमी, माधुर्य्यपूर्ण मुखकमल प्रथम परिच्छेदमें प्रकट होकर फिर छिप जाता है।

'प्रियप्रवास'के श्रीकृष्ण केवल व्रज युवतियोंके ही प्रेमपात्र न थे। बल्कि--

सखा प्यारा सकल व्रजका और वंशका है उजाला।
दीनोंका है परमधन और वृद्धोंका है नेत्र तारा।
बालाओंका प्रियस्वजन और बंधु है बालकोंका।

उपरोक्त पद्य से सिद्ध होता है कि श्रीकृष्ण अपने परोपकारों और त्याग आदिके कारण दीन हीनोंके रक्षक थे। वह अबालवृद्ध वनिताओंके समान संरक्षक और प्रेमी थे। अपने मध्य ऐसे सहृदय सज्जनको पाकर वह क्यों न फूले समाते!

श्रीकृष्ण आदर्श नेता और बन्धु थे। सच्चे परोपकारी परकारण रूप धारण करने वाले, क्योंकि कहा है—

"परित्राणाय साधूनां विनाशाय च दुष्कृताम्।
धर्मसंस्थापनार्थाय संभवामि युगे-युगे ॥"

वह उदार, त्यागी, बलिदानोंके पुतले थे। उन्होंने जातीय भाइयोंकी रक्षाके लिये अग्निकी भीषण ज्वालाओंमें छलांग लगा दी और सच्चे रक्षक कहलाये तथा भाई बन्धुओंके प्राणोंकी रक्षा की।

उनका हृदय निम्नलिखित विशिष्ट गुणोंका केन्द्र था

बातें बड़ी सरस कहते थे बिहारी।
छोटे बड़े सकलका हित चाहते थे।
अत्यन्त आदर सह मिलते बड़ों से थे।
वे थे सहायक बड़े दिन में दुःखोंके॥

श्रीकृष्ण मधुरभाषी और छोटे बड़ों से यथोचित प्रेम और आदरभाव रखते थे। दीन-सहायक और जनप्राणाधार थे।

प्यारके साथ साथ कभी कभी वह गोपोंका कभी नेताके रूप में नेतृत्व भी करते और उन्हें बहुविधि शिक्षाओं द्वारा शासित भी करते और उन्हें प्रेम, त्याग, सहानुभूति, बलिदान, जातीय प्रेम और सभ्यता भी सिखाते थे। अपने गोपोंके लिये हर प्रकारका बलिदान करनेके लिये तैयार रहते थे। यदि कभी गोप गलती करते तो कृष्ण—

माता पिता गुरुजनों वय में बड़ोंको,
होते निरादृत यदि कभी देखते थे।
तो खिन्न हो दुःखित हो लघुको सुतोंको,
शिक्षा समेत बहुधा शासित देते। (?)

वह गोपोंके गुरु, बन्धु, सखा, नेता, और रक्षक सब कुछ ही थे।

श्रीकृष्ण गोपोंके संग बहु भांति के रोचक मनोहर खेल खेलते थे और उन खेल क्रीड़ाओंमें उनकी शक्तिमत्ता और अद्भुत प्रतिभा प्रकट हो चुकी थी। देखिये—

सबल कुशल क्रीड़ावान भी लाड़िलेको,
निज छल बल द्वारा नहीं जीत पाता,
बहु अवसर ऐसे आंख से हैं विलोके,
जब कुंवर अकेले जीतता था शतोंको।

गोपोंको खिलाते, मुदित करते और उनके कष्ट हरते यदि किसीको दुःखी देखते तो तुरन्त उसके गृह में जाकर उनका कष्ट हरते। भूखोंको अन्न देते, रोगियोंको औषधि देते और वितण्डावादको मृदुल वाणीसे दूर करते।

उनका प्रण था—

प्रवाह होते तक शेष श्वासके,
सरक्त रहते तक एक भी शिरा,
सशक्त होते तक एक भी लोमके,
किया करूंगा हित सर्व भूतका॥

कैसा महान व्रत था। सब ही महापुरुषोंका जीवन ही परमार्थके लिये होता है। उनका शरीर समाजके उपयोगके लिये होता है। ऐसे ही

जाति-राष्ट्र प्रेमियोंकी आज भारतको आवश्यकता है जो शरीर में खूनकी बूंद रहते भी देश जातिका उपकार करें। कालिय नागके कारण सारा गोकुल दुःखी हो चुका था। सजीव क्या निर्जीव पदार्थ भी अत्यंत हीन मलीनावस्था में थे। यमुनासे कई कोसों तक कोई भी वृक्ष हरा भरा न था। कोई पक्षी यमुना जल ग्रहण न कर सकता, अन्यथा उसे जानसे हाथ धोने पड़ते। एक दिवस कुछ गोपियोंने गोपों सहित उसका जल पिया तो तत्काल वे सब मूर्छित होगये। उसी समय श्रीकृष्ण ने आकर उनको जीवित किया। देखिये—

बुरा यहांका जल पी अनेकशः
मनुष्य होते प्रतिवर्ष नष्ट थे।
कुमृत्यु पाते इस ठौर नित्य थे
सहस्रशः कीट पतंग और पशु।

अपने जातीय बन्धुओंको दुःखी देखकर भला कृष्ण आंख मूंदकर कैसे रह सकते थे? और उन्होंने कहा—

अतः यह कार्य करूंगा मैं स्वयं,
स्वहस्त में प्राण स्वकीयको लिये।
स्वजाति और जन्म धरा हित मैं,
न भीत हूंगा विपकाल सर्पसे।

सच है, सच्चे देशभक्त स्वदेशभूमि-निमित्त अपने प्राणोंकी परवाह नहीं किया करते।

अग्नि-ज्वालाओंमें ग्वालोंको भस्म होते देख उनका सच्चा नेतृत्व किया और उनको जातीय भावनाओंकी जागृति प्रदानकी—

विपत्तिमें रक्षक सर्वभूतका,
सहाय होना असहाय जीवका।
उबारना संकटसे स्वजातिका,
मनुष्यका सर्वप्रधान कृत्य है।

फिर 'करो या मरो'का आदेश दिया—

"बढ़ो करो वीर स्वजातिका भला,
अपार दोनों विध लाभ है हमें।
किया स्वकर्त्तव्य उबार जो लिया,
सुकीर्त्ति पाई यदि भस्म हो गये।"

आज हमें भी ऐसे 'करो या मरो'के सिद्धान्त को मानने वाले नेताकी परमावश्यकता है, जो हमारा सच्चे अर्थोंमें नेतृत्व करे। श्रीकृष्णके चरित्र पर कलङ्क लगाने वाले आंखें खोलकर इन पंक्तियोंको पढ़ें और ध्यानसे इन पर विचार करें। गोकुलके कृष्णके पश्चात् महाभारतके कृष्णका भी यदि अवलोकन करें तो प्रकट होगा कि सच्चे अर्थों में कृष्ण आदर्श नेता थे।

महावृष्टिके अवसर पर श्रीकृष्णने विश्राम नहीं लिया। जब तक वर्षा बन्द नहीं हुई उन्होंने एक स्वयंसेवकका कार्य किया। घर घर में जाकर वृद्धों और रुग्णोंको गोवर्धनके नीचे लाये। देखिये हरिऔध लिखते हैं—

प्रकृति सात दिनों तक क्रुद्ध थी,
कुछ प्रभेद हुआ न प्रकोप में,
पर सयत्न रहे वह पूर्वलौं,
तनिक क्लान्ति हुई न व्रजेन्दुको।

इस प्रकार सिद्ध हुआ कि 'प्रियप्रवास' के श्रीकृष्ण केवल गोपांगनाओंके प्रेममात्र न थे, बल्कि सच्चे अर्थोंमें जनरक्षक, कल्याणकारी थे। सच ही उनका यह चरित्र बुद्धिवादी समाजकी संतुष्टि निमित्त है। 'प्रियप्रवास'में हम इनके चरित्रमें अनेकरूपता पाते हैं।

गोकुलमें कृष्ण संध्या समय गोधूलिसे गगनको आच्छादित करते हुए, गोप, गोपों के साथ वंशीकी मधुर ध्वनि करते हुए आते थे तो समस्त जनताका स्नेह उमड़ आता था और वह अपने कार्य्यों को छोड़कर अपनी आंखोंको आनन्दित करनेके लिये पथ पर समुद्रकी तरह उमड़ पड़ती थीं। यह उनका नित्य का कार्य्यक्रम था। लेकिन एक दिन इस कार्य्यक्रमका भी अन्त आगया। अक्रूरने आकर रंगमें भंग डाल दिया। क्रूर कंसके संदेशको पाकर जनता आकुल होकर दुःख-उदधिमें गोते लगाने लगी!

कंसकी निष्ठुरता और अत्याचारका ध्यान कर वह सिहर उठती। पर अन्तमें वही हुआ। कृष्ण वापस न लौटे। वे मथुरामें राजनीतिके चक्रमें फंस गये। कंस तो मारा गया, पर उनके सामने विकट समस्याएं उत्पन्न हो गईं।

एक ओर प्रेम था तो दूसरी ओर कर्त्तव्य। मथुराके राजनैतिक मामलोंमें भाग लेना लोकहित की दृष्टिसे आवश्यक था। एक ओर तो व्रजके केलिनिकुंज, यशोदा, गोप गोपाङ्गनाओंकी याद सता रही थी, दूसरी ओर राजनैतिक झमेले खड़े थे।

श्रीकृष्णने लोकहितकी भावनाओं पर व्यक्तिगत स्वार्थोंका बलिदान कर दिया।

'प्रियप्रवास' का आधार श्रीकृष्णका शारीरिक सौन्दर्य या उनकी ग्रामवासियोंके प्रति उपकार-शीलता नहीं, बल्कि उनकी विस्तृत प्रकृति जो कार्य्यावलीकी जननी बनी, किन्तु जिसकी उत्तरोत्तर प्रगतिमें व्रजवासियोंका दुर्भाग्य अमिट अक्षरोंमें अङ्कित था। यद्यपि कृष्ण मथुरा सतत व्रजवासियों की ओर स्नेहपूर्ण दृष्टिपात करते हैं पर उनके जीवनका उद्देश्य कुछ और था—

"है योगी लौ दमन करते लोक सेवा निमित्त
प्यारी २ हृदयतलकी सैंकड़ों लालसायें।

उपरोक्त विवेचनासे स्पष्ट है कि महाकवि हरि-औधजीने श्रीकृष्णका जो रूप चित्रित किया है, वह बुद्धिवादी समाजके मस्तिष्क और मनको स्वस्थता प्रदान करने वाला है।

यद्यपि बुद्धिवादके प्रभावसे हरिऔधजीके सन्मुख श्रीकृष्णका वह स्वरूप नहीं आया, जो हमारी आध्यात्मिक संस्कृतने हिंदु समाजको प्रदान किया था किन्तु जिस आदर्श महा पुरुषकी कल्पना हमारा समाज शताब्दियोंसे कर रहा था, उसका रुप प्रसव कर हिंदी साहित्यको प्रियप्रवासके रूपमें इस महाकविने एक अमूल्य निधि भेंटकी।

हिन्दी का आदि महाकाव्य पृथ्वीराज रासो और उसकी प्रामाणिकता पर विचार

[लेखक — श्री पं० भवानीशंकर जी त्रिवेदी]

कहा जाता है कि पृथ्वीराज रासोके रचयिता चन्दबरदाई अन्तिम हिन्दुसम्राट पृथ्वीराजके सामन्त, सखा और राजकवि थे। इन दोनोंका जन्म एक ही दिन हुआ था और दोनों आकार प्रकार रूप बनावटमें भी एक समान थे।

पृथ्वीराज रासोमें आबूके अग्निकुण्डसे चार क्षत्रिय कुलोंकी उत्पत्तिसे लेकर पृथ्वीराजकी मृत्यु तकका वर्णन है। इस ग्रन्थमें ६६ समय (सर्ग) हैं। और इसमें एक लाख पाठ थे, पर अब २५०० से अधिक किसी भी पुस्तकमें नहीं मिलते। इसमें प्रधानता वीर रसकी है। पर बीच बीचमें शृङ्गार आदि रसोंकी पुट भी पर्याप्त है। इसकी भाषा अपभ्रंश और देश-भाषा डिङ्गल तथा व्रजभाषाका मिश्रित रूप है। इसमें तोमर, नाटक, दोहा, आर्य्या आदि अनेकों छन्दोंका प्रयोग हुआ है।

यह ग्रन्थ कई शताब्दियों तक सर्वथा प्रामाणिक समझा जाता रहा। किन्तु लगभग ५० वर्षोंसे इसकी प्रामाणिकता पर सन्देह किया जाने लगा है। इसको अप्रमाणिक या संदिग्ध कहने वाले विद्वानोंमें महा-महोपाध्याय रायबहादुर श्रीयुत पंडित गौरीशङ्कर

हीराचन्दजी ओझाका प्रमुख स्थान है। उन्होंने इसे अप्रामाणिक सिद्ध करनेके लिये निम्नलिखित युक्तिएं दी हैं:—

१. इसमें दिये गए संवत् अशुद्ध हैं, क्योंकि रासोमें सर्वत्र ११०५ से ११५० तकके संवत् लिखे हैं, पर वास्तवमें पृथ्वीराजका समय १२०५ से १२५० के लगभगका है। कोई भी समकालीन लेखक अपने आश्रयदाताके समयमें ६० या १०० वर्षका अन्तर नहीं डाल सकता।

२. इसमें दी गई बहुत सी घटनाएं भी इतिहास के साथ मेल नहीं खातीं।

३. पात्रोंके नाम भी कल्पित या झूठे हैं। जैसे कि पृथ्वीराज रासोमें पृथ्वीराजकी माताका नाम कमलादेवी लिखा है। किन्तु शिलालेखोंमें और जयनकके पृथ्वीराजविजय नामक संस्कृत काव्यमें उसकी माताका नाम कर्पूरदेवी मिलता है।

४. पृथ्वीराजके बाद होने वाले चंगेज तैमूर आदि व्यक्तियोंके नाम भी मिलते हैं।

५. भाषाकी दृष्टिसे यह ग्रन्थ पृथ्वीराजके समयका नहीं जान पड़ता, क्योंकि इसमें कई विदेशी शब्द भी आ गये हैं जो कि उस समय प्रचलित नहीं हुए होंगे।

६. पृथ्वीराजके राजकवि काश्मीरी पण्डित जयनकने अपने काव्यमें कई अन्य कवियोंके नाम लिखे हैं, पर चन्दवरदाईका नाम नहीं। यदि चन्दबरदाई पृथ्वीराजके समय उसका राजकवि होता तो वह चन्दवरदाईका नाम अवश्य लिखता।

७. जयनकका उक्त 'पृथ्वीराजविजय' काव्य कोई इतिहास ग्रन्थ नहीं, फिर भी उसमें सभी घटनाएं और नाम आदि इतिहासके साथ बिलकुल मेल खाते हैं। तो फिर 'पृथ्वीराज रासो' हीमें सब नाम संवत् घटनाएं असत्य क्यों?

इन सभी युक्तियोंके आधार पर यही प्रतीत होता है कि 'पृथ्वीराज रासो' एक जाली, अप्रामाणिक और पृथ्वीराजके पश्चात्यकालका लिखा हुआ ग्रन्थ है। यह कदापि पृथ्वीराजके समयमें नहीं लिखा गया और न कोई चन्दबरदाई नामका कवि था।

मोहनलाल विष्णुलाल पंड्या तथा बाबू श्यामसुन्दरदास व श्री रामकुमार वर्माने इस पुस्तकको असत्य या संदिग्ध सिद्ध करनेका प्रयत्न किया। पर वे उक्त युक्तियोंको अकाट्य प्रमाणों द्वारा काट न सके। केवल इतना ही कह कर रह गये।

संवत् एकादश सै पंचदह विक्रम साक अनन्द।
तिहिं रिपुजय पुरहरनको भए पृथ्वीराज नरिन्द॥

आदि पद्योंमें 'अनन्द' शब्दका अर्थ ६० है. अतः ६० वर्ष घटा कर लिखे गए हैं। अर्थात् 'पृथ्वीराज रासों' में जो संवत् दिए गए हैं, वह प्रचलित समयसे जान बूझ कर ६० वर्ष पहलेके दिये गये हैं। दूसरी बात यह है कि इसके ग्रन्थमें बहुतसे भाग मिला दिए हैं। इसलिए बादके कवियोंके नाम भी आ गए हैं और कुछ असत्य घटनाएं भी मिल गई हैं। यह कथन कुछ सन्तोषजनक नहीं होता।

श्रीमहामहोपाध्याय गौरीशङ्कर' हीराचन्द ओझा और रासोको असत्य सिद्ध करने वाले विद्वानोंमें प्रमुख महामहोपाध्याय श्रीयुत पंडित मथुराप्रसाद दीक्षित राजगुरुसे इस ग्रन्थकी असत्यता या सत्यका निर्णय करनेके लिए मिले थे। आदरणीय ओझा जीने 'पृथ्वीराज रासो' के कई ऐसे स्थलोंका निर्देश कर जिनमें उन्नीसवीं सदी तकके नाम मिलते थे, अप्रमाणिकताको अभी पुष्ट किया और सरस्वतीमें अपने लेखका उल्लेख किया।

इसी प्रकार श्रद्धेय दीक्षित जीने इस पुस्तकको असत्य और अप्रामाणिक करनेके लिए कई महत्व बताये। किन्तु आपने पंजाब यूनिवर्सिटी पुस्तकालय में 'पृथ्वीराज रासो' की एक फोटो दिखाई, उस फोटोके पृष्ठ वस्तुतः २०० के लगभग होते हैं। लीपि भी प्रचीन है। दीक्षित जीका कथन है कि—

'सत सहस रासो भाणीय'

चन्दके इस कथनानुसार पृथ्वीराज रासके मूल पाठ ७००० थे और इस पुस्तकमें भी ठीक ७००० पाठ हैं। इसमें पृथ्वीराजके बादमें होने वाले किसी भी व्यक्तिका नाम नहीं है और ना ही संवत् का उल्लेख हैं। इस महाकाव्यमें चन्दने कहीं कोई संवत् नहीं लिखा होगा, क्योंकि महाकाव्योंमें संवत् लिखनेका नियम नहीं। जब रामायण, महाभारत आदि महाकाव्योंमें कहीं कोई संवत् नहीं लिखा हुआ तो पृथ्वीराज रासोमें भला चन्द क्यों लिखने बैठा था। अतः सिद्ध होता है कि आज कल अन्यत्र प्राप्त सभी प्रतियां प्रक्षिप्त पाठसे परिपूर्ण हैं क्योंकि उनमें पाठ संख्या भी पांच, दस, पन्द्रह, या बीस हजार तक मिलती है, पर पंजाब यूनिवर्सिटी पुस्तकालयका 'पृथ्वीराज रासो' प्रामाणिक है। उसमें कोई प्रक्षेप नहीं हुआ। अतः इस मूल पृथ्वीराज रासोको जाली अप्रामाणिक या सदिग्ध नहीं कहा जा सकता!

श्रीयुत ओझा जी तथा अन्य विद्वानोंसे निवेदन है कि वह उक्त प्रतिको देख कर निष्पक्ष रूपसे विचार करें और उस पर अपनी सम्मति दें, जिससे जनताका और हिन्दी संसारका कल्याण हो।

गद्य और पद्यका सापेक्ष महत्व

[लेखक — श्री गोपालचन्द जी देवव्रती भ्राता]

'यह व्याकुलता कैसी जीवनमय है ? इसे साधारण लोग नहीं समझ सकते'। इन दिनों इस प्रकारकी खड़ी भाषा लिखना बहुत सहज है। कुछ समय पूर्व 'जै दिन में तुम वहाँ से फिर आयों, तै दिनके लिये कलेउ ले जाओं, तहाँ जाय किसीसे प्रीति मत कीजो, वेग आय अपनी जननी को दरस दीजो तथा वाकु बुलायवे गये तब वह वैष्णव आनाकानी करके दो दिन आयो नहीं।' आदि भाषा लिखना भी एक कठिन आयोजना थी। अब तो एक साधारण पढ़ा लिखा भी चुस्त और संयत भाषामें अपने विचार प्रकट कर लेता है। किन्तु उन दिनों बड़े-बड़े पंडित भी आज जैसी भाषा नहीं लिख सके। वास्तवमें अभी हिन्दी गद्यका आरम्भ ही हुआ था। किसी भाषाके आरम्भ कालमें उतना और उस प्रकारका गद्य लिखना भी बड़ा महत्वपूर्ण कार्य था। जैसे नदीके निरन्तर प्रवाहमें उच्चावच पत्थरों की आकृति समयान्तरमें सुडौल हो जाती है, उसी प्रकार लिखने और बोलनेके प्रवाहमें भाषाओं को सुन्दर और मंजा हुआ रूप मिला करता है। हिन्दी गद्यको भी इसी प्रकारके प्रवाहोंमें से हो कर आजका रूप मिला है।

हिन्दी साहित्यका आरम्भ ईसाकी ग्यारहवीं शताब्दीसे माना जाता है। लगभग ९०० वर्ष की आयुमें हिन्दीने अनेक वायुमण्डलों का अनुभव प्राप्त करके, कई प्रकारके संघर्ष सहकर तथा बहुतसे राजाओं सन्तों और कवियोंका आश्रय पाकर आज इतना समृद्ध रूप प्राप्त किया है। जैसे किसी महापुरुषकी जीवनी अतीव रोचक होती है, उसी प्रकार भाषाओंकी जीवनी भी अत्यन्त आकर्षक होती है। हिन्दी पद्य और हिन्दी गद्यकी उत्पत्ति और विकास का इतिहास प्रत्येक साहित्यप्रेमीके लिये आनन्द, मनोरंजन और ज्ञानका विषय है; पर इसमें हिन्दी गद्यके प्रादुर्भाव और उन्नमनका वृत्तान्त अधिक कुतहलपूर्ण है।

कहा जाता है कि प्रत्येक भाषामें गद्यका प्रचार पद्यसे पीछे होता है। और इसमें बहुत अंश तक सचाई भी है। संसार भरके साहित्यमें आदि ग्रन्थ वेद माने जाते हैं और वे पद्य में हैं। हिन्दी साहित्य की आदि रचनाएं पद्यमें ही हुई हैं। गद्य की सरिता बहुत देरके पश्चात् बही है। यद्यपि पद्य-रचना कालमें भी लोगोंके प्रतिदिनके व्यवहार तो गद्यमें ही होते हैं। किसी भी देश के निवासी पद्यमें बात चीत करते होंगे, यह नहीं माना जा सकता, फिर भी गद्यमें साहित्य रचना का आरम्भ पद्यसे बहुत पीछे होता है। पर एक बात और भी विचारणीय है। पत्रका स्थान साहित्यमें उतना ही महत्वपूर्ण है जितना कि कहानी, उपन्यास और निबन्ध का। आजकल तो पत्र-कलाको बहुत ही आदरकी दृष्टिसे देखा जाता है। तो साहित्यके आदि कालमें अर्थात् पद्य कालमें लोग अवश्य ही पत्र गद्यमें ही लिखते होंगे। इससे यह पता चलता है कि पद्य कालमें भी गद्य रचना और कलापूर्ण गद्य रचना होती रहती है। यदि आज किसी प्रकार हिन्दी साहित्यके आरम्भ कालमें विद्यमान लोगोंके पत्र प्राप्त किये जा सकें, तो पद्य और गद्य साथ-साथ चलते हैं, इसकी पुष्टि हो सके। पर कुछ भी हो हिन्दीका विकास तो पद्यके विकासके बहुत काल पश्चात ही हुआ है।

पद्यसे मानव समाजका हृदय तृप्त होता है और गद्य से मस्तिष्क विकसित होता है। पद्य जीवनका संचार करता है। गद्य उस जीवनको ज्ञानपूर्ण बनाता है। पद्य शीघ्र स्मरण हो जाता है। इसलिये उसका प्रभाव तुरन्त होता है और चिरकाल तक रहता है। गद्यके सामने स्मृति शक्ति अधिक बल नहीं दिखा सकती। अपठित और अल्पपठित व्यक्ति भी पद्य से पूरा लाभ उठा सकते हैं परन्तु गद्य सुपठित व्यक्तियों को ही विशेष लाभ पहुँचाता है। पद्य-रचना की अपेक्षा गद्य रचनाका महत्व अधिक होता है, क्योंकि छन्दोंके कारण पद्यमें कई बातें क्षम्य हो जाती हैं। गद्य रचनामें तनिक सी भी त्रुटि होने पर उंगली उठे बिना नहीं रह सकती। जब लोगोंमें भावनायें प्रबल होती हैं, तब पद्यका प्रचार होता है। और जब ज्ञान—विज्ञानका प्रभाव होता है तब गद्यकी बन आती है। यही कारण है कि पद्य का विकास गद्यके विकाससे पहले होता है। जातियों के पतनके साथ-साथजब किसी भाषाका भी पतन हो जाता है तब उसके स्थान पर जो दूसरी भाषा प्रादुर्भूत होती है उसे बोलने वाली जातियोंमें ज्ञान—विज्ञानका प्रचार हो जाता है। ध्यान रहे कि हमने पद्यका विकास कहा है, उत्पत्ति नहीं, क्योंकि यदि तनिक भी विचार किया जाय तो यह स्पष्ट पता चल जाता है कि किसी नई भाषामें पहले ही पद्य रचना आरम्भ नहीं हो जाती, लोग पहले उसे बोलना सिखाते हैं। पीछे उसमें रचना करते हैं। और वह बोलना गद्य में होता है पद्य में नहीं।

हिन्दी साहित्यके आदि कालमें लोग किस प्रकार की भाषा बोलते थे, उसका रूप ज्ञात नहीं। काव्यकी भाषा बोली से सदा कुछ न कुछ भिन्न होती है। फिर भी किसी समयकी काव्यकी भाषासे उस समयकी साधा-बोलचालकी भाषाका कुछ अनुमान लगाया जा सकता है। चन्दकविके "प्रतहीन पुत्री पंच बंधीकर नचै आशा नदी सपूर जीय मनोरथ संचै।" आदि पद्यों से हमे उस समयकी बोलीका कुछ न कुछ भास हो ही जाता है। प्रतहीन पुत्तरी इतना वाक्यांश तो तो अवश्य ही बोला जाता होगा। आगे क्रिया पद नृत्यतिः 'नचदी या नचै' कोई सा बोला जाता होगा आजकी भाषामें इसे यों कहेंगे :— तत्तहीन पुतली नाचती है। इससे यह स्पष्ट हुआ कि चन्दके समयकी काव्य भाषा वर्तमान भाषाका पूर्व रूप थी। पर इतना स्मरण रहे कि वह भाषा हिन्दी भाषासे पहिलेकी भाषाका अन्तिम रूप भी थी।

महायुद्ध और उसके प्रभाव

[लेखक — श्री० चिरंजीव जी मिश्र व्याकरणाचार्य]

इस विश्वव्यापी महायुद्धका कारण योरुपीय राष्ट्रोंकी साम्राज्यलिप्सा ही है। इंगलैंडने अपना साम्राज्य इतना विस्तृत कर रखा है कि जर्मनी आदि दूसरे योरुपियन राष्ट्र उसे देख कर ललचाते थे तथा अपना साम्राज्य बनानेके लिए निरन्तर प्रयत्न करते रहते थे। यद्यपि वारसाईकी सन्धिके पश्चात् जर्मनीको कुचल दिया गया था तथापि सन् १९३८ तक वह फिरसे इतना शक्तिशाली हो गया कि उसने अपना साम्राज्य विस्तृत करनेके लिए खुलमखुल्ला युद्धकी घोषणा करदी।

हिटलरने एक सितम्बर सन् १९३९ को पोलैंड पर आक्रमण कर युद्धका आरम्भ किया। सतरह सितम्बर को रूसने भी जर्मनीका सहयोगी बन पूर्वकी ओरसे पोलैंड पर आक्रमण कर दिया। २४ सितम्बर को रूस और जर्मनीने पोलैंडको आधा आधा बांट लिया।

इधर फ्रांस और इंगलैडने भी तीन सितम्बर को जर्मनीके विरुद्ध युद्धकी घोषणा कर दी। किन्तु वह आरम्भिक दिनोंमें किसी भी राष्ट्रको हिटलरके पंजेसे बचा न सके, यहां तक कि सन् १९४० ही में हिटलरकी तूफानी सेनाओंने नार्वे, डैनमार्क, हालैंड, बेलजियम और लक्सम्बर्गको अपने अधीन कर फ्रांसकी गवर्नमेन्टको आत्मसमर्पणके लिए विवश कर दिया। फ्रांसकी सरकार पैरिस छोड़ विशी चली गई।

इस समय इंगलैंडकी बड़ी बुरी दशा थी, किन्तु उसकी राजनैतिक चतुरताने तथा अद्भुत धैर्यने उस भयंकरतम वर्षसे भी उन्हें पार कर दिया। सन् १९४१ ही में रूस और जर्मनीमें मनमुटाव हो गया। और २२ जून १९४१ को जर्मनीने रूस पर आक्रमण कर दिया। पहिले पहिले तो जर्मनी की सेनायें विद्युत गतिसे आगे बढ़ती रहीं। किन्तु स्टालिनग्राडमें जाकर वह सेनायें रुक गईं, और क्रमशः उन्हें वापिस हटना पड़ा।

इधर १९४४ में इंगलैंड, अमेरिका और स्वतन्त्र फ्रांस की सेनाओंने पश्चिमी जर्मनी पर आक्रमण कर दिया। इटली इससे पूर्व ही परास्त हो चुका था। फलतः जर्मनीकी सेनायें पूर्व पश्चिम और दक्षिण तीनों ओरसे घिर गईं, अतः पीछे हटनेके सिवाय और कोई चारा उनके पास न था। जर्मन सैन्य वीरतापूर्वक लड़ते लड़ते पीछे हटकर बर्लिन के आस पास तक पहुँच गये।

रूसी सैनिक सर्वप्रथम बर्लिनमें प्रविष्ट हुए बर्लिनकी गलियों और बाजारोंमें कई सप्ताहों तक तुमुल संग्राम होता रहा। अन्तमें सन् १९४५ के मई मासमें हिटलरके सहसा लुप्त हो जानेके साथ यूरोपका महायुद्ध समाप्त हुआ। किन्तु एशियामें जापान अभी भी साहसके साथ लड़ रहा था। इस के साहसका किसी प्रकार अन्त होते न देख अमेरिकन सैनिकोंने हिरोशिमा नगर पर परमाणु बम फेंक उसे धूलिसात कर दिया। दो लाखके लगभग जनता इन बमोंके कारण देखते ही देखते मृत्युकी ग्रास हो गई। परमाणु बमने जापानकी कमर तोड़ दी और अन्ततः उसने भी शस्त्र डाल दिए। इस प्रकार अगस्त १९४५ तक वर्तमान विश्व व्यापी महायुद्ध निरन्तर छः वर्ष तक सहस्रों मानवों की बलि दे कर अतुलित धन सम्पत्तिका संहार कर समाप्त अवश्य हो गया, किन्तु समाप्त होनेके पश्चात उसका आतंक विश्व पर और भी अधिक छा गया।

संसारमें कोई वस्तु ऐसी नहीं, जो एकान्ततः हानिकारक या लाभदायक ही हो !

"जड़ चतन गुण दोष मय विश्व कीन्ह कर्तार" के अनुसार संसारकी प्रत्येक वस्तु गुण और दोष दोनोंसे युक्त है। फलतः वर्तमान युद्धका जहां एक ओर घृणित और भयंकर रूप है, वहां दूसरी ओर हितकर स्वरूप भी अवश्य है। अतः यहां पर प्रथम इस युद्धके लाभों पर कुछ प्रकाश डाला जाता है।

महायुद्धसे पूर्व संसारमें बेकारीका बोलबाला था। भारत तो विशेष रूपसे इस महा रोगका शिकार हो रहा था। ग्रेजुएट तक बूट पालिश करते नजर आ रहे थे। महायुद्धके कारण बेकारी की समस्याका समाधान हुआ।

महायुद्धसे पहिले किसानोंकी बड़ी बुरी दशा थी। दो डेढ़ रुपये मन तक गेहूँका भाव गिर गया था। अमेरिकामें लाखों टन गेहूँ की खेती केवल इसी लिए जला दी गई कि मण्डियोंमें बिकने पर उसकी उठवाई भी प्राप्त नहीं हो सकती थी। ऐसी दशामें भारतीय किसानोंकी दशा तो अत्यन्त ही शोचनीय हो रही थी। महायुद्धने कृषिजन्य पदार्थोंके मूल्यमें अत्यन्त वृद्धि कर दी और इस प्रकार किसानोंकी अवस्थाको बहुत कुछ सुधार दिया।

विलास सामग्री तथा रेशमी वस्त्रादि फैशन की अन्य वस्तुओंके अत्यधिक सस्ता होनेके कारण मध्यम वर्ग फैशनका पुजारी विलासिताओंका दास और फिजूलखर्च होता जा रहा था। युद्ध युगमें रेशमी वस्त्रों आदि फैशनकी वस्तुओंका मूल्य न केवल दस बीस गुणा बढ़ गया, प्रत्युत ऐसी वस्तुएं अप्राप्य भी हो गईं। और परिणाम-स्वरूप मध्यम वर्गके फैशनमें कुछ न कुछ कमी अवश्य आ गई।

इस महायुद्धने लोगोंको स्वावलम्बी मितव्ययी तथा कष्टसहिष्णु बना दिया, वस्त्रके अभावमें बहुतसे लोग खादी पहनने लगे और आटा पीसना आदि बहुतसे कार्य भी हाथोंसे होने लगे। भारत में प्रत्यक्ष रूपसे युद्ध नहीं आया, पर जिन देशों में साक्षात् युद्ध लड़ा जाता रहा, वहांके लोगोंमें पारस्परिक सद्भाव और प्रेमकी भावनायें खूब विकसित हुईं, क्योंकि विपत्तिमें लोग एक दूसरेके साथ मिल बैठना और सहानुभूति करना सीख जाया करते हैं।

वैज्ञानिक आविष्कारोंमें भी आश्चर्यजनक उन्नति हुई। यद्यपि इन आविष्कारोंका उद्देश्य विनाश ही था, पर अब उन्हीं आविष्कारोंसे निर्माण कार्यकी आशा की जारही है। परमाणु-बम लाखों व्यक्तियोंको कुछ ही घन्टोंमें समाप्त करनेकी भावना से बना था, पर अब उसी परमाणु-बम्मसे कई विश्व कल्याणके कार्य सम्पन्न होनेकी सम्भावना है।

इस प्रकार हमने देखा कि वर्तमान महायुद्धके कई शुभ प्रभाव हुए हैं। किन्तु ये शुभ प्रभाव दुष्प्रभावोंके सामने नगण्यसे हैं। अतः यहां पर कुछ एक दुष्प्रभावोंका भी उल्लेख करदेना आवश्यक है।

इस महायुद्धके कारण न केवल युद्धक्षेत्रमें लड़ने वाले सैनिक ही, प्रत्युत लाखों निर्दोष निरीह नर नारी बालक वृद्ध पशु पक्षी भी सहसा काल के गालमें समा गए। इस महायुद्धने असंख्य प्राणियोंकी बातकी बातमें बलि ले ली। इस प्रकारका नर संहार बिना किसी विशेष लक्ष्य प्राप्तिके ही हो गया।

संसारके अतुल खनिज पदार्थ जो कि विश्व-हितके लिये अत्यन्त उपयोगी सिद्ध हो सकते थे समुद्र गर्भमें समा गये या उनका अन्यान्य प्रकारोंसे नाश हो गया।

इस महायुद्धने रिश्वत और घूंसखोरीके बाजार गर्म किये। लोगोंको झूठ बोलना, धोखा देना और लूटना सिखाया, कोई भी व्यापारी या आफिसर इस प्रकारके कुकर्मोंसे शायद ही बच पाया होगा।

बेकारीकी समस्याका कुछ समयके लिये समाधान अवश्य हुआ पर युद्धके समाप्त होते ही वह

समस्या पहलेसे भी भयंकर रूपमें संसारके सम्मुख उपस्थित हो गई। सैनिक कार्योंसे व विभिन्न कल कारखानोंके कार्योंसे पृथक किये गए लाखों व्यक्ति जीविकाके अभावमें इधर उधर भटकते दिखाई देने लगे हैं। इस महायुद्धने कई बड़े बड़े आफिसरोंको अत्यन्त ऊंचा उठाकर स्वर्गमें पहुँचा एक दम नीचे ला गिराया है, नरकमें ढकेल दिया है।

युद्धक्षेत्र या युद्धग्रस्त देशोंमें शस्त्रास्त्रोंके कारण तो लाखों व्यक्ति मारे गये ही थे, पर इधर युद्ध-जन्य अकालके कारण भी लाखों व्यक्ति मर चुके हैं, मर रहे हैं और मरने वाले हैं।

युद्धकी कृपासे अनेकों राष्ट्रोंके पारस्परिक सम्बन्ध तो बिगड़ ही गए, साथ ही इन देशों की साम्पत्तिक, भौतिक तथा मानवीय हानियोंकी तो कोई कल्पना भी नहीं कर सकता।

युद्धके कारण संसारका कोई भी देश, जो पहले परतन्त्र था स्वतन्त्र तो न हो पाया, किन्तु इसके विपरीत कई एक स्वतन्त्र राष्ट्र परतन्त्रताके पाशमें बन्ध गये। वैज्ञानिक देशोंमें सर्वश्रेष्ठ जर्मनीके पतनका किसे दुःख न होगा, 'एशियाके इंगलैंड' जापानकी पराजय केवल जापानकी पराजय नहीं, प्रत्युत सम्पूर्ण एशियाकी ही पराजय समझी जानी चाहिये।

संसारके सभी देशोंको युद्धके इन छः वर्षोंमें जिन अकल्पित कष्टोंका सामना करना पड़ा, उन का तो स्मरण होते ही प्रत्येक प्राणी सिहर उठता है।

इसके अतिरिक्ति युद्ध समाप्त हो कर भी तो अभी समाप्त हुआ दिखाई नहीं देता। विपत्तियोंके पहाड़ तो युद्ध समाप्तिके पश्चात् अधिक और विशाल रूपमें जनता पर गिरने लगे हैं। साथ ही निकट भविष्यमें एक और तीसरे महायुद्धकी सम्भावना बलवती होती जा रही है। देखें, अभी विश्वको और कितने कष्टोंमेंसे निकलना है।

———

भारतीय नाटक साहित्यकी एक झलक

[लेखक — श्रीयुत श्यामचन्द जी विशारद प्रभाकर]

भारतीय नाटककी उत्पत्ति और विकास

प्राचीन मतमें इन्द्र आदि देवताओंकी प्रार्थना पर ब्रह्माने नाट्य-वेद नामक पञ्चम वेदकी रचना की। ऋग्वेदसे पाठ, सामवेदसे गान, यजुर्वेदसे अभिनय और अथर्ववेदसे रस लिया। शिव और पार्वतीने ताण्डव और लास्यप्रधान नृत्य प्रदान किया, अभिनयका भार भरत मुनिको मिला और उनके सौ पुत्रोंने अभिनय किया।

आधुनिक विद्वानोंके दो मत हैं। मैक्समूलर, लेवी, हर्टेल आदिका मत है कि नाटकका आरम्भ ऋचाओंके गानोंसे हुआ, इसका मूल रूप वैदिक संवाद है। आगे चलकर धार्मिक यात्राओं और जागरणके अवसर पर होने वाले गीत-नाट्य इसके विकसित रूप हुए। दूसरे विचारके विद्वानोंमें रिजवेका कहना है कि नाट्यका आरम्भ वीरोंकी पूजासे हुआ है, मृत आत्माओंकी प्रशंसाके लिए नाच-गानकी प्रथा पुरानी है। कुछ लोग सामाजिक नृत्य और गीतको ही नाटकका कारण मानते हैं। प्रो० हिलेब्रमका भी यही मत है।

भारतवर्षमें धर्म, समाज और लोकमें इतना अन्तर नहीं है, जितना विदेशी विद्वान मानते हैं, इसलिए किसी मतको प्रधानता नहीं दी जा सकती। पिशल साहबने नाटकोंकी उत्पत्ति कठपुतलियोंके नाचसे मानी है। सूत्रधार और स्थापक शब्दोंने इस विद्वानको ऐसा सोचनेके लिए प्रेरित किया। उन्होंने छाया-नाटकका भी उल्लेख किया है। कीथ इसका विरोध करता है। छाया-नाटक देरकी चीज है। सूत्रधार शब्द भी भ्रामक है।

वास्तवमें भारतीय नाटकोंकी उत्पत्ति वैदिक कर्मकाण्ड और धार्मिक नृत्यसे हुई तथा काव्योंने उसे विकसित किया। नाटक सभ्यताका अंग है और धर्म तथा सभ्यताका बहुत पुराना सम्बन्ध है। भवभूतिके उत्तररामचरितकी प्रस्तावनासे पता लगता है कि धार्मिक अवसर पर नाटक खेले जाते थे।

भारतीय नाट्यकलाकी प्राचीनता

भारतमें सबसे पहले नाटक कब बने, यह कहना कठिन है। वेदोंमें नाट्य-साहित्यकी सामग्री है, पर नाटकके रूपमें उस सामग्रीका प्रयोग उस युगमें हुआ हो, इसका कोई प्रमाण नहीं। ईसासे चार सौ वर्ष पूर्व पाणिनि के सूत्रोंमें कृशाश्व और शिलालिन् नामके नट-सूत्रकारोंका उल्लेख है।

पातञ्जल महाभाष्यमें, जिसका रचना-काल एक सौ वर्ष ईसा-पूर्व है कंसवध और बलिबंधनका उल्लेख है। विनयपिटक बौद्ध ग्रन्थके चुल्लवग्गमें नाटक देखनेके अपराधमें दो भिक्षुओंको विहारसे निर्वासनके दण्डकी बात लिखी है। जैन कल्पसूत्रों में लिखा है कि नाटक देखनेके अपराध पर एक साधुको गुरुने डांटा था।

भरत मुनिके नाट्यशास्त्रका समय तो निश्चित नहीं है, पर है वह प्राचीन लक्षण-ग्रन्थ। इसमें भी दो नाटकोंके नाम आते हैं। उसके बहुत पहले नाटकोंका प्रचार रहा होगा। वाल्मीकीय रामायण और हरिवंशपुराणमें नाटकोंके खेले जानेका वर्णन है। कालिदासकी तिथि पर नाटकोंकी प्राचीनता निर्भर है, जैसा कि कई विद्वान मानते हैं। यदि कालिदासका समय ईस्वी सन्‌के आरम्भके आस-पास मान लें, तो शकुन्तला जैसे विकसित नाटकसे पहले अनेक नाटक रचे गये होंगे। स्वयं कालिदास

ने भास और कविपुत्र आदि अपने पूर्वजोंका नाम दिया है। सरगुजा रियासतकी रामगढ़ पहाड़ीमें एक प्राचीन प्रेक्षागृह है। इस प्रेक्षागृहकी चित्रकारी नाट्यशास्त्रके अनुसार है। इसके पासकी गुफामें इस सम्बन्धका लेख ईसासे तीन सौ वर्ष पूर्वका है। जो भी हो भारतीय नाट्यकला ऐतिहासिक प्रमाणोंके आधार पर भी बुद्धसे पहलेकी है।

संस्कृत नाटक

यद्यपि संस्कृत नाटककारोंमें कालिदासका स्थान सबसे ऊंचा है, परन्तु उनसे पहिले भी कई प्रसिद्ध नाटककार हो गये हैं, जैसे अश्वघोष, भास, शूद्रक, सौमिल्ल, कविपुत्र आदि। पहले इन नाटककारोंका नाम मात्र ही लोगोंको मालूम था परन्तु सन् १९१२में गणपति शास्त्रीने स्वप्नवासवदत आदि भासके तेरह नाटकोंकी खोज की। प्रोफेसर लूडर्सने अश्वघोषके नाटकोंके कुछ अंश ढूंढ़े हैं। शारिपुत्र प्रकरण अश्वघोषका ही नाटक है। शूद्रकका मृच्छकटिक बहुत प्रसिद्ध है। यह छठी शताब्दीमें लिखा गया है। कालिदासके तीन नाटक मिलते हैं—मालविकाग्निमित्र, विक्रमोर्वशीय और अभिज्ञानशकुन्तला। विशाखदत्तने पांचवीं सदीमें मुद्राराक्षस नामक नाटक लिखा। श्रीहर्षकी रत्नावली और प्रियदर्शिका नाटिकायें तथा नागानन्द नाटक प्रसिद्ध हैं। कालिदासके समकक्ष भवभूतिके तीन नाटक महावीरचरित उत्तररामचरित और मालतीमाधव बहुत लोकप्रिय हैं। इनका समय आठवीं शताब्दी माना जाता है। नवीं शताब्दीमें भट्टनारायणने वेणीसंहारकी और मुरारिने अनर्घराघवकी रचना की। दशवीं शताब्दीमें राजशेखर ने मयूरमंजरी, विद्धशालभञ्जिका, बालरामायण और बालभारतकी रचना की। ग्यारहवीं शताब्दी में दामोदर मिश्रने हमन्नाटक, कृष्ण मिश्रने प्रबोध चन्द्रोदय तथा क्षेमेश्वरने चण्डकौशिककी रचना की। जयदेवने प्रसन्नराघव और रूपस्वामीने विदग्धमाधव तथा ललितमाधव लिखे हैं।

दिङ्नागकी कुन्दमाला भी प्रसिद्ध है। भरत मुनिके नाट्यशास्त्र, अग्निपुराण, धनन्जय कृत दशरूपक तथा साहित्यदर्पणमें नाटकोंकी विवेचना की गई है। तेरहवीं शताब्दीमें राजनैतिक अशान्ति और देशभाषाओंका प्रभुत्व होनेसे संस्कृतमें नाटक रचनाकी इतिश्री हो गई। जिन संस्कृत नाटकोंका हिन्दीमें अनुवाद हुआ है, उनसे हिन्दी साहित्यकी वृद्धि हुई है।

हिन्दी को संस्कृत और प्राकृत नाटकों का उत्तराधिकार मिला था, परन्तु (१) मुसलमानोंके आक्रमणसे इस देश पर कुछ ऐसा निरुत्साह छा गया था कि उस उत्तराधिकारका कोई प्रयोग नहीं किया गया। (२) इस्लाममें अनुकरणकी प्रवृत्ति को प्रोत्साहन दिया गया है; इसलिये उसके प्रभुत्व के समयमें नाटकको कोई प्रोत्साहन नहीं मिला। नाटकमें गद्यकी प्रधानता होती है और हिन्दीमें गद्यका रूप बहुत आगे चलकर १९वीं शताब्दीमें स्थिर हुआ। इन्हीं कारणोंसे भारतीय नाटकोंकी लड़ी टूटी हुई दिखाई देती है; परन्तु उस समयमें नाटकोंका एकान्त अभाव नहीं था। बिहारके ज्योतिरीश्वर ठाकुर उमापति उपाध्यायने १४वीं शताब्दीमें संस्कृतमें नाटक लिखे थे।

हिन्दीमें सत्रहवीं शताब्दीमें सबसे पहले नाटक लिखे गये। इनका विषय शान्तरस था। जैसे कवि मुकुन्दाचार्यके नाटकका अनुवाद आगराके बनारसीदासने सं० १६९३ में 'समयसार'के नामसे किया था। प्राणचन्द चौहानने १६६७में 'रामायण महानाटक' पद्योंमें लिखा। देवने 'देवमाया-प्रपंच' लिखा है। १६८०में हृदयरामने हनुमन्नाटकका अनुवाद किया।

संस्कृतके 'प्रबोधचन्द्रोदय' नाटकका कई लेखकों ने अनुवाद किया, जिनमें महाराज यशवन्तसिंह और ब्रजवासीदास मुख्य हैं। भारतेन्दुजीने पाखण्ड विडम्बनामें कुछ अंश अनुवाद करके लिया है और प्रसादजीकी कामयानी पर भी इसीका प्रभाव है।

नेवाज कविने शकुन्तला नाटकका अनुवाद पद्योंमें किया है। बांधवगढ़ (रींवा) के राजा विश्वनाथसिंहने हिन्दीमें सबसे पहले आनन्दरघुनन्दन नाटक लिखा है। भारतेन्दुजीके पिता गिरिधरदासने 'नहुष नाटक' नामक मौलिक नाटक लिखा है। इनका जन्म सं० १८६०में हुआ था। राजा लक्ष्मणसिंहने शकुन्तला नाटकका बहुतही अच्छा अनुवाद किया है।

भारतेन्दुके पूर्वके नाटक अधिकांशमें अनुवाद थे, उनका विषय धार्मिक या पौराणिक होता था; उनकी भाषा ब्रजभाषा थी तथा उनमें पद्य की ही प्रधानता थी।

भारतेन्दुजीने जब साहित्यिक जीवनमें प्रवेश किया तो देखा कि अंगरेजी नाटकोंका काफी प्रचार हो गया है और बंगाली नाटकों पर उनका काफी प्रभाव पड़ रहा है। भारतेन्दुजी को अंगरेजी, बंगला और संस्कृतका काफी ज्ञान था, उससे उन्होंने लाभ उठाया। उनके नाटक न तो बिल्कुल प्राचीन पद्धति पर हैं और न नये सांचे में ढले हैं। समय के अनुसार उनके कथानकोंमें काफी नवीनता आ गई थी; परन्तु पात्रोंके चरित्रका विकास नहीं हो सका। इसका कारण यह है कि पात्रोंको पहलेसे ही अच्छा या बुरा मान लिया गया। उनको अन्तर्द्वन्द्वका अवसर नहीं मिला। जैसे उन्होंने स्वयं लिखा है कि शृंगार, हास्य, कौतुक, समाज संस्कार और देशवात्सल्यको ही उन्होंने स्थान दिया है। अतः नाटककारके रूपमें भी आप उसके पिता हैं।

भारतेन्दुजीके नाटक अनुवाद और मौलिक दोनों हैं। आदर्शवादके साथ साथ सामाजिक दशा का वर्णन भी है। हास्य विदूषक तक सीमित नहीं; अपितु वस्तुमें व्याप्त हो गया है। इनके नाटकों पर पश्चिमका भी प्रभाव पड़ा; परन्तु उनकी आत्मा भारतीय ही रही।

भारतेन्दुजी पर आक्षेप करने वालोंका कहना है कि उन्होंने अपने नाटकोंमें (१) देशभक्ति और (२) भारतीय नारीके विरुद्ध घटनायें दिखाई हैं, (३) दुःखान्त नाटक लिखा है, (४) प्रकृतिका अच्छा वर्णन नहीं किया और (५) कालका ध्यान नहीं रखा। इसमें कोई सन्देह नहीं कि भारतेन्दुजी के ग्रन्थों में कहीं कहीं त्रुटियां हो सकती हैं; परन्तु उनकी देश-भक्ति पर आक्षेप नहीं किया जा सकता। अंगरेजी राज्यकी प्रशंसा उन्होंने व्यवस्थाके लिये की है। नीलदेवीको मुसलमानी दरबारमें नाचना पड़ा। इससे मर्यादा इसलिये भंग नहीं हुई क्योंकि इसका उद्देश्य अच्छा है। पद्मावतीने भी आपत्तिकालमें मर्यादा तोड़ी थी। भारत दुर्दशा नाटकको दुःखान्त करके भारतेन्दुजी ने जनता को जागृत करने का यत्न किया है। प्रकृति चित्रणमें उन्होंने वस्तुतः सफलता नहीं पाई। केवल नगरका ही वर्णन दिया है; पर यह भी प्रकृतिका ही एक स्वरूप है। हां, गङ्गाका हरिश्चन्द्रके समयमें दिखाना ऐतिहासिक दोष है। उनके लिखे नाटक ये हैं—(१) विद्यासुन्दर (२) रत्नावली (३) पाखण्ड विडम्बना (४) वैदिकी हिंसा हिंसा न भवति (५) धनंजय-विजय (६) प्रेम योगिनी (७) सत्य हरिश्चन्द्र (८) मुद्रा राक्षस (९) कर्पूर मंजरी (१०) विषस्य विषमौषधम् (११) चन्द्रावली (१२) भारत दुर्दशा (१३) भारत जननी (१४) नीलदेवी (१५) अंधेरनगरी (१६) सती प्रताप।

यद्यपि हिन्दी का नाटक साहित्य नवीन युगकी देन है, तथापि उसमें भी नये और पुराने का अन्तर हो गया है। इन दोनों को मिलानेवाली शृंखला बहुत क्षीण है। इस काल में रवि बाबू और द्विजेन्द्र लाल रायके अनुवादोंकी प्रधानता रही। गद्यकी ओर झुकाव बढ़ा। रवि बाबूके नाटक अधिक भावात्मक और राय महोदयके ऐतिहासिक हैं। मौलिक नाटकोंमें कुछ साहित्यिक हैं और कुछ पारसी रंगमंचके लिये लिखे गये नाटकोंके ढंग पर। मौलिक नाटकोंमें मिश्रबन्धुओंका 'नेत्रोन्मीलन', बद्रीभट्ट कृत 'दुर्गावती', 'चन्द्रगुप्त', 'बेनचरित्र' और 'चुंगीकी उम्मेदवारी', रायदेवीप्रसाद पूर्ण कृत 'चन्द्रकला

भानुकुमार', मैथिलीशरण कृत 'चन्द्रहास' तथा पं० जगन्नाथप्रसाद चतुर्वेदी कृत 'मधुर मिलन' हैं। नाटक कम्पनियोंके लिये लिखे गये नाटकोंमें नारायणप्रसाद बेताब कृत महाभारत, पं० राधेश्याम कथावाचक कृत वीर अभिमन्यु आदि प्रसिद्ध हैं। पं० हरिकृष्ण जौहर और आगा हश्रने भी नाटक लिखे। इन नाटकोंमें लोकरुचिका अधिक ध्यान रखा गया है। लाला सीताराम और सत्यनारायण कविरत्नने संस्कृतके नाटकोंका सुन्दर अनुवाद किया।

नवीन युगके नेता 'प्रसाद' जी और उनके नाटक

हिन्दी-नाटकका यौवन-काल प्रसादजी से आरम्भ होता है। प्रसादजी के समय तक हिन्दी नाटकमें काफी परिवर्तन हुए। पद्य से गद्यकी ओर झुकाव हुआ, फिर पद्य व्रजभाषा का और गद्य खड़ी बोलीका रहने लगा। प्रस्तावना आदि की अवहेलना हुई और विषय भी धार्मिक से सामाजिक और ऐतिहासिक हो गये। इसके साथ ही दैवी सहायता की भावना दूर हो गई। आदर्शवादिता हटी और संघर्ष को स्थान मिला। भीतर और बाहरी दोनों संघर्ष नाटककी मुख्य विशेषता बन गये। चरित्रके विकासका अवसर आया। प्रसादजी के नाटकोंमें अच्छा संघर्ष है। व्यक्तियोंसे लेकर संस्कृतियों तक का तुमुल संघर्ष हमें दिखाई पड़ता है।

प्रसादजी के साथ ही हिन्दी नाटकोंमें अन्तर्वेदनाका प्रादुर्भाव हुआ। उन्होंने इतिहासके तथ्योंमें जीवनकी दार्शनिक समस्याओं पर बड़ी भावुकताके साथ प्रकाश डाला है। उनके गीत वेदनासे पूर्ण हैं। उनके अतीतके चित्रोंमें रहन-सहन, शिष्टाचार, वार्तालाप आदिका पूरा पता चलता है। उन्होंने स्त्रियोंको भी बहुत महत्त्वपूर्ण स्थान दिया है। उनके स्त्री पात्रोंमें त्याग, तपस्या और बलिदानकी भावना है। पुरुष पात्र भी ऊंच-नीच सब तरहके हैं। प्रसादजी के पात्र सजीव हैं, तथापि भाग्यवाद और दार्शनिकताकी छाया उन पर पड़ी हुई है। करुणा और क्षमाकी सर्वत्र प्रधानता है। उन पर बौद्ध धर्मकी स्पष्ट छाप है।

प्रसादजी के नाटकों की कथायें पूर्व युगोंकी हैं। करुणालय (गीत नाट्य) एक वैदिक घटनाका रूपान्तर है। राजश्री हर्ष और स्कन्दगुप्त भी अतीत युगोंकी वस्तु है। इसी प्रकार जनमेजय, अजातशत्रु, चन्द्रगुप्त और स्कन्दगुप्त भी अतीत युगोंकी वस्तु हैं। इनमें नाटकीय द्वन्द्वको सामग्री है। इनके नाटकोंको देखकर यही जान पड़ता है कि वे सभ्यताके विकास का एक क्रम उपस्थित कर रहे हैं। 'करुणालय' में करुणाराज्य, 'राजश्री' में त्याग, ध्रुव-स्वामिनीमें नीति की व्याख्या और 'जनमेजय' में विश्वकी एकान्तता दीखती है। इनमें स्त्री पात्रों की प्रधानता दीखती है। आगे चलकर नाटकोंमें जटिलता आ गई है। चन्द्रगुप्तमें ब्राह्मण चाणक्य का पौरुष प्रबल होकर आया है। प्रसादजी के पात्रोंमें एक व्याकुलता या एक हलचल दिखाई पड़ती है।

उनका काल्पनिक नाटक कामना है जो वास्तव में अभौतिक और आचरणके भावात्मक तत्त्वोंका रूपक है। प्रसादजी के नाटकोंसे उनके अध्ययन तथा संस्कृति और उद्देश्य के प्रति उनके प्रेमका पता चलता है। उनके पात्रोंकी भाषा सदा एकसी रहती है।

रवि ठाकुरकी एक रचनाका गद्यानुवाद—

निर्झरका स्वप्न भंग

[श्री रवि ठाकुर की यह विख्यात रचना रहस्यवादका उत्तम उदाहरण मानी जाती है। और इससे स्पष्ट होता है कि रहस्यवादी रचनामें अस्पष्टताकी उपस्थिति आवश्यक नहीं हैं। काव्य जगत्में रहस्यका अर्थ 'उलझन' नहीं, गहराई है। जो, जितना गहरे उतर सकता है, वह उतना ही रसास्वादन कर सकता है]

आज इस प्रभातमें रविकी किरणोंने प्राणोंका स्पर्श कैसे किया है, गुफाके अंधकारमें पक्षियोंके गीत कैसे आगये हैं? इतने दिनोंके बाद जागे हैं,—जल उफन रहा है, प्राणोंकी वासना, प्राणों का आवेश रोके नहीं रुकता, भूधर कांप रहे हैं, शिलाएं खिसक रही हैं और फेनिल सलिल दारुण रोषसे गर्ज रहा है, भूधरका हृदय टूटना चाहता है और प्रभातकी किरणोंसे पागल सलिल उल्लासके साथ उछल कर संसारमें फैल जाना चाहता है।

विधाता! इतने पाषाण कैसे? यह चारों ओर इनका बन्धन कैसा, यह बन्धन तोड़ डाल और प्राणोंकी साधना सिद्धकर, लहरों पर लहरें उठा और आघात पर आघात कर प्राण जब मतवाले हो उठे, तो कैसा अंधेरा और कैसे पत्थर! वासना ही जब उफन आई, तब संसारमें किसका भय?

मैं पर्वतोंकी इस काराको तोड़कर करुणाकी धारा प्रवाहित कर दूंगा और जगत्को प्लावित करनेके लिये पागलकी भांति गाता फिरूंगा, केश खोल छितरा कर फूल बहाकर और इन्द्रधनुषी पंख उड़ाकर रविकी किरणोंमें अपनी मुस्कान मिला दूंगा और प्राण ढाल दूंगा।

शिखरसे शिखर पर दौड़ूंगा, खिल खिल हसूंगा कल कल गाऊंगा और ताल पर ताल दूंगा, नदी बनकर, नये नये देशोंकी वार्ताएं लेकर हृदयकी बात कहते २ गीत गाते २ बह जाऊंगा, जितना जीवन दूंगा, उतना ही जीवन प्रवाहित होगा और वह समाप्त ही न होगा। इतनी कथाएं हैं, इतने गान हैं, इतना जीवन है, इतनी साध है, इतना सुख है और प्राण! सवेरा होगया।

मेघका गर्जन लेकर वर्षा आएगी, मदिर नयनोंसे वसन्त मुस्करायगा, काश और कुसुम खिलेंगे, मेरे किनारे हंसीसे भर जाएंगे। कभी दरपर वंशी बजेगी, मलय वायु मूर्च्छित हो जाएगा मेरा हृदय कम्पित होगा और काया सिहर उठेगी, इतने सुख कहां हैं? इतने रूप कहां हैं? इतने खेल कहां हैं? यौवन आवेगमें न जाने किसके पास वह जाऊंगा, मैं अगाध आशा और असीम वासनाको लेकर संसार देखना चाहता हूं, चराचर को प्लावित कर बहजाना चाहता हूं, बह सकता हूँ जितने देश हैं, डुबा सकता हूँ, यही मेरे प्राणोंकी साध है।

न जाने, आज क्या हुआ, अकस्मात् प्राण जग पड़े हैं, दूरसे महासागर का संगीत सुन पड़ रहा है, बुलाता है, बुलाता है, जैसे सिन्धु मुझे बुलाता है। मेरा हृदय उसका आह्वान सुन रहा है। "कौन आयगा कौन आयगा पाषाणोंका बन्धन तोड़कर कठोर धरतीको सींचकर वनादिको श्यामल बनाकर और फूल खिलाकर सारा जीवन ढालकर संसारके हृदयको शीतलकर मेरे प्राणोंमें कौन समाना चाहता है आज?

मैं जाऊंगा देश, नहीं नहीं, संसारमें प्राण भरकर, ढालकर अ ग । ग.र उद्विग्न

क्या युगधर्मका अभिव्यंजक साहित्य ही सत्साहित्य है ?

[लेखक — पं० बालकृष्ण शर्मा 'नवीन']

युग-धर्मके प्रभावसे यद्यपि साहित्य न तो अस्पृष्ट रहता ही है और न रक्खा ही जा सकता है, तथापि साहित्यमें युग-धर्मका वही तत्व श्रेयस्कर है, जो शाश्वत, सनातन: चिरकल्याणकर होता है। मानव एक युगका नहीं, युग-युगका नहीं, कल्पों एवं मन्वन्तरोंका सञ्चित सांस्कृतिक प्रतीक है। अतः साहित्यकारोंको युगविशेषके क्षणिक आवेशसे पूर्णतः अभिभूत नहीं होना चाहिये। आज इस प्रश्नके उठानेकी मैं कोई आवश्यकता अनुभव नहीं करता कि साहित्यिक कृतियोंका निर्माण सोद्देश्य हो, उद्देश्यको, लक्ष्यको लेकर हो, अथवा निरुद्देश्य हो। वास्तवमें तो बात यह है कि सोद्देश्य और निरुद्देश्य ये शब्द ही भ्रान्ति-उत्पादक है। आखिर सोद्देश्य कार्य्य वही तो है न, जो समझबूझ कर, एक उद्दश्यविशेषको सामने रखकर किया जाय ? और निरुद्देश्य कार्य्य वह, जो यों ही, अपने आप, अनायास, बिना सोच-विचारके हो जाय ? यदि यह परिभाषा ठीक है तो आप देखेंगे कि मानवके बहुतसे कार्य्य, जो बिना सोचे-विचारे, अपने आप यन्त्रवत् होते हैं, वे भी सोद्देश्य हैं। आंखोंका अपने आप झंप जाना, ठण्डमें दांतोंका किटकिटाना आदि कार्य्य यन्त्रवत् होते हैं, फिर भी उद्देश्यपूर्ण हैं। इसी तरह जिसे हम निरुद्देश्य साहित्य-निर्माण कहते हैं वह भी उद्देश्यमय हो सकता है। वास्तवमें साहित्य-निर्माणमें जहां कला-कौशलात्मक नाप-तोलका विचार रहता है, वहां किस दशाकी ओर साहित्यकार जाना चाहता है, इसका निश्चय भी सामने रहता है। फिर भी प्रत्येक साहित्य-प्रणेता यह जानता है कि बहुधा लेखनी, जैसे बरबस सी चलती रहती है और इस प्रकार वह एक अज्ञेय, प्रेरणाके अस्पृश्य एवं अदृष्ट अस्तित्वको मानो प्रकट करती है। सत्साहित्यका निर्माण अज्ञेय प्रेरणामूलक होता है। इस ध्रुव सत्यको जो भी मानव अस्वीकृत करता है, वह मेरी सम्मति में या तो स्वयं उस प्रेरणाके अनुभवसे रहित है, या वह दुराग्रही है।

मेरा सदासे यह विचार रहा है और आज भी है कि साहित्य किसी वादविशेषकी सीमाओंमें आबद्ध नहीं किया जा सकता। प्रगतिवाद, या युग-धर्मवाद, या श्रेणीवाद अथवा विचार-विशेषवादका प्रतिपादक साहित्य ही साहित्य है—ऐसा सोचने वाले अपने ऊपर और अन्यों पर भी अन्याय करते हैं। जैसा कि मैं एक बार पहले कह चुका हूं—यह कहना कि विचार-विशेषका प्रतिपादक होनेके कारण गोर्की ही साहित्यकार है और उक्त विचार विशेषका प्रतिपादक न होनेके कारण रवीन्द्र ठाकुर साहित्य-स्रष्टा नहीं हैं, न केवल हठधर्मी ही है, वरन् एक अविचार भी है। सत्साहित्य वह है, जो मानवके कल्याण-साधन में सहायक हो सके और यह कहना कि श्रेणी-चेतना-प्रेरक साहित्य ही मानव-कल्याण-साधनमें समर्थ है, तो यह एक ऐसा सिद्धान्त है जो मानव-कल्याणको अत्यन्त सीमित परिधिमें आबद्ध कर देता है।

अधीर हृदयसे सुदूर समुद्रमें जीवन मिला दूंगा और गान शेष करदूंगा। अरे मेरे चारों ओर कठोर कारागार कैसा ? तोड़ दे, तोड़ दे, यह कारागार तोड़ दे, तोड़ दे, आघात पर आघात कर, आज पंखीने यही गीत गाया है और रविकी किरणोंने यही सन्देश दिया है।

———

श्रेणी-चेतनाको उभारने वाला साहित्य भी सत् साहित्य हो सकता है। परन्तु इसके विपरीत, मानवको केवल आर्थिक श्रेणीमें आबद्ध न करके जो साहित्य मानवके व्यक्तित्वको ऊंचे स्तर पर उठानेकी प्रेरणा प्रदान करे, वह भी तो सत्साहित्य है ही। यदि अपने दुराग्रहके कारण हम इस स्पष्ट सत्यको स्वीकृत नहीं करते तो हम अपने साहित्य को लाभान्वित, परिष्कृत, बहुमुखी एवं प्राणयुक्त बनानेमें समर्थ न होंगे।

आखिर, इस द्विपद मानवको और उसके कल्याणको किसी भी युग-धर्म के वाद-विवाद-विशेषके चौखटेमें कैसे जकड़ा जा सकता है?

'चिर जीवन, इक जनम में कैसे बांध्यो जाय?
किमि अनन्त आकाश यह अञ्जलि बीच समाय?'

जिस मानवकी जड़ें इतनी गहरी हैं कि मन्वन्तर भी उसकी थाह पानेके लिये इस काल-अर्णवमें डुबकी लगाते सकुचाते हैं, उस मानवको और उसके कल्याणको आप एक युगके क्षणिक धर्ममें सीमित करेंगे — ऐसी भूल न कीजिये। प्रथम तो इस लिये कि आप ऐसा कर न सकेंगे — अर्थात् आपके प्रयत्न निष्फल होंगे, व्यर्थ होंगे। द्वितीय, इस कारण भी कि ऐसे अदूरदर्शितापूर्ण प्रयत्न मानवका अकल्याण करेंगे। स्मरण रखिये, आजका विज्ञान, भुजा उठाकर उच्च स्वरसे यह घोषित कर रहा है कि भौतिक जगत्में भी इतिनैश्चित्यका सिद्धान्त लागू नहीं होता है। ऐसी अवस्थामें चेतन जगत्में, साहित्यिक निर्माणके सदृश अज्ञेय प्रेरणामूलक विषयमें, युग-वादके इतिनैश्चित्यको समाविष्ट करने का प्रयत्न करना न केवल उपहासास्पद ही है वरन् अहितकर भी है।

निःसन्देह, मैं युग-धर्मकी आवश्यकताओंको अपने साहित्यमें अभिव्यक्त होने देनेका प्रबल पक्षपाती हूँ। साहित्यको मैं निर्माताके स्वांतःसुखाय विसृष्ट होनेके सिद्धान्तको मानते हुए भी, यह भी मानता हूँ कि सुसंस्कृत, गहन, अनुभूतिशील, मैत्र, करुण साहित्यकारका अन्तःकरण युगकी आवश्यकताओंको प्रकट किये बिना सुखानुभव कर ही नहीं सकता। परन्तु "युग-धर्म, युग-धर्म" कह-कह कर अपने मस्तिष्कको, अपने हृदयको, अपने विचारोंको, अपनी भावनाओंको विकृत करनेकी आवश्यकता नहीं है। मैं एक अत्यन्त साधारण, अत्यन्त दुर्बल द्विपद प्राणी हूँ। पर आज मेरे मनमें प्रश्न उठता है—क्या हिंसा-उद्दीपनात्मक अभिव्यक्ति मानव-समाजका कल्याणसाधन कर सकेगी? मैं स्वयं अहिंसाके सिद्धान्तका पालन करनेमें अपनी नितान्त असमर्थता अनुभव करता हूँ। फिर भी गत भूमण्डल-व्यापी महायुद्धकी विभीषिकाओंका किञ्चित्मात्र ज्ञान प्राप्त कर लेनेके उपरान्त मैं पूछ उठता हूँ—क्या यही मुक्तिका, मानव-कल्याणका, जन-गण-मङ्गलका मार्ग है? क्या हिरोशिमाकी दानवताकी ओर मानवको ले जाना ही श्रेयस्कर है? क्या घृणा, ईर्षा, मत्सर, हिंसाके आधार पर इस मानवका उद्बोधन करना ही युग धर्म है? नैतिक दृष्टया मैं दुर्बल जन इन प्रश्नों का क्या उत्तर दूं? आप स्वयं सोचिये, स्वयं विचार कीजिये, चार्ल्स रीडके शब्दोंमें, अपने आत्म-चिन्तनके गहन कूपमें अपने प्रश्न-घटको विचार-रज्जुमें फंसाकर डालिये और देखिये कि उस कुएंसे कौनसा जल निकलता है — विद्वेषका उबलता हुआ खारा पानी या अनुद्वेगकर शान्ति का शीतल जल?

मानव-उन्नतिका एक मात्र मानदण्ड है — मनोविकारों पर अधिपत्य प्राप्त कर सकनेकी क्षमता। एक मानव उसी सीमा तक उन्नत एवं सभ्य हैं, जिस सीमा तक उसने अपने मनोविकारों को, अपने काम को क्रोधको, लोभको, मदको, मत्सरको, घृणाको, विद्वेशको अपने आधीन कर लिया है। इसी प्रकार एक समाज, एक राष्ट्र उसी सीमा तक सभ्य कहा जा सकता है, जिस सीमा तक उसने सामूहिक रूपसे अपने विकारोंको संयत एवं उन्नत करना सीखा है। क्योंकि अन्ततोगत्वा इसी तरह मानव ऊंचा उठता है, इसी तरह एक राष्ट्र ऊंचा उठता हैं, और सोचिये,

यदि मानव-उन्नतिका यह मान-दण्ड ठीक है, यदि मनोविकारोंका संयत एवं उन्नीत करना ही मानव सभ्यता एवं मानव-कल्याण का एकमात्र साधन है, तो फिर सत्साहित्यकार मनोविकारों को, निम्न स्तर पर लुढ़काने वाले विकारों को, उभारने वाला साहित्य कैसे निर्मित कर सकता है ? दूसरे शब्दोंमें घृणा, विद्वेष एवं हिंसा-वृत्ति-मूलक साहित्य का निर्माण, युगधर्म किंवा किसी वादके नाम पर कैसे उचित ठहराया जा सकता है ? स्मरण रखिये, मेरे इस कथनका यह अर्थ कदापि नहीं है कि सत्साहित्य-स्रष्टा इन मनोविकारों का, इनके द्वारा उत्पन्न सामाजिक एवं वैयक्तिक उलझनोंका यथावत् सुन्दर हृदयग्राही वर्णन नहीं करेगा। नहीं। साहित्यमें इनका स्थान तो रहेगा ही। क्योंकि इनके बिना मानवका या मानव-समाजका स्वरूप सम्मुख लाया ही नहीं जा सकता। परन्तु मानव-कल्याणकारी साहित्यमें सदा इनके दुष्परिणामोंसे जन-समूह को सचेत रहनेका सन्देश मिलते रहना चाहिये।

———

हिन्दी, उर्दू और हिन्दुस्तानी

[लेखक — पं० बालकृष्ण शर्मा 'नवीन']

आज हमारे सम्मुख कई उलझनें हैं। आज हिन्दी तथा हिन्दुस्तानी उपनाम उर्दू का झमेला पड़ गया है। इस सारे बखेड़ेके पीछे इस हतभाग्य देशके गत इतिहासके वे कारण हैं, जिन्होंने हमारे सामाजिक और राष्ट्रीय जीवनको एक चक्रव्यूहमें फाँस दिया है। आज हमारी उलझनोंको सुलझाने की अत्यन्त सात्विक भावनासे प्रेरित होकर ही गान्धीजीने राष्ट्र–भाषा को हिन्दुस्तानी के नामसे सम्बोधित करनेका कार्य प्रारम्भ कर दिया है। आप जानते हैं, मैं गान्धीजी का अनन्य भक्त हूँ। मैं उन्हें मानवोपरि मानव, महामानव, मानता हूँ। उन्हींके चरण-दर्शन करके मैं गीताके स्थितप्रज्ञ भक्त की अतिमानवी कल्पनाको व्यवहार्य मान सका हूं। ऐसी दशामें यदि मैं यह कहूँ कि इस हिन्दी-हिन्दुस्तानी-विवादको तीव्र करके गान्धीजीने एक भूल की है और एक ऐसी भूल की है, जिससे राष्ट्रभाषा हिन्दीको क्षति पहुंच रही है, तो आप मेरी मर्मान्तक वेदनाको समझ सकते हैं। मेरे समीप हिन्दुस्तानी कोई भाषा नहीं है। हिन्दुस्तानी बोल-चालके उस माध्यमका नाम है, जिसके द्वारा गोरे साहब लोग अपने बेयरोंसे 'छोटा हाजिरी, बड़ा हाजिरी' माँगा करते थे और मांगा करते हैं। मेरा तो यह निश्चित मत है कि उर्दू भाषाके पक्षपाती लोग गान्धीजी की हिन्दुस्तानीको कभी स्वीकृत नहीं करेंगे। आज तक डाक्टर मौलवी अब्दुलहक ने महात्माजी की संस्थाकी सदस्यता स्वीकार नहीं की है। मैं तो आज गान्धीजी के उसी सन्देशको स्वीकृत करता हूँ, जिसे उन्होंने देशको आजसे २६ वर्ष ३ मास पूर्व लखनऊ-कांग्रेसमें दिया था। भारतकी राष्ट्र भाषा हिन्दी ही है, हिन्दी ही रही है, और हिन्दी ही रहेगी। इस सम्बन्धमें मैं बहुत अधिक विवेचन करके आपका समय नष्ट नहीं करना चाहता हूँ। परन्तु कुछ सैद्धान्तिक बातोंकी ओर सङ्केत कर देना अनुपयुक्त न होगा।

जब हम कहते हैं कि हिन्दकी राष्ट्रभाषा हिन्दी ही है तो इसका अर्थ यह नहीं हैं कि हम किसी अनुचित किंवा अतार्किक दुराग्रहसे काम ले रहे हैं। हमारे इस कथनके पीछे कुछ ऐसी सत्यताएं हैं, जो अमिट हैं। मैं कई बार इस सम्बन्धमें अपने विचार व्यक्त कर चुका हूं। मेरा यह विचार है कि भारतवर्षमें वही भाषा अन्तःप्रान्तीय आदान प्रदानके लिए उपयुक्त है, जिसका शब्द-भाण्डार संस्कृत-प्राकृतके ऊपर आधारित है। क्यों ? इस लिये कि हमारी सभी प्रान्तीय भाषाओंका आधार संस्कृत है। बंगला, मैथिली, उत्कल उड़िया, आसामी राजस्थानी, पंजाबी, गुजराती, मराठी, कन्नडी, तामिल, तेलुगु, मलयालम——इन सभी प्रान्तीय भाषाओंने अनेक शब्द संस्कृतसे लिये हैं। इन सभी भाषाओंमें जितने भी नये नये शब्द बनते हैं, वे संस्कृतके आधार पर ही बनते हैं। राजनीति, अर्थ-शास्त्र, समाजशास्त्र, भौतिकविज्ञान, गणित, इतिहास, साहित्य आदि के जितने भी शब्द इस नये कालकी आवश्यकताके अनुसार निर्मित हुए हैं, वे सब संस्कृत-प्राकृतके आधार पर ही हुए हैं। हां, इनके कुछ शब्द प्रचलित फारसी या अरबी शब्दोंके आधार पर भी बने हैं। परन्तु अधिकतर शब्दोंका निर्माण संस्कृतके आधार पर ही हुआ है। ऐसी अवस्थामें यदि मैं यह कहूँ कि भारतकी राष्ट्रभाषा वह हो सकती है, जिसकी शब्दयोजना संस्कृतके ऊपर आधारित हो, तो इसमें, मेरे इस मन्तव्यमें, विवाद का स्थान कहां रह जाता है ? और, भारतवर्षके सभी प्रान्तोंमें थोड़ी-बहुत समझी जाने वाली भाषा

आज वही भाषा है, जिसे हम हिन्दी कहते हैं। अतः हिन्दी ही भारतवर्षकी राष्ट्रभाषा है। इसके स्थान पर हिन्दुस्तानीके नाम पर उर्दूको प्रतिष्ठित करनेका प्रयास न केवल तर्क-असङ्गत ही है, वरन् व्यर्थ भी है।

अब, आप पूछेंगे कि आखिर, इस समस्याका, इस उलझनका, सुलझाव क्या है? निःसन्देह हमारी समस्या उलझ गई है। इस देशमें इस्लामने अभारतीय स्वरूप धारण किया है। आज भारतीय मुसलमान भारतीय संस्कृति, भारतीय इतिहास, भारतीय वीर पुरुषों, भारतीय परम्पराओंको विजातीय समझना ही अपने इस्लामके प्रति भक्तिरव्यभिचारिणीका आवश्यक तत्व मानता है। अतः वह भारतीय भाषाको अपनी भाषा नहीं मानता। यह एक दुर्भाग्यका विषय है। पर, है यह सत्य यथार्थ बात। आज टर्कीका मुसलमान अपनी तुर्की भाषा से अरबीके शब्द बीन बीन कर निकाल रहा है। आज ईरानका मुसलमान अपनी फारसी भाषासे अरबीके शब्द निकालकर अपनी भाषाको शुद्ध कर रहा है। पर आजका भारतीय मुसलमान, इस प्रमादके वश होकर कि अभारतीयता ही इस्लाम-भक्तिकी द्योतक है, अपनी भाषामें अरबी शब्दोंको घुसेड़ रहा है। यह हमारी विडम्बना है। भारतीय मुसलमानोंकी इस मनोवृत्तिका कारण हम हैं। हम उच्च वर्णके हिन्दू, जिन्होंने अपने धार्मिक सङ्कोचके कारण तथा अपनी सड़ीगली परिपाटी-पूजाके कारण अपनी संस्कृतिको, अपने मनोभावोंको विकृत कर दिया और जिसका परिणाम यह हुआ कि अन्य धर्मावलम्बी हमारे शुद्ध स्वरूपको देखही न पाया। कारण कुछ भी हो, भारतीय मुसलमानकी इस अराष्ट्रीय, अथवा अभारतीय, किंवा भारतीयता-विरोधी रुझानके अस्तित्वको स्वीकृत करके ही हमें आगेकी भाषा-सम्बन्धी नीतिका निर्णय करना है। मेरा अपना यह विश्वास है कि यदि भारतीय मुसलमानोंको इस्लामके सच्चे स्वरूपका दर्शन करना अभीष्ट है तो उसे भारतीयताके रङ्गमें अपने मन और प्राणों को रंगना पड़ेगा। जो मेरे मित्र—मुसलमान मित्र—मिश्र (ईजिप्ट) हो आये हैं और जिन्होंने वहांके मुसलमानोंके मनोभावोंको समझनेका प्रयास किया है, उनका कहना है कि आजका मिश्री मुसलमान अपने पूर्वज फराऊन सम्राटोंके प्रति श्रद्धाभक्ति का एवं उनकी अचकचा देने वाली महती सांस्कृतिक विशालताओंमें गौरवका अनुभव करता है – हालांकि कुरानशरीफमें फराऊन सम्राटोंकी तीव्र निन्दा की गई है। भारतीय मुसलमानोंके लिये भी गत्यन्तर नहीं है। उन्हें अच्छे, सच्चे मुसलमान बननेके लिये अच्छे भारतीय बननेकी प्रेरणा प्राप्त करनी पड़ेगी।

परन्तु, यह तो आगेकी बात है। आज हमारी जैसी भी परिस्थिति है, उसे देखते हुए हम अपनी इस भाषा-विषयक कठिनताको एकही रीतिसे दूर कर सकते हैं। और वह रीति यह है कि हम हिन्दी तथा उर्दू दोनों भाषाओंको आज राष्ट्र-भाषाओंके रूपमें स्वीकार करलें। ऐसी अवस्थामें निःसन्देह हिन्दी वह राष्ट्र-भाषा होगी, जिसे देशका बहुमत समझेगा और उर्दू वह राष्ट्र-भाषा होगी जिसे, देशका एक महत्त्वपूर्ण अल्पमत—बिना समझे भी – राष्ट्र-भाषाके पद पर आसीन देखकर सन्तोष लाभ करेगा। 'बिना समझे भी'—ये शब्द मैंने जान बूझकर रक्खे हैं। गुजरात, महाराष्ट्र, काठियावाड़, कर्नाटक, उत्कल, बङ्गाल तथा आसामका मुसलमान संस्कृत-मिश्रित भाषा ही समझ सकता है। वह अरबी-फारसीके बोझसे बोझिल भाषाको नहीं समझ पाता है। फिर भी, किया क्या जाय? विवशता है। आजके युगमें मुसलमान हमारी यथार्थ, तत्त्वपूर्ण, सत्य एवं उपादेय बातको स्वीकृत करनेके लिये—इस बातको माननेके लिये कि भारतीयताके द्वारा ही, अतः संस्कृत-प्राकृत शब्द भाण्डारके द्वारा हुई अभिव्यक्तिके माध्यमसे ही, वह विशुद्ध इस्लामके तत्त्वोंको हृदयङ्गम करनेमें स र्थ हो सकेगा—तैयार नहीं है। ऐसी अवस्थामें

हमारे सामने और कोई मार्ग नहीं है, इसके अतिरिक्त कि हम दोनों भाषाओंको, हिंदीको और उर्दूको, अपनी राष्ट्र भाषाओंके रूपमें स्वीकार कर लें। इस स्वीकृतिसे एक लाभ यह होगा कि हिन्दुस्तानीके नाम पर हिन्दीके प्रति जो अन्याय हो रहा है, वह रुक जायगा; दूसरे हिन्दी और उर्दू दोनोंको अपनी अपनी इच्छाके अनुरूप परिपुष्ट होनेका अवसर मिलेगा। आज तो इस हिन्दुस्तानीके बुद्धि-भेदके कारण हिन्दीका स्वरूप विकृत हो रहा है। और व्यर्थहीमें उर्दू एमोअल्ला को हिन्दुस्तानीका छद्मवेश धारण करके जनताके सामने आना पड़ रहा है।

महायुद्धके परिणाम

[लेखक — श्री माधव, सम्पादक विश्व बन्धु, लाहौर]

लम्बे ६ वर्षों तक संसारको रक्तसे रंगकर दूसरा महायुद्ध समाप्त हुआ। परन्तु जैसे कुम्भकर्ण मरते मरते भी रामायणी सेनाके एक बड़े भागका नाश कर गया था, वैसे ही यह महायुद्धभी आर्थिक, सामाजिक और राजनीतिक क्षेत्रमें ऐसी विभीषिकाएं छोड़ गया है, जो मानव जातिका रक्त चूस लेंगी।

सबसे पहले आर्थिक क्षेत्रको ही लीजिए। जो राष्ट्र महायुद्धमें प्रत्यक्ष रूपसे संलग्न थे, उन्होंने युद्ध सामग्रीके लिये अपने खजाने खाली कर दिये हैं। और एकको छोड़कर शेष सब दिवालिये जैसे हो रहे हैं। बमवर्षा आदिके कारण उनके भवन और कारखाने आदि बर्बाद हो गये हैं। जो कारखाने बमवर्षा आदिसे बच गये हैं, उनकी मशीनों पर इतना बोझ पड़ा है कि वे बेदम हो गई हैं और राष्ट्र की आवश्यकताएं पूरी करनेकी शक्ति नहीं रखतीं। इस टूट-फूट और बर्बादीको ठीककर राष्ट्रके आर्थिक जीवनको सरल पथ पर लानेकी आवश्यकता है। परन्तु इसके लिए धन चाहिए। जो देश प्रत्यक्ष रूपमें युद्धमें नहीं थे उनके कोष पर संसारव्यापी महंगाईने प्रभाव डाला है और जनता जर्जर हो रही है। युद्धके कारण कुछ लोगोंकी आमदनी बढ़ी थी, या नकली उपायोंसे बढ़ गई थी, उसके साथ साथ खर्चभी बढ़ गये हैं और इस तरहसे मनुष्यके दैनिक जीवनका व्यय बहुत ऊंचा हो गया है। युद्धके कारण बढ़ी हुई आमदनी अब घट रही है और फुलाया हुआ धन सिमट रहा है, परन्तु बढ़े हुए खर्च घटनेकी कोई सूरत नहीं दीखती। खर्च तब घट सकते हैं, जब चीजें सस्ती हों और चीजें तब सस्ती हो सकती हैं, जब वे अधिक उत्पन्न हों। कारखानों वाली चीजें तब तक अधिक उत्पन्न नहीं हो सकतीं जब तक उनकी संख्या और शक्ति न बढ़े। और खेती की उपजका यह हाल है कि युद्धकालमें वह स्वभावतः घट गई थी और अब विषाक्त गैसें आदि जो प्रभाव डाल गई हैं, वह कहीं अनावृष्टि और कहीं अतिवृष्टि के रूपमें फूट रहा है और संसारको भयंकर अकाल की ओर लिये जा रहा है। इस तरहसे संसारका आर्थिक जीवन ऐसे कगार पर पहुंच गया है, जिसके नीचेकी मिट्टी लहरोंने काटदी है और वह किसी भागमें भी हरहराकर गिर सकता है। जिसे देखो वह अमेरिका की ओर मुंह कर रहा है, परन्तु अकेला अमेरिका संसारकी आवश्यकता पूरी नहीं कर सकता और उसने इतनी ऊंची दूकान खैरात करनेके लिये नहीं खोली।

सामाजिक दृष्टिसे इस महायुद्धने मनुष्यके उस दृष्टिकोणमें परिवर्तन किया है, जिससे वह जीवनको आज तक देखता रहा है। द्रष्टाकी पदवी पानेवाले

ऋषि त्यागको ही संसारकी श्रृंखला और समाजकी शान्तिका उपाय बता गये हैं। बहुत दिनोंसे कुछ लोग इसके विरुद्ध मांग या अधिकसे अधिक ग्रहण करनेको ही समाजके लिये सर्वश्रेष्ठ व्यवस्था बता रहे थे। इस महायुद्धने उनके हौसले बढ़ा दिये हैं और जो नाशके भयंकरतम साधन बना सकता है—परमाणुबमको फेंक कर लाखों प्राणियोंकी क्षण भरमें हत्या कर सकता है, वह वसुन्धराका खून पीकर मोटा होनेका अधिकार रखता है। इस घोषणाने मनुष्यके पुराने विश्वासोंको डिगा दिया है, नहीं, गिरा दिया है और अब वह दानव बनना अच्छा समझ सकता है। थोड़ी देरके लिये इस बड़े परिवर्तनको एक ओर रखा जाय तो इस युद्धकी ज्वालामें कई संस्कृतियां मिट गई हैं और कई जातियोंमें संकरता आ गई है। जिन लोगोंने १६३८ और १६४४ का बंगाल देखा है, वे इन शब्दोंका कुछ अर्थ समझ सकते हैं। सैनिकोंके आवागमन से कई घृणित रोग फैले हैं और समाजके वातावरणको बुरी तरह दूषित कर गये हैं। भारतमें अब युद्धके कारण वेश्यावृत्ति बढ़ गई है और अभी भी बढ़ने की आशंका की जा रही है। जो देश युद्धस्थल थे, उनके सम्बन्धमें क्या कहा जाय? इंग्लंएड और फ्रांस तो प्रकट रूप से अपनी स्त्रियोंके लिये पतियों की चिन्ता करने लगे हैं। परमाणुबम का जो प्रयोग हुआ है उससे जापानमें ऐसे अद्भुत बच्चे पैदा होनेकी आशंका की जा रही है जिनके चार-पांच सिर और दस बारह हाथ हो सकते हैं या जो बिल्कुल ही अपंग हो सकते हैं। निःसन्देह ये सब बातें हमारे मानव समाजके श्रृंखला, सौन्दर्य और कल्याण की ओर न ले जाएंगी परन्तु ये तो देशों को ही नष्ट कर डालेंगी। समाज पर उनका वास्तविक प्रभाव तो कुछ वर्षोंमें प्रत्यक्ष होगा।

राजनीतिक दृष्टिसे इस युद्धमें कुछ राष्ट्र जीते हैं और कुछ हार गये हैं, संसारके पराधीन देशोंकी संख्यामें सम्मिलित हुए हैं और जो जीते हैं वे गर्वसे फूल रहे हैं, परन्तु उनमें से सबकी स्थिति ऐसी नहीं है। कहनेके लिए पांच मुंह रखनेके लिये तीन, परन्तु वस्तुतः दो ही राष्ट्र शक्तिशाली रह गये हैं। इससे शासितों और शासकोंकी पुरानी समस्या और भी जटिल हो गई है। जो पुराने शासक हैं वे पुराने शासितों पर अपनी वज्रमुष्टि बनाये ही रखना चाहते हैं, विजित राष्ट्रोंमें भी पूरा भाग चाहते हैं। अवश्य इस बन्दर बंटवारेके कुछ सुन्दर नाम रख दिये गये हैं। जो वस्तुतः शक्तिशाली हैं वे चाहते हैं कि अब संसारमें हमारी सर्वश्रेष्ठ सत्ता रहनी चाहिए। विश्व को अपनी उंगलीके इशारे पर उठाने बिठानेका अधिकार हमारे लिए ही रह गया है। इस मनोवृत्ति ने कितने ही सन्देहों और घातप्रतिघातोंको जन्म दिया है और समझा जा रहा है कि तीसरे महायुद्ध के लिए मोर्चे बंधने लगे हैं। कुछ भविष्यवक्ता तो आगामी कुछ महीनोंमें ही नये महायुद्धकी सम्भावना प्रकट करने लगे हैं अर्थात् गत महायुद्धकी दावाग्नि से जो मानव जाति झुलसकर निकली है और अपने शरीर पर चन्दन तो दूर रहा, कीचड़ पोत कर भी उसे शीतल नहीं कर पाई, उस पर अब 'अहं' के बलाबलका परीक्षण होगा और यह लीलाभूमि महाश्मशान बन जायगी।

बीते हुए महायुद्धकी महा विभीषिकाएं मनुष्यको हताश करनेवाली हैं। परन्तु विधाता इतने निर्दय नहीं हैं, उन्होंने इन विकराल परिस्थितियोंमें भी आशाका एक अंकुर उत्पन्न कर दिया है और वह यह कि महायुद्धमें संसारको सभ्यताका पाठ पढ़ाने वालोंकी कलई खुल गई है और शोषित राष्ट्र ढोंगी गुरुओंके गुलाम नहीं रहना चाहते। सम्पूर्ण एशिया महाद्वीप जो सदियोंसे योरपकी चक्कीमें पिस रहा है, करवट बदल रहा है और अपने मत्थेसे दासताका कलंक मिटा देनेके लिए तुल गया है। यदि यह प्रयत्न सफल हुआ तो शक्तिधरोंकी लोलुप जिह्वाएं अपने गह्वरों में ही सिमटकर रह जायंगी और वे एक बड़ी प्रतिस्पर्धासे बच जायंगी। एशिया संसारका नेतृत्व करेगा तथा गत महायुद्धकी विभीषिकाएं आसानीके साथ सुलझा ली जाएंगी। यदि शान्ति और व्यवस्था

रेडियो द्वारा हिन्दीकी हत्याका षडयंत्र

ब्राडकास्टिंग कण्ट्रोलरके द्वारा स्टेशन डाइरेक्टर आल इण्डिया-रेडियो, दिल्ली, लाहौर, लखनऊ, पेशावर, और कलकत्ताको प्रेषित आदेश-पत्रकी प्रतिलिपि (संख्या PZ ६५४३)।

हिन्दुस्तानी घोषणाओंमें अपने स्टेशनसे आपको 'मजलिसका' उपयोग करना चाहिये, सभाका नहीं। सम्मान्य सदस्य महोदयसे कलके विचार-विनिमयमें निम्नलिखित निर्णय किया गया—

'इस्थमस'के लिए 'जलघाटी' और 'थलघाटीके' स्थान पर 'खाकनाय और 'आबनायका' उपयोग कीजिये।

'बे'के लिये केवल 'खाड़ीकी' जगह 'खलीज और खाड़ी' काममें लाइये।

'आइलैण्डके' लिए 'टापू' काममें लाइये, जो चल रहा है। 'ओशन्स' और 'सीज' के लिए अंग्रेजीके पर्याय-वाची शब्द काममें लाइये और 'हिन्द-सागर' तथा 'काला सागर' कहना बन्द कर दीजिये।

'चेयरमैन' अथवा 'प्रेसिडेण्ट' के लिए अंगरेजी के शब्द काममें लाइये और 'सदर' अथवा 'प्रधान' कहना बन्द कीजिये।

'नालेज' के लिये केवल 'इल्म' का उपयोग कीजिये और 'ज्ञान' को रद्द कर दीजिये।

'स्टूडेण्ड' केलिए तालिब-इल्मका उपयोग कीजिये और विद्यार्थीको रद्द कर दीजिये।

'पैट्रियाट' के स्थान पर केवल हिन्दुओंके लिए 'देशभक्त' का उपयोग कीजिये तथा और सबके लिये 'महुब्बे-वतन' का उपयोग कीजिये।

'एक्सिस' के स्थान पर, 'महवरी' को बन्द कर दीजिये और केवल अंगरेजी शब्द काममें लाइये।

'एलाइज़'के स्थान पर केवल 'इत्तिहादी' अथवा अंगरेजी शब्दोंकोकाममें लाइये, पर 'साथी-मुल्क' बन्द कर दीजिये।

'कैपिटल' के लिए 'राजधानी' का उपयोग कीजिये पर 'दारुल खिलाफत' के उपयोगमें कोई रोक नहीं है।

नीचे लिखे शब्दोंका उपयोग रोक दिया जाय—
आशा, आदर, क्रोध।

'डेथ' के लिये 'स्वर्गवास' का उपयोग केवल हिन्दुओंके लिये और अन्य सबके लिये 'वफ़ात' अथवा 'इन्तकाल' का उपयोग कीजिये।

आपने यह देखा ?—जिस रेडियो-विभाग की इतनी संकुचित, ओछी, साम्प्रदायिकतापूर्ण नीति रही है और है उससे मिली-जुली हिन्दुस्तानी भाषा के निर्माणकी आशा करना नितान्त भ्रान्तिमूलक है। रेडियो वाले किसी भी कालमें हिन्दुस्तानीका निर्माण नहीं कर सकेंगे। वे तो वास्तवमें हिन्दुस्तानीके नाम पर उर्दू भाषाका ही प्रचार कर रहे हैं। मैं निश्चत रूपसे अत्यन्त स्पष्टतापूर्वक, सच्चे हृदयसे यह कह देना चाहता हूँ कि मैं उर्दू भाषाका विरोधी नहीं हूं। मैं उर्दू का प्रेमी हूँ। मेरा यह मन्तव्य है कि किसी भी भाषासे द्वेस करना अपनी असंस्कृतिका, अपने जङ्गली पनका परिचय देना है। जिस प्रकार जगती तल का मातृत्व आदरणीय, श्रद्धेय, वन्दनीय एवं

के ठेकेदारों को अपना प्रयत्न समेट लेने और प्रत्येक देशको अपनी अपनी स्थिति सुधारनेका वास्तविक अवसर देनेकी सुबुद्धि आ जाय तो और भी अच्छा होगा। दूसरी ओर यदि ऐसा न हुआ तो क्या होगा — इसका उत्तर भावी संसारका स्वरूप देखनेवाला जो भाग्यशाली बचेगा, वह देगा, मैं नहीं दे सकता।

—अलख निरंजन

पूजार्ह है, उसी प्रकार प्रत्येक भाषा भी हमारी श्रद्धा एवं पूजीका पात्र है। जिस भाषामें मीर, जौक़, दाग़, ग़ालिब, इकबाल, हसरत, जोश, आदि साहित्य-महारथी हो गये, और हैं, उस भाषाके प्रति कोई भी सुसंस्कृत व्यक्ति विद्वेष-भाव कैसे रख सकता है? अतः मैं उर्दू का विरोधी नहीं हूँ। मैं चाहता हूँ कि उर्दू भाषाकी उन्नति हो। पर, मैं यह भी चाहता हूँ कि हिन्दुस्तानीके नाम पर हिन्दीकी हत्या न हो।

इस समय हिन्दुस्तानी बतानेके प्रयत्नके स्पष्ट अर्थ हैं कि हिन्दी एक कोनेमें डाल दी जाय। वर्तमान समय किसी मिली जुली भाषाके बनानेके लिये उपयुक्त नहीं है। अतः इस समय तो हमें हिन्दी और उर्दू दोनोंको राष्ट्र-भाषा मानकर ही आगे बढ़ना है। हाँ, रेडियोंका जो कार्यक्रम बने, उसमें हिन्दी तथा उर्दू के कार्यक्रमको अनुपाततः विभाजित करना चाहिये।

— बालकृष्ण शर्मा

साहित्यके प्रमुख तत्व

[लेखक — श्री कृष्णचन्द्र विद्यालङ्कार]

साहित्यका मुख्य लक्षण करना अत्यन्त कठिन है। साहित्यका मुख्य कार्य हृदयके भावों या मनोवेगों को तरंगित करना है और मनोवेग मनुष्यके साथ बहुत अधिक सम्बद्ध हैं। मनोवेग ही मनुष्य की इच्छाओंके जन्मदाता हैं, उन्हींसे मनुष्यके क्रियाकलापकी उत्पत्ति होती है, इसलिए जो साहित्य जितना अधिक पाठकके हृदयके भावों या मनोवेगों को तरंगित करता है; वह उतना ही जीवनका सबसे रहस्यमय चित्र है। मैथ्यू आर्नल्ड का यह लक्षण इसलिए ठीक है कि जीवन की आलोचना ही साहित्य है।

विज्ञान या दर्शन, राजनीति और अर्थशास्त्रका सम्बन्ध हमारे मस्तिष्कसे होता है; वे हमारे मस्तिष्क पर प्रभाव डालते हैं, जबकि साहित्यका सम्बन्ध हमारे हृदयकी सरसता से होता है। विज्ञानका संबंध निर्जीव पदार्थोंके निर्जीव विश्लेषणसे है, जबकि साहित्य उन निर्जीव पदार्थोंमें भी जीवनको जागृत करके उनके साथ कवि और पाठक दोनोंकी आत्मीयता कायम करता है। संगीत जरूर हमारे हृदयको तरंगित करता है, पर उसमें हमारी बुद्धिका कोई संयोग नहीं होता। इसके विपरीत साहित्य हमारी बुद्धि और कल्पना-शक्तिको प्रेरित करता है, तभी हम साहित्यमें रस प्राप्त करते हैं; यही दोनोंका मुख्य अन्तर है। साहित्यका मुख्य आधार ही यह कल्पना है।

साहित्यको वस्तुतः हम दो भागोंमें बाँट सकते हैं—भावपक्ष और कलापक्ष। कलाकार भाव, कल्पना या बुद्धिका आश्रय लेकर जो कुछ पाठक या श्रोताके सामने रखना चाहता है और जो मुख्य संदेश वह देना चाहता है, वह साहित्यका भावपक्ष है और यही साहित्यका आत्मा है। इस संदेशको प्रकट करनेका साधन भाषा है, इसे ही हम कलापक्ष, रचनाशैली या साहित्य का शरीर कह सकते हैं। भावपक्ष (या साहित्यकी आत्मा) में हमें तीन तत्त्वोंका दर्शन होता है:—कल्पना, बुद्धि और भाव।

कल्पनातत्त्व द्वारा कलाकार किसी अतीत या कल्पित चित्रको हमारे सामने रख देता है। हजारों साल पहलेकी घटना हो या कोई वास्तविक घटना न भी हो, लेखक अपनी कल्पना शक्तिके बलसे उसे आपके सामने अत्यन्त सजीव और वर्तमानरूपमें रख देता है। इसी लिए हम कहते हैं

कि कवि ब्रह्मा होता है, वह असत्‌में से सत्‌की सृष्टि करता है। जिस साहित्यमें यह कल्पनाशक्ति जितनी उर्वर होगी, उतना ही वह साहित्य उत्कृष्ट होगा।

बुद्धितत्त्वसे अभिप्राय उस मुख्य संदेशसे है, जो कलाकार अपनी रचनाके द्वारा संसार तक पहुंचाना चाहता है। वह जीवनके किसी गुप्त तत्त्व या आदर्शको स्पष्ट करनेके लिए ही कोई रचना करता है। कवि संसारके सामने जो ऊंचा आदर्श या जो संदेश देना चाहता है, वही साहित्य या बुद्धितत्त्व है। उपदेश न देकर वह भी पाठक या श्रोताके हृदयमें श्रद्धा पैदा कर देता है। आजका अधिकांश साहित्य बिना आदर्शके या हीन-आदर्शके कारण वस्तुतः साहित्य ही नहीं कहा जा सकता।

साहित्यके भावपक्षका तीसरा मुख्य तत्त्व मनोभाव या मनोवेग है। जो साहित्य जितना अधिक मनोवेगोंको तरंगित करेगा, उतना अधिक वह ऊंचा साहित्य होगा। अतः कामुकता या घृणा आदि हीन मनोवेगोंकी प्रेरणा करनेवाले साहित्यको हम उत्कृष्ट साहित्य नहीं कह सकते; क्योंकि वह उच्च आदर्शसे हीन है। मनोवेगका आधार हमारी मार्मिकता और हृदयकी सरसता हो, वह हमें बरबस अपने भाव-प्रवाहमें बहादे। कविके अन्दर यह शक्ति होनी चाहिए कि वह अपने भावोंको इस प्रकार प्रकट कर सके।

मनोभाव भी दो प्रकारके होते हैं—काम, क्रोध आदि साधारण भौतिक मनोवेग और श्रद्धा, दया भक्ति आदि उच्चकोटिके मनोवेग। साधारण कवि पहले प्रकारके मनोवेगोंको तरंगित करते हैं, जब कि तुलसीदास आदि कवि ऊंचे मनोवेगोंको पाठक या श्रोताके हृदयमें जागृत करते हैं।

साहित्यका शरीर

यदि भावपक्ष साहित्यका आत्मा है, तो कलापक्ष उसका शरीर है। बहुतसे विचारकोंकी सम्मतिमें कलाका उद्देश्य सौन्दर्य या आनन्द देना मात्र है, लेकिन वस्तुतः यह ठीक नहीं है। हम अपने जीवनमें जो कुछ भी करते हैं, सबका उद्देश्य अपने जीवनको सुखी और उन्नत बनाना है, अतः यह भी स्वाभाविक है कि हमारी कलाका उद्देश्य भी जीवन व चरित्रको सुखी व उन्नत बनाना हो। इसलिए कलाका उद्देश्य केवल कला या आनन्दकी उत्पत्ति नहीं माना जा सकता।

एक दुर्बल तथा रोगी शरीरमें स्वस्थ आत्माका निवास नहीं रहता, इसी तरह यदि साहित्यका शरीर या कलापक्ष भी दुर्बल होगा, तो उससे साहित्यके आत्मारूप भावोंका प्रकाशन भी ठीक नहीं हो सकता। इसीलिए जहां साहित्यकार बुद्धि कल्पना आदि तत्त्वों पर ध्यान देता है, वहां उसके शरीर या कलापक्ष अर्थात् रचनाशैली आदि पर भी कम ध्यान नहीं देता।

रचना-शैलीके अन्तर्गत हम निम्नलिखितको ले सकते हैं– रस, भाषा और अलंकार।

रसों और अलंकारोंके सम्बंधमें हमारे प्राचीन आचार्योंने काफी विशद विवेचन किया है। भारतीय आचार्य रसको ही साहित्यका स्थायी आत्मा मानते हैं। ये रस नौ हैं— शृंगार, हास्य, करुण, रौद्र, वीर, भयानक, बीभत्स, अद्‌भुत और शान्त। इन सबकी उत्पत्ति विभिन्न स्थायी-भावोंसे होती है। विभाव (आलम्बन और उद्दीपन) अनुभाव और संचारीभाव भी रसकी उत्पत्तिमें सहायक होते हैं।

प्राचीन आचार्योंने अलंकारको 'काव्यशोभाकर' और 'शोभातिशायी' कहा है, क्योंकि साधारण आभूषणोंकी भांति साहित्यिक अलंकार भी कविता-कामिनीके सौन्दर्यकी वृद्धि करते हैं। परन्तु जैसे एक अत्यन्त कुरूप नारी गहने पहन कर रूपवती होनेका दावा नहीं कर सकती, वैसेही केवल अलंकारोंके भारसे दबी हुई तत्त्वशून्य कविता भी उत्कृष्ट नहीं हो सकती। साहित्यके कलापक्षके

साथ साथ भावपक्ष की उपेक्षा नहीं की जा सकती। कलाकार तो केवल सौन्दर्यवृद्धिमें सहायक होते हैं।

अलंकार, शब्द और अर्थके अस्थिर धर्म हैं। इसी आधार पर अलंकारके दो मुख्य भेद हैं—शब्दालंकार और अर्थालंकार। शब्दालंकारमें जहां केवल शब्दोंका खेल होता है, वहां अर्थालंकार हमारी कल्पना और बुद्धिको प्रभावित करता है। अर्थालंकारोंके तीन मुख्य भेद किये जा सकते हैं—साम्यमूलक, विरोधमूलक, और सांनिध्यमूलक।

प्रतिभाशाली ऊंचे कवि अलंकारोंसे अपनी कविताके सौन्दर्यको बढ़ानेका कृत्रिम प्रयत्न नहीं करते। पर रीतिकालीन कवियोंने केवल अलंकार या उक्तिवैचित्र्यको ही कविता समझ लिया।

कविता

(साहित्य-मीमांसाकार की दृष्टिमें)

कविता साहित्यका एक प्रमुख अंग है, परन्तु साधारण साहित्यसे कवितामें यह अन्तर है कि यह छन्दोंमें लिखी हुई ऐसी भाषा है, जो मनोवेगोंको तरंगित करती है। छन्दोमयता कविता का एक स्वाभाविक गुण है। मनोवेग अपनी चरम सीमा पर पहुँचते ही संगीतका रूप धारण कर लेते हैं।

कविताकी भाषा भावुकताकी चरम सीमा पर पहुँचते ही जहां छन्दोमय या संगीतात्मक हो जाती हैं, वहां वह अधिक संक्षिप्त भी हो जाती है। कवि अनावश्यक प्रसंगोंको, जिनका भावुकता के साथ विशेष संबंध नहीं, छोड़ता चला जाता है।

कवि ज्योतिषी है और निर्माता है, क्योंकि वह संसारके समस्त त्रैकालिक घटनाचक्र और समस्त प्राणियोंको अपनी दूरदृष्टि व कल्पना के द्वारा एक सूत्रमें पिरो लेता है। वह ऐसे चित्रोंका निर्माण करता है, जिन्हें साधारण आदमी इस संसारमें नहीं देख पाता। और वह ऐसे मनोवैज्ञानिक सत्य ढूंढ निकालता है, जो भविष्य में भी कायम रहेंगे। यही उसकी रचना और यही उसका ज्योतिष है।

कविताकी भाषा जहां छन्दोमयता या संगीत का आश्रय लेती है, वहां इसका कलापक्ष बहुत अधिक उन्नत हो जाता है और गद्यकी अपेक्षा पद्यकी भाषामें सौन्दर्यका बहुत अधिक विकास हो जाता है। इसी लिए कवितामें हमें एक अक्षर या एक शब्द बार बार आता प्रतीत होता है, जिसे हम अनुप्रास, श्लेषादि कहते हैं।

कलाका उद्देश्य केवल कला नहीं है, उसका जीवनके लिए उपयोग होना आवश्यक है, इस लिए कविता भी वही ऊंची होगी, जो मनुष्य के सामने कोई ऊंचा आदर्श रख सके।

कविताके भेद

कविताके हम दो मुख्य भेद कर सकते हैं — विषयप्रधान और विषयिप्रधान। विषयप्रधान कवितामें समाज या देशकी घटनाओं का वर्णन रहता है, जैसे रामायण, महाभारत और इलियड आदि महाकाव्य। समयके भेदसे इसके भी दो भेद होते हैं—१. प्राकृतिक अर्थात् वर्णित घटनाके समकालमें बनी हुई, जैसे बाल्मीकि की रामायण। २. आनुकारिक अर्थात् वर्णित घटनाके बहुत समय बाद बनी हुई, जैसे गो० तुलसीदासकी रामायण।

विषयिप्रधान कविता लेखकके अपने आत्मा या हृदयके उद्गारोंको संसार तक सुनाती है; इसी लिए गीतिकाव्यके रूपमें प्रकट होती है। भक्ति, करुण, या शान्तरसकी इसमें प्रधानता होती है, जैसे मीरा या सूरदासकी कविता।

हिन्दी और अंग्रेजीमें विषयिप्रधान कविताका विकास एक रीतिसे अर्थात् खण्डित होकर हुआ। वीरगाथाकालके बाद विषयिप्रधान कविता—फिर बीचमें रीतिकाल और फिर रहस्यवादके नये रहस्यवादी हिन्दी कवियोंकी विषयिप्रधान कविता। इसी तरह इंग्लैण्डमें वर्ड्सवर्थ, कालरिज शैले आदिने बीचमें लुप्तप्राय विषयिप्रधान कविताको जन्म दिया।

कविताका उद्देश्य बहुत ऊंचा और बहुत पवित्र है, वह समस्त संसारके सत्यको प्रकट करके निराशा और कर्तव्य-विमुखतासे दूर करती है तथा आध्यात्मिक आदर्शको जन्म देती है। इसी कारण वह आजके संतप्त तथा आदर्शहीन संसार को शान्ति और आदर्शका संदेश दे सकती है। इसी तरह वह विज्ञान और व्यवसायके क्षेत्रोंमें भी कल्पना शक्तिको जागृत करती है। आखिर विज्ञान, व्यवसाय और कविता तीनोंका ही उद्देश्य मानव जीवनकी उन्नति है, इसलिए तीनोंमें समन्वय स्थापित करके चलना होगा। कविताके ऊंचे आदर्शोंके बिना विज्ञान और व्यवसाय संसारकी उन्नतिकी बजाय अवनतिके ही कारण बनेंगे।

उपन्यास एक दृष्टि में

आजकल कविताकी अपेक्षा उपन्यास अधिक लोकप्रिय हैं। इसका कारण यह है कि उपन्यास कविताकी अपेक्षा अधिक सरल व अधिक मनोरंजक होते हैं। इन्हें समझनेमें उतनी बोझल विचार-शक्ति और अनुभवशीलताकी भी आवश्यकता नहीं होती। सभी प्रकारके और सभी परिस्थितियोंके लोग उन्हें पढ़ सकते हैं, क्योंकि उनका क्षेत्र राजनीति, समाज, आर्थिक आदि बहुत विस्तृत होता है।

विषयकी दृष्टिसे उपन्यासके चार भेद किये जा सकते हैं:—घटनाप्रधान उपन्यास, सामाजिक उपन्यास, अन्तरंग-सम्बन्धी उपन्यास और देश-काल निरपेक्ष उपन्यास। घटना प्रधान उपन्यासका आधार केवल अद्भुत रस होता है। परी, देवी, दानवों और जासूसोंकी मनोरंजक घटनाएं इस कोटिमें आती हैं। सामाजिक उपन्यासों में समाजकी समस्याओंको केन्द्र मानकर लेखक चलता है। श्री प्रेमचन्द आदिके उपन्यास इसी कोटिके हैं। अन्तरंग जीवनके उपन्यासमें व्यक्तिगत चरित्र के उद्घाटन पर विशेष महत्त्व दिया जाता है। इनमें दार्शनिकता या मनोवैज्ञानिकताके दर्शन अधिक होते हैं। चौथे प्रकारके उपन्यासोंमें देशकालका कोई स्थान नहीं होता, जैसे—कादम्बरी।

उपन्यासके निर्माणमें कथावस्तु, पात्र, कथोपकथन, देशकाल, शैली और उद्देश्य तत्त्व आवश्यक हैं। कथावस्तु समाज या मानवजीवनमें स्वयं आनेवाली या प्रयत्नपूर्वक लाई गई घटनाओं से बनती है। पर ये घटनाएं हों, जो पाठकके हृदयको स्पर्श कर सकें और उसके मनोवेगोंको तरंगित कर सकें। वे रोचक हों, स्वाभाविक हों परस्पर संगति ठीक हो और वे स्वयं रूईकी पूणीमेंसे सूतकी तरह एक दूसरेको आगे निकालती और पैदा करती जावें। आत्मचरित, पत्रलेखन तथा किसी दूसरेकी कहानीका वर्णन—ये तीन तरीके कथावस्तु लिखनेके होते हैं।

चरित्रचित्रण इतना सुन्दर और स्वाभाविक हो कि पाठक पात्रोंके साथ तादात्म्य—(उस जैसापन) अनुभव करे और उसमें पात्रके साथ सहानुभूति का रस उमड़ पड़े। कथोपकथनसे पात्रोंका चरित्र और स्वभाव प्रकट होता है। यह भी स्वाभाविक उपयुक्त और पात्रोंके अनुरूप हो। उपन्यास-लेखक जिस देश या कालका वर्णन करता है, उसी काल या देशकी राजनैतिक, आर्थिक, सामाजिक संस्कृति, विचारधारा और वातावरणका चित्र खींच देना चाहिए। अन्य साहित्यकी भांति उपन्यास भी जीवनके लिए है, न कि जीवन उपन्यासके लिए। इस लिए उपन्यासकारका कर्तव्य है कि वह समाजमें उच्च धरातलका—ऊंचे आदर्शका निर्माण करे।

प्राचीन और अर्वाचीन उपन्यासोंमें अन्तर यह है कि प्राचीन कलाकारोंमें विस्तारकी प्रवृत्ति आवश्यकतासे अधिक थी और वर्णनमें स्थान घेर लिया जाता था, परन्तु नये उपन्यासकार अपनी उत्कृष्ट वस्तुके इधर उधर बहुत कम जाते हैं, ये घटनाओंके विशाल समुद्रमेंसे अपनी उपन्यास-नौकाको एक निर्धारित बिन्दुकी ओर ले जानेका प्रयत्न करते हैं।

उपन्यास और कहानीमें भी सबसे बड़ा भेद उनके आकारका है, इसलिए कहानी-लेखक किसी पात्रके समस्त जीवनको न चमका कर उसके किसी एक कोनेको ही चमकाता है, परन्तु कोना ऐसा लेता है, जिससे उस समस्त भवनकी खूबी प्रकट हो जावे। कथाका डंक उसकी पूंछमें चमकता रहता है, उसका मार्ग अत्यन्त संक्षिप्त होता है, पर उसीसे उसे वहां पहुँचना होता है, जहां उपन्यासकार अपने विशाल राजमार्गसे पहुंचता है।

यथार्थवाद और सौन्दर्यके समन्वयसे ही उपन्यास पूर्ण होता है।

"वसन्त"

[रचियता 'श्री अद्भुत']

रे! वसन्त! धीरे से आना।
यह मरघट है शोकस्थल है ओ! यहां मत साज सजाना।
रे! वसन्त! धीरे से आना॥
विह्वल सा अम्भोधि सत्यको छोड़ चला शवलहरों में
सात्विकसे वे स्वरतार तोड़ वीणाने खोजा नया प्यार।
जग भी मतवाला खूब बना वह पड़ा पाप के प्रहरों में
चिन्ताके चक्र चले चञ्चल जग पर ज्वालाका नवदुलार
शोक पर आंसू बहाना।
रे! बसन्त! धीरे से आना॥
चीत्कार कर रहीं करुण तीव्र कृषकोंकी आत्मायें विशाल
मानवकी करुण कथायें हैं करती कारामें अट्टहास।
यौवनकी आंधी उछल पड़ी दानवने फैंका महाजाल
भूखे रोते हैं बिलख २ निकले हैं जिनके जीर्ण श्वास
राग रंग मत लाना।
रे! बसन्त! धीरे से आना॥
सुप्त-सी पावन व्यथामें आज कविको हैं रुलातीं
रो रहे हैं आज बच्चे भूखसे व्याकुल बनेसे।
मृत्यु उनकी जननियोंको मार मरघट पर सुलातीं
चमकते हैं खप्परोंमें खड्ग शोणितसे सनेसे॥
रोना और रुलाना।
रे! बसन्त धीरे से आना॥

पुच्छरत पदक

अमृतसरके प्रमुख साहित्यक वयोवृद्ध विद्वान् श्रीमान् पं० जगन्नाथजी पुच्छरत साहित्यभूषणकी चिरकालिक अनुपम (ठोस) साहित्य सेवाओंके उपलक्षमें पंजाब विश्वविद्यालयकी "हिन्दी-रत्न" परीक्षामें इस वर्ष सर्वप्रथम (फर्स्ट) उत्तीर्ण रहने वाले छात्र वा छात्राको "गोल्डन—मैडल" अर्थात् "स्वर्ण लिप्त" (पुच्छरत-पदक) दिया जायगा।

व्यवस्थापकः—
सहित्य सदन, चावल मण्डी अमृतसर,

गो० तुलसीदासके विषयमें मत मतान्तर

[लेखक — श्री रमानन्द सारस्वत साहित्यरत्न]

अब तक जितने विद्वानोंने गोस्वामी तुलसीदास जी के जीवनचरित पर खोज की है, वे सब किसी एक निश्चित मत पर नहीं पहुँचे हैं। यहां तक कि कुछ लोगोंको गोस्वामीजीके ब्राह्मणत्व पर भी सन्देह हो गया है। परन्तु चाहे कुछ भी हो, गोस्वामी जी को कोई न कोई स्थिति तो देनी ही पड़ेगी, क्योंकि उनके मानसको यदि संसारसे पृथक् कर देते हैं तो हिन्दी-साहित्यमें उसकी टक्करका ग्रन्थ मिलना दुर्लभ ही क्या असम्भव है। अब हम उन विद्वानों के मतोंका यहां स्पष्टीकरण करते हैं। गोस्वामीजी की जीवन सम्बन्धी सामग्रीके दो भाग हो सकते हैं, एक तो वह जिसके प्रमाण उपलब्ध हैं, दूसरा वह जो प्रचलित किंवदन्तियोंके आधार पर हैं। अबतक के प्रायः गोस्वामीजीके चरित किम्वदन्तियों के आधार पर ही छपे हैं। उन पर विश्वास करना न करना इच्छा पर निर्भर है अतः हम किंवदन्ती वाले भागको छोड़कर (जिसे सब जानते ही हैं) द्वितीय भागका ही वर्णन करेंगे जिसके कुछ न कुछ प्रमाण मिलते ही हैं। इसके भी दो भाग हैं, एक अन्तरंग दूसरा बहिरङ्ग।

बहिरङ्गके पक्षमें हमारे प्रमाण—

(१) नाभाजीका भक्तमाल

(२) भक्तमाल पर प्रियादासजीकी टीका।

स्वयम् नाभाजीने भक्तमालमें तुलसीदासजीके सम्बन्धमें एक छप्पय लिखा है:—

त्रेता काव्य निबन्ध करी सतकोटि रमायन।
इक अच्छर उच्चरे ब्रह्म हत्यादि परायन॥
अब भक्तन सुख देन बहुरि वपु धरि विस्तारी।
राम-चरन-रस-मत्त रहत अहनिशि व्रतधारी॥
संसार अपारके पारको सुगमरूप नौका लियो।
कलिकुटिल जीव निस्तार हेत वाल्मिकि तुलसी भयो

इस पद्यसे तुलसीदासजीका परमभक्त होना व रामायण बनाना तो सिद्ध होता है; परन्तु और कुछ नहीं। अब इसी पर प्रियादासजीकी टीका देखिये—

"निसा सो सनेह बिन पूंछे पिता गेह गई,
भूलि सुधि देह भजे वाही ठौर आये हैं।
वधू अति लाजभई रिस सों निकस गई,
प्रीति राम नहीं तन हाड़ चाम छाये हैं।
सुनी जब बात तब है गयो प्रभुरत वह,
पीछे पछिताय तजि काशी धाम धाये हैं।
कियों तहं पास प्रभु सेवा लै प्रकाश कीनों,
लीनो दृढ़ भाव नेम रूपके तिसाये हैं॥...

इस प्रकार इन्होंने सारी किम्वदन्तियोंको इन पद्योंमें भर डाला है, परन्तु आगे वे स्वयं कहते हैं—ये सब बातें परम्परागत श्रुत हैं जैसा कि—

इनहीके दास—दास प्रियादास जानो,
तिन लै बखानो मानो टीका सुखदाई है!
गोवर्धननाथ जूके हाथ मन पर्‌यो जाको,
कर्‌यो वास वृन्दावन लीला मिलि गाई है!!

मति अनुसार कह्‌यो लह्‌यो मुख सन्तनके........ से विदित होता है कि जो कुछ साधुओंके मुखसे सुना वही लिखा है; अतः बालकी खाल निकालने वाले आलोचक इसे कब सच और पुष्ट प्रमाण मान सकते हैं दूसरे "भक्ति विश्वास जाके ताहि को" से प्रकट होता है कि जिसको विश्वास हो वह माने, परन्तु अपने पितामें भी सन्देह रखने वाले तर्कदग्ध समालोचक यह कैसे मान सकते हैं। अस्तु। दूसरी बात यह है कि टोडर नामी किसी व्यक्तिके सन्तानोंके झगड़ेमें तुलसीदासजी जज बने थे अतः सम्वत १६६६ में तुलसीदास जी विद्यमान थे यह सिद्ध होता है, अस्तु।

द्वितीय भाग (अन्तरङ्ग)

इस भागमें हम तुलसीदासजीके जीवन सम्बन्धी बातों पर भी विचार प्रकट करेंगे। वह यह कि तुलसीदासजीने बचपनमें अनेक दुःख पाये जिनको उन्होंने भी यत्र-तत्र प्रकट किया है। गोस्वामीजी एक आदर्शवादी थे। उन्होंने अपने जीवनमें किसी राजा आदिका न तो आश्रय ही लिया और न किसी आश्रय दाताका वर्णन ही किया। इससे स्पष्ट है कि वे सच्चे महात्मा थे। यद्यपि उनके समकालीन केशवदास प्रभृति कवियोंने आश्रयदाताओंकी प्रशंसाके पुल बाँधे हैं, पर उन्होंने नहीं, यह उनकी तत्कालीन एक विशेषता है। उनका बाल्यकाल दुखसे बीता था इसके प्रमाण—

(१) पातक पीन कुदारिद दीन
मलीन धरैं कथरी करवा है।
लोक कहै विधि हू न लिख्यो
स्वपनेहु नहीं अपने परवा है॥

(२) मात पिता जग जाय तज्यो,
विधिहू न लिख्यो कछु भाल भलाई

(३) साहेब सुजान जिनस्वानहुको पक्ष कियो,
रामबोला नाम हौं गुलाम राम साहिको'

इनसे विदित होता है कि तुलसीदासजी अत्यन्त दरिद्र थे, उनके पास कथरीं (फटा हुआ लिहाफ) और करवा (मिट्टीका लोटे जैसा पात्र) ही था। इस तरहसे उन्होंने या तो रामका नाम सुना या राममन्त्रकी दीक्षा ली, जिससे उनको परमार्थ की प्राप्ति हुई। जन्म ते ही छोड़ जानेके भी दो अर्थ हो सकते हैं (१) कुछ लोगोंके आधार पर कि अभुक्तमूल में जन्म होनेके कारण गृहसे त्याग हो जाना (२) या माता पिताका बाल्यकालमें ही मर जाना। अब प्रश्न यह उपस्थित होता है कि दोनोंमें से कौनसा मानें ? क्योंकि यदि स्वर्गवासकी बात सही है तो तुलसीदासजीने यह बात क्यों नहीं लिखी ? 'मात पिता जग जाय तज्यो'से ही क्यों मौन ले लिया ? यदि अभुक्तमूलवाली बात सही है तो जिस प्रकार कलिवर्णनमें उन्होंने अनेक कुप्रथाओंका उल्लेख किया है, इसका क्यों नहीं किया ? क्योंकि अभुक्तमूलमें जन्म लेना कोई बुरी बात नहीं। इससे घरसे निकालनेकी क्या आवश्यकता थी ? केवल तत्कालीन मुहूर्त-चिन्तामणिके अनुसार "मुखं पिताऽस्याष्ट समा न पश्येत्"के कारण केवल पिताने आठ वर्ष मुंह न देखना ही क्यों न स्वीकृत किया ? मुहूर्तचिन्ता-मणिके अनुसार बालकका सम्बन्ध केवल पिता हीसे हैं। फिर उन्होंने दोनोंसे 'तजा' क्यों लिखा ? यदि स्वर्गवास हुआ तो यह तो मानवधर्म की स्वाभाविक बात थी जिसके द्वारा उनका "द्वारद्वार विललात फिरे" कहना भी ठीक होता, यह न लिख कर ऐसा सन्दिग्ध शब्द क्यों लिखा ? इन सब का यथार्थ उत्तर हम उपसंहार में लिखेंगे अस्तु !

कुल जाति—

गोस्वामीजीके कुल और जातिके विषयमेंभी विद्वानोंके बहुत मत भेद हैं। "जायो कुल मंगन बधावनों बजायो सुनि भयो परिताप पाप जननी जनकको" के लिये यदि "मात पिता जग जाय तज्यो" के साथ मिलाकर पढ़ें तो प्रतीत होता है कि पुत्रोत्पत्तिकी खबर पाते ही माता पिताको बड़ा कष्ट हुआ और उन्होंने उसे छोड़ दिया। इसमें छोड़नेका कारण 'पापका परिताप' है। कोई ऐसा पापका परिताप था जिसके कारण माता पिता को उन्हें छोड़ना पड़ा। वह 'पापका परिताप' क्या था ? यह संदिग्ध है। अभुक्तमूलका जन्म कोई पापका परिताप नहीं हो सकता। शायद वह गोस्वामी जीने स्पष्ट नहीं किया, या उसका प्रकट करना उन्होंने अनुचित समझा। तुलसीदासजीका जन्म नाम रामबोला था। इसके लिये उन्होंने कई स्थान पर उल्लेख भी किया है, या तो उन्होंने जन्मसे ही राम कहा होगा या रामके नामसे भिक्षा मांगी होगी इससे उनका नाम 'रामबोला' रहा होगा। पर जाति पांतिके सम्बन्धमें उन्हें कुछ न पता था जैसा कि"—धूत कहो अवधूत कहो रजपूत कहो

जुलहा कहो कोऊ" से विदित होता है। कुछ लोगोंको उन्हें ब्राह्मण मानने मेंभी सन्देह है क्योंकि जातिके अजातिके कुजातिके सभी लोगोंके टुकड़े उन्होंने खाये थे अतः यदि वे ब्राह्मण होते तो अवश्य इसको कहीं न कहीं लिखते। यद्यपि गोस्वामीजीने सुकुलमें जन्म होना लिखा भी है पर यह ठीक नहीं। क्योंकि अनेक जगहोंके टुकड़े खाने वाले व्यक्तिको ब्राह्मण मानना भी असंगत है।

माता पिता

तुलसीदासजीके माता पिता का नाम आत्माराम दुबे और हुलसी लोग बतलाते हैं। जिसके प्रमाण—

'साहिब सुजान जिन स्वानहुको पक्ष कियो
रामबोला 'शम्भुप्रसाद सुमति हिय हुलसी'
"गर्भ लिये हुलसी फिरैं तुलसी सो सुत होय'
(खानखाना की उक्ति)

परन्तु इससे यह स्पष्ट है कि हुलसीका अर्थ प्रसन्न होना ही दोनों पद्यों में अभीष्ट है। 'जग जाय तज्यो' जब इनको जन्मते ही छोड़ दिया तो उनका नाम वे कैसे जान सकने हैं ? तथा जब कहीं पिताका ही नाम नहीं लिखा तो फिर यह कैसे जान सकते हैं कि हुलसी शब्द उनकी माता का ही सूचक है।

इस विषयके विद्वानोंका मतभेद यह है कि:—

(१) काष्ठ जिव्हा स्वामी — "तुलसी पराशर गोत्र दुबे पत्यौजा के।"

(२) तुलसीराम आगरवाला कृत उर्दू 'भक्त-माल और राजाप्रतापसिंह कृत भक्तकल्पद्रुम' कान्य-कुब्ज होना मानते हैं।

(३) ठाकुर शिवसिंह पं० रामगुलाम द्विवेदी और डाक्टर ग्रियर्सन सरयूपारीण मानते हैं।

इस लेख के उपसंहारमें हम इनकी आलोचना करेंगे।

विवाह—

यद्यपि तुलसीदासजी के विवाहका वृत्तान्त दीनबन्धु पाठकके ससुर होनेका वृत्तान्त उनके किसी ग्रन्थमें नहीं है। हां, प्रियादासजी के 'भक्त-माल' द्वारा व महादेवप्रसाद के 'भक्ति-विलास' द्वारा यह प्रमाणित हो सकता है। परन्तु इन दोनों ग्रन्थों को यथार्थमय मानने को कोई तैयार नहीं। अतः इसका भी अभी निर्णय करना कठिन है।

गुरु—

गोस्वामी तुलसीदासजी ने यद्यपि "बन्दौ गुरु पद कंज कृपा सिन्धु नर-रूप-हरि"के द्वारा गुरुनाम स्पष्ट भी कर दिया है तथापि कुछ लोग यह भी नहीं मानते। इनके सुप्रसिद्ध 'कवितावली' नामक ग्रन्थ से इनके गुरु का कोई रामानन्दी सम्प्रदाय का होना विदित होता है, विशेष नहीं। तुलसीदास अपने गुरुके पास बालपनमें ही पहुंच गये थे। माता पिता से तजे जाने पर "नीच निरादर भाजन कादर कूकर टूकनि लागि"के अनुसार वे मांगते-मांगते जा रहे थे उसी समय उन्होंने राम की चर्चा सुनी 'तब रघुनाथसे साहब'के अनुसार उन्हें साधु मिला, जिसके द्वारा उन्हें स्वार्थ और परमार्थ दोनों प्राप्त हुए। यही अभिप्राय राम-चरित-मानस के—
"मैं पुनि निज गुरु सन सुनि, कथा सुसूकर खेत।
समुझि परि नहीं बालपन तब अति रहऊं अचेत॥
अब यहां 'सूकर खेत' पर भी विद्वानोंमें मतभेद है। क्योंकि मणिकर्णिका घाट काशी, नीमसार, हरिद्वार, सीता-कुण्ड-खेरी आदि कई स्थानों पर है। तो क्या 'सूकर-खेत' अन्यत्र कहीं नहीं हो सकता ? अतः इन सब उद्धरणों से स्पष्ट है कि तुलसीदास जी का जीवन-चरित्र अभी बहुत ही सन्दिग्ध है। अस्तु।

उपसंहार

लेखको विशेष लम्बा न करते हुए मैं यह कहूँगा कि ऊपर के जितने भी मतमतान्तर हैं; वे सारे के सारे सम्भवतः ठीक भी हों परन्तु कसौटी पर

ठीक नहीं ठहरते। ऊपर लिखा जा चुका है कि यदि अभुक्तमूल के कारण गृह-त्याग हुआ तो गोस्वामी जी ने इसका खण्डन व जिक्र क्यों न किया ? उत्तर स्पष्ट है कि गोस्वामीजी आदर्शवादी पुरुष थे। उन्होंने राम जैसे धीरोदात्त नायकका चरित्रावलम्बन किया था, यहां तक कि "होइ है सोई राम रचि राखा" के अनुसार उन्होंने यह समझा कि यह ईश्वरकी कृपा की बात है, वे उच्चकोटि केज्ञानी थे अतः उन्होंने कहीं इसका वर्णन नहीं किया। 'बिललात फिरे' आदि में तो उनकी ज्ञानोपासना का चित्रण है। 'शुनि चैव श्वपाके च पण्डिताः समदर्शिनः'। गीता के श्लोकानुसार उन्होंने सबके यहांका खाया। इससे क्या आपत्ति हुई। 'धूत कहौ....' पद कवितावलीका है। कवितावलीके विषयमें लिखा है कि ये स्फुट कवित्त आदिका संकलन है। सम्भवतः किसीने उन से जातिके विषयमें पूछा हो और उन्होंने कहा हो कि मैं तो रामोपासक हूँ, चाहे कोई कुछ ही कहो। भिक्षावृत्ति उनकी थी ही। प्रायः साधु कभी अपने को उच्च नहीं सर्वदा नीच बतलाते हैं अतः तुलसीदासजीने यदि नीच आदि अपने लिये कहा हो तो उसमें क्या बुराई है ? दूसरे रामोपासक होने के कारण वे अपने माता पिता की निन्दा कैसे लिख सकते थे, केवल 'तज्यो' ही कह कर रह गये। अब प्रश्न है अभुक्तमूलका।

[भुजङ्गपौरन्दरपौष्णभानां तदग्रभानां च यदन्तरालम्।
अभुक्तमूलं प्रहरप्रमाणं त्यजेत्सुतं तत्र भवां सुताञ्च ॥

के अनुसार अश्लेषा, ज्येष्ठा, मूला, रेवती और अश्विनी इनके अन्तरका एक प्रहर अभुक्त मूल संज्ञक है, इसमें उत्पन्न कन्या या पुत्रका त्यागना ही श्रेयस्कर होता है यह प्राचीन आचार्योंका मत है। मुहूर्तचिन्तामणि गोस्वामीजी की समकालिक रचना है। अतः वे शास्त्रोंके विपरीत कैसे लिख सकते थे। या 'पापका परिताप' माना जाय तो उनके माता पिताको अनिष्टप्रद बालक पापका स्वरूप था अतः तज्जन्य परितापसे उसका त्याग भी ठीक हो था, या 'जायो कुल मंगन बधावनो बजायो सुनि भयो परिताप पाप जननी जनकको' का अर्थ यह भी हो सकता है कि जननी जनकको लड़के के पैदा होनेके कारण जितने भी पापके स्वरूप थे वे परिताप आदि (जायो) अर्थात् चले गये। यहां यदि मंगनको मंगल कर दिया जाय तो मंगल कुल और सुकुल का अर्थ एक ही उच्चकुल प्रतीत होता है। सम्भवतः मंगल ही रहा हो, किसी प्रकार किसी ने 'मंगन' कर दिया हो। अस्तु। अब दूसरी बात उनके ब्राह्मण या अन्य जाति और कुल की है। इस विषयमें यह कथन है कि सुकुल शब्द या तो शुक्ल का अपभ्रंश है या सुकुल का आशय अच्छे कुलसे है। कुछ लोगों का विचार है कि 'सुकुल' भी हो, 'मंगन कुल' भी हो और जिसमें 'जांति-पांति' न हो, 'बल्कि जिस 'अपत-उतार की छांह छुए जग 'व्याध बाधका' सहमत है, जिसमें 'पेटाग्नि वश' जातिके कुजातिके अजातिके 'टूक' खाये जा सकते हैं तो ब्राह्मणोंमें ऐसी जातिका मिलना कठिन है। तथा जिसने 'मांग के खाइबो मजीत को सोइबो' के अनुसार सब जाति के 'टूक' खाये हों तथा जो जगह न मिलने पर मस्जिदोंमें सोया हो उसको कैसे ब्राह्मण माना जा सकता है ? इत्यादि इत्यादि। इसका उत्तर यह है कि किसी व्यक्तिने श्री गोस्वामी तुलसीदासजीको सर्वदा ब्राह्मण माना हो या 'इज्याध्ययनादि' से वे ब्राह्मण सदा रहे हों, तब यह कहा जा सकता है। हमारा कहना तो यह है कि वे ब्राह्मण कुलमें उत्पन्न हुए थे। साधुका काम सिवा भिक्षावृत्तिके और क्या हो सकता है ? सो उन्होंने वही किया जिसका उत्तर हम पहले दे चुके हैं। अब रह गया जन्मका प्रश्न सो सुकुल शब्दसे स्पष्ट है। सरयूपारीण या कान्यकुब्जके विषयमें हम किसी दूसरे लेखमें प्रकाश डालेंगे। रामबोला नाम चाहे कैसे भी पड़ा हो, था तो वही जैसा कि कवितावली के 'रामबोला नाम हौं' से स्पष्ट है। साधुओंकी कोई जाति नहीं होती अतः उन्होंने उसी अवस्थामें जातिपांति वाला पद लिखा होगा। तथा साधु होनेके बाद ही उन्होंने काव्यरचना प्रारम्भ की। अतः उन्होंने उस समय अपनी जातिका

प्रदर्शन करनेकी ओर कोई ध्यान नहीं दिया। अब प्रश्न रह जाता है उन्हें अपने कुलका ज्ञान कैसे हुआ? इसका उत्तर यह है कि या तो उनके गुरुने कहा होगा अथवा अन्य कारणान्तरसे यह ज्ञात होना कोई बड़ी बात नहीं। तथा बिना गोत्र या जातिके विवाह कैसे हो सकता है? विवाह उनका अवश्य हुआ था क्योंकि यदि पत्नी प्रेमके कथानकको हम निकाल देते हैं तो गोस्वामीजीके जीवनचरित्रमें कोई बात ही नहीं रहती जिसके कारण वे वैराग्य ले सकते। इसके अतिरिक्त एक यह भी विचारणीय बात है कि बिना सत्यके केवल जनश्रुति नहीं ठहर सकती। इसलिये उनका विवाह हुआ था। तथा डाक्टर ग्रियर्सन साहबने खोजमें कुछ ऐसे दोहे निकाले हैं जिनसे यह स्पष्ट भी हो जाता है:—

दुबे आत्माराम हैं, पिता नाम जग जान।
माता हुलसी कहत सब तुलसीके सुन कान॥
प्रहलाद उधारन नाम है गुरुका सुनिये साध।
प्रगट नाम नहीं कहत जो, कहत होय अपराध॥
दीनबन्धु पाठक कहत, ससुरनाम सब कोय।
रत्नावलि तिय नाम है, सुत तारक गति होय॥

कुछ लोगोंका यह विचार भी है कि ये पद्य उन्होंने अपने मित्र 'रहीम' को लिखा दिये थे। अस्तु। अब प्रश्न है उनके माता पिता और गुरुका। माताका नाम हुलसी था यह 'गर्भ लिये……' से प्रकट होता है। यदि यहां पर हुलसीका अर्थ प्रसन्नसे करें तो असंगत होगा, क्योंकि सुरतियसे ठीक मेल नहीं होता। केवल 'तुलसी सो सुत होय' के लिये हुलसी शब्दकी क्या आवश्यकता थी? 'प्रमुदित' या अन्य कोई शब्द रख देते। तथा ऊपरके दोहोंसे इन सब का भी निराकरण हो जाता है। गुरुके लिये मानस के आदिमें 'नर-रूप-हरि' कहा है जिसका अर्थ है कि नरहरि या नृसिंह। इसके साथ ही जितने महा-काव्य हैं उन सबमें सब लेखकोंने गुरुकी प्रशंसा उनके नामको लेकर की है। तथा उस समयमें ऐसा करना ग्रन्थके मङ्गलके लिये आवश्यक माना जाता था। अतः उन्होंने जो यह लिखा, वह वास्तवमें नाम रूपात्मक वर्णन है। यदि उसका अन्य अर्थ करनेकी चेष्टा करते हैं तो वह महा-काव्यकी एक विशेषता पर बज्रपात करनेके बराबर होता है। 'सूकरखेत' का किसी अन्य लेखमें विचार करेंगे; वह यहां पर स्थान और समयाभावसे नहीं कर रहे हैं। आशा है कि सुज्ञ पाठक इसे साद्यन्त पढ़कर कोई त्रुटि रह गई हो तो हमें सूचित करने की कृपा करेंगे।

परीक्षार्थियोंको सूचना

निखिल भारतवर्षीय विद्वत्परिषद्-विद्यापीठ, आगरा की आयुर्वेद, हिन्दी-साहित्य और संस्कृत-साहित्यकी कविराज, वैद्यराज, आयुर्वेदाचार्य, प्रथमा, विशारद, रत्न, तीर्थ, शास्त्री आदि परीक्षायें प्रतिवर्ष ग्रीष्म वर्षा और शीतकालिक सत्रों में हुआ करती है। वर्तमान वर्षके ग्रीष्मकालिक सत्रकी उपर्युक्त परीक्षायें आगामी २७, २८, जौलाई १९४६ को विद्यापीठके समस्त केन्द्रोंमें होंगी। परीक्षार्थियोंको शीघ्र ही प्रधान कार्यालयसे आवेदन पत्र मंगाकर विद्यापीठ वा केन्द्राध्यक्षोंके पास उन्हें सशुल्क भेजकर नियमानुकूल परीक्षामें सम्मिलित होनेकी स्वीकृति प्राप्त कर लेनी चाहिए। विशेष जानकारीके लिए नियमावली मंगाकर देखिए। बिना मूल्य भेजी जाएगी।

परीक्षा मन्त्री, नि० भा० विद्वत्परिषद् विद्यापीठ
प्रधान केन्द्र, बेलनगंज, आगरा।

विश्वनाथका ध्यान

[लेखक—राजकुमार गुरु ज्यौतिषालंकार श्री० पं० तारादत्तजी राज ज्यौतिषी]

स्वामिनः सर्व लोकस्य,	सदा ही कीजिए ध्यान
ध्यानं नित्यं विधीयताम्।	स्वामीका सब विश्वके।
यस्य स्मरण मात्रेण,	जिसके स्मरणसे केवल
कामाः सिद्ध्यन्ति देहिनः॥	होते हैं काम जीवके॥
प्रयत्नः प्राप्तये तस्य,	महा चातुर्य है यत्न
चातुर्यं परमं मतम्।	होनेमें प्राप्त जो उसे।
रता मुनीवरा नित्यं,	होमादिसे सदा तुष्ट।
होमाद्यैस्तत्प्रसादने॥	मुनीन्द्र करते उसे॥

इन संस्कृत पद्योंके आद्य पादाक्षर मिलानेसे 'स्वाध्यायका प्रचार हो।' यह वाक्य बनता है।

भरतपुर राज्यके प्राचीन कविगण

[लेखक — श्री नन्दकुमार जी शर्मा कविभूषण]

साहित्य-संसारमें व्रजसाहित्यका जो मान है वह किसी भी साहित्यसेवी पर अविदित नहीं। भरतपुर राज्य व्रजका सिंहद्वार है, और यहांके सुयोग्य शासक व्रजराजकी उपाधिसे अलंकृत हैं। इतना ही नहीं इस राज्यके संस्थापक एवं पोषकोंमें श्रीमहाराजा बदनसिंहजी श्रीमहाराजा सूरजमलजी तथा श्रीमहाराजा जवाहरसिंहजी आदि नर पुङ्गवों ने अपनी करारी कृपाण द्वारा न केवल व्रज-भूमिकी ही वरन् हिन्दुत्वकी महिमाकी रक्षार्थ जो जो वीरत्वपूर्ण कार्य किये हैं उनके कारण समस्त भारतके वीर जाट आज भी भरतपुरको अपना पुण्यतीर्थ एवं यहांके नरेशोंको अपना यशस्वी नेता मानते चले आ रहे हैं। उन महापुरुषोंकी अक्षयकीर्त्ति (यदि इतिहास हमारा है) भरतपुरके ही नहीं भारतके इतिहासमें स्वर्णाक्षरोंमें अङ्कित रहेगी।

वीरत्वके साथ साथ ही इन प्रजावत्सल नरेशों का साहित्य पर भी पूर्ण अनुराग रहा। अनेक सुकवियोंने समय-समय पर यहांके नरपतियोंके पुण्य एवं सुखद आश्रयमें रहकर निज काव्य मंदाकिनि द्वारा यहांके निवासियोंको काव्यामृतमें सराबोर किया हैं, किन्तु कुटिल काल चक्र के प्रभाव से उनकी कलाका विशेष प्रसार न हो पाया, और आज लगभग २०५ वर्ष हो जाने परभी, सूदन, सोमनाथ आदि दो चार सत्कवियोंको छोड़ साहित्यसंसार शेषके नामों तकसे परिचित नहीं है।

इतने दीर्घकाल तक उन सैंकड़ों सुकवियोंका इस प्रकार पतनके गर्भमें पड़ा रहना भरतपुरके साहित्य-सेवियोंके लिए ऐसा अमिट कलंक है कि जो "मुए न मिटि है भोय"। इस कलंक कालिमाके यत्किंचित् प्रक्षालनार्थ श्री हिन्दी-साहित्य समिति भरतपुरने सन् १९३६ में एक योजना भरतपुर राज्यके प्राचीन कवियोंकी खोज की तैयारकी थी। तदनुसार हमारे माननीय वयोवृद्ध वैद्य श्रीदेवीप्रकाशजी अवस्थी तथा इन पंक्तियोंके लेखकको तत्सम्बन्धी कार्य करनेका पुण्यावसर प्राप्त हुआ। लगभग २-३ वर्षके अविरल प्रयत्न द्वारा श्री अवस्थीजीके तत्वावधानमें भरतपुर राज्य के १५० के करीब कवियोंका पता लग सका, जिसका विवरण समितिमें सुरक्षित है, किन्तु प्रतिकूल परिस्थितियोंके कारण वह अमूल्य निधि अद्यावधि समितिके बस्तोंकी शोभा बढ़ाने तक ही सीमित है। नहीं कहा जा सकता कि समितिके सुयोग्य कार्यकर्त्ता कबतक सूमकी थातीकी भांति उसे छातीसे लगाये रहकर "खजूरसे सुलझी तो बबूलमें उलझी" वाली उक्तिको ही चरितार्थ करते रहेंगे।

पूरे दस वर्षकी दीर्घ कालीन प्रतीक्षाके पश्चात् आज इस बातके लिए विवश होना पड़ रहा है कि उसमें से यत्किंचित कवियोंका वृत्तपत्र पत्रिकाओं द्वारा ही पाठकोंके सम्मुख उपस्थित किया जाय। फलतः इस अंकमें केवल राज्यकाल विभागानुसार उन कवियोंकी सूक्ष्म नामावली प्रस्तुत की जारही है। यदि साहित्य जगत्‌ने इस ओर कुछ उत्साह दिलाया तो समय २ पर उनके वृत्त तथा कविताके अवतरण भी प्रस्तुत किये जानेका प्रत्न किया जावेगा।

राज्य स्थापनसे पूर्व कालिक

१ नरपतिनन्द २ लालदास ३ टहकन ४ राज्यके संस्थापक श्री महाराज बदनसिंहजी उपनाम 'बदन' 'बदनेस' (संवत् १७७८ से १८१२)

सुजान-काल

(संवत् १८१२ से १८२०)

५ 'सुजान' श्री० महाराजा सूरजमलजी, ६ अखैराम, ७ सोमनाथ, ८ सूदन, ९ रंगलाल, १० शिवराम, ११ केशव, १२ दत्त, १३ कृष्णभट्ट-"कलानिधि", १४ रामकवि, १५ हरिवंश १६ जुलकरन १७ सुधाकर, १८ पतिराम, १९ लालकवि, २० वीरभद्र, २१ हरिप्रसाद, २२ माधोराम,

जवाहर-काल

(संवत् १८२० से १८२५)

२३ रंगलाल, २४ मुरलीधर, २५ व्रजचन्द, २६ शोभकवि, २७ भोलानाथ, २८ भूधर, २९ मोतीराम, ३० सुरतीलाल।

इनके अतिरिक्त देव कविका भी यहां आना पाया जाता है।

(१८२५ से १८३४ तक म० रतनसिंह व केहरीसिंह रहे। किन्तु यह चित्र उल्लेखनीय नहीं है।

रणजीतकाल

(संवत् १८३४ से १८६२)

३१ उदेराम, ३२ चतुरा राय, ३३ मुरलीधर 'प्रेम', ३४ गोधाराय, ३५ देवेश्वर, ३६ श्रीधर, ३७ व्रजेश, ३८ प्रसिद्धि, ३९ गंगाधर, ४० जसराम, ४१ बंसीधर, ४२ मूलराय, ४३ भागमल, ४४ रमेश, ४५ रामानन्द।

रणधीरकाल

(संवत् १८६२ से १८८०)

४६ रसनायक, ४७ मोतीराम, ४८ रमेश, ४९ सुखदेव गंगाकिशोर मिश्र, ५० चन्द्रराय।

बलदेवकाल

(संवत् १८८० से १८८२)

५१ महाराजा श्री बलदेवसिंहजी, ५२ महारानी, श्री अमृतकुंवरी जी, ५३ गुलाब मुहम्मद, ५४ श्रीधरानन्द, ५५ जयदेव।

बलवंतकाल

(संवत् १८८२ से १९०९)

५६ महाराजा श्री बलवंतसिंहजी, ५७ धौंकल मिश्र ५८ महाकवि राम, ५९ रसानन्द, ६० वैद्यनाथ, ६१ सेवाराम, ६२ व्रजचन्द, ६३ गोपालसिंह, 'नवीन' ६४ देविया, ६५ चतुर्भुज मिश्र, ६६ गोपालसिंह, ६७ गणेश, ६८ धनेश, ६९ लक्ष्मीनारायण, ७० लालकवि, ७१ जुगलकिशोर, ७२ रूपराम ७३ बिहारीदास, ७४ दीवान भोलानाथ, ७५ दीवान ललिता प्रसाद, ७६ बलदेव, ७७ रामकृष्ण, ७८ जीवाराम, ७९ नरहरि दास, ८० रस रासि, ८१ पद्म कवि, ८२ रावजी अजीतसिंह, ८३ नथुआसिंह, ८४ बटुक नाथ, ८५ रामबक्स।

यशवन्त काल

(संवत १९०९ से १९४०)

८६ धाऊ गुलाबसिंह, ८७ हनुमन्त, ८८ नवलकिशोर, ८९ हरनारायण, ९० गुसाँई राम नारायण, ९१ काशी राम रसलदार 'मनोहर', ९२ पण्डित जानी बिहारी लाल, ९३ शोभाराम ९४ जानी, श्यामलाल, ९५ पंगु कवि, ९६ मोहनलाल, ९७ मणिदेव, ९८ कृष्णदास, ९९ झटपटराय, १०० रावजी कृष्णशरण—देव, १०१ रूपकिशोर, १०२ मुकन्द, १०३ कृष्णलाल।

कृष्ण काल

१०४ राम बल्लभ, १०५ राम प्रसाद, १०६ मंगल दत्त, १०७ गोपीनाथ, १०८ नाजिर राजाराम, १०९ मुरलीधर जमादार, ११० बल्देवप्रसाद, १११ सालिगराम, ११२ नत्थीलाल गरीबा, ११३ श्री महारानी गिरिराज कुंवरि जी, ११४ छेदालाल, ११५ बाबू कन्हैयालाल, ११६ गोपाल लाल माहेश्वरी, ११७ गुलाब जी मिश्र 'भूमिकंज', ११८ पं० शंकरलाल, ११९ पीरू, १२० पं० लक्ष्मी नारायण जी शास्त्री काजी, १२१ पं० गोकुलचन्द्र जी दीक्षित 'चन्द्र', १२२ किशोरीलाल, १२३ घासीराम।

इनके अतिरिक्त लगभग ६० के समान कवि हैं, जो अभी जीवित हैं।

पंजाब विश्वविद्यालयमें संस्कृतकी दयनीय दशा

[लेखक — श्री पं० सीताराम जी शास्त्री]

[इस लेखके वयोवृद्ध मान्य लेखक संस्कृतसाहित्यके मर्मज्ञ विद्वान् हैं। आप गा० म० संस्कृत कालेज अमृतसर और होश्यारपुर संस्कृत-महाविद्यालयके आचार्य-पदको अलङ्कृत कर चुके हैं। संस्कृत पत्रिका 'अमरभारती' का सम्पादन भी आपने किया था। इस समय आप स्थानीय राजकीय श्रीतारिणी संस्कृत महाविद्यालय (सोलन) में विद्यार्थियोंको उच्च-शिक्षा दे रहे हैं। पाठकों और विशेषकर पंजाब विश्वविद्यालयके अधिकारियोंका ध्यान हम आपके इस लेखकी ओर दिलाना चाहते हैं। —सम्पादक]

यों तो आजकल सर्वत्र भारतवर्षमें दिनों-दिन संस्कृतका सर्वांयवव्यापी ह्रास दिखाई दे रहा है। यद्यपि आज कहीं अध्यापकों और कहीं अध्ययन-अध्यापन की प्रणालीकी न्यूनतासे विश्वविद्यालयोंमें नियत परीक्षा परिपाटीसे संस्कृत अध्ययन करने वालोंकी प्रायः सर्वत्र योग्यता समान ही है। परन्तु यहाँ पंजाब विश्वविद्यालयमें साधारण (गद्यपद्यात्मक) लौकिक (काव्य नाटकीय) संस्कृतके अकुण्ठित ज्ञान वाले परीक्षक भी दुर्लभ होते दिखाई दे रहे हैं। यह बात आजकलके 'प्राज्ञ' आदिके प्रश्न पत्रोंके देखनेसे स्पष्ट ज्ञात हो जायगी।

यद्यपि वस्तुतः परीक्षार्थी परीक्षा नियुक्त ग्रन्थोंका आमूलचूड आलोडन किया है या नहीं? इस बात का स्थालीपुलाकन्यायसे जाननेका नाम ही परीक्षा है। परन्तु यहाँ पंजाबविश्वविद्यालयकी परीक्षाओंमें परीक्षकोंके प्रश्न वाक्य ही परम विकट होते हैं जिनसे व्युत्पन्न पण्डितोंके लिये भी परीक्षकका विवक्षित अभिप्रायका ज्ञान अतिकठिन हो रहा है उस दशामें उन अव्युत्पन्न विद्यार्थियोंको परीक्षकके विवक्षित अर्थ का ज्ञान कठिन ही नहीं असंभव सा हो जाता है।

कई प्रश्न परीक्षार्थीके अपेक्षित ज्ञान परिचयमें अनुपयुक्त निरालम्ब और निष्प्रयोजन गहन मार्गका आलम्बन करते हैं। जैसे प्रश्न बड़े ओजस्वी और गम्भीरार्थ हो। जिसके प्रभावसे प्रश्नार्थके अभिज्ञ भी अज्ञ जैसे प्रश्नोंके आगे विभ्रान्त हो जाय।

केवल परीक्षामें प्रश्नों तक ही यह बात नहीं। परीक्षामें नियुक्त ग्रन्थ व उनका संकलन संयोजन भी बड़े अनुपयुक्त निर्मूल और अपूर्व पद्धतिसे अथवा केवल पाश्चात्त्य प्रणालीके आदर्शसे होते हैं। न कि जिज्ञासु ज्ञेय और ज्ञान-साधन व प्रयोजनकी अपेक्षा से। इसके साथ ही आज कलके अध्यापकों व अध्येताओंकी योग्यताकी कमीको आलम्बन करके नव निर्माण किये जाने वाले 'टीका' टिप्पणी प्रश्नोत्तर, और निबन्ध, (प्रस्ताव) अनुवाद-पद्धति आदि सहायक प्रबन्ध भी संस्कृतके स्वरूपके ही ह्रासके सहायक बन रहे हैं। प्रायः नवनिर्माण किये जाने वाले सभी प्रबन्धोंमें पद- वाक्य नैसर्गिक प्रयोग मर्यादासे च्युत और कृत्रिम होनेसे अपरिचित व कठोर जैसे सहृदयोंके हृदयमें उद्वेग-कारी होते हैं। इनमें क्रिया-कारक संबन्ध ही बहुत स्थानोंमें असंबद्ध और अशास्त्रीय हैं। इन प्रबन्धोंके परिशीलनसे विद्यार्थी 'टीका' 'टिप्पण' 'प्रबन्ध' आदि निर्माणमें पथभ्रष्ट हो रहे हैं। अस्तु। इस बातका विस्तर न करके उन पूर्वोक्तविषयों को सहृदयोंके सम्मुख उपस्थित करते हैं। प्रथम सन् १९४५ के प्रश्नपत्र अनुवाद (६) देखिये। यथा 'निम्नलिखित गद्यांशोंका हिन्दीमें अनुवाद करो।'

(क) "यस्मिन् देशे आदर्शपुरुषा जायन्ते तथैव तस्य देशस्योन्नतिर्भवति। महापुरुषाणामादर्शस्वरूपाणां जीवनचरितानामवलोकनेन तथैव

तत्रत्यानां मानवानां जीवनानि परिवर्तन्ते। यत्रादर्शपुरुषा उच्चहृदया जायन्ते तदा तत्रत्या मानवा अप्युच्चहृदयाः यदादर्शपुरुषाः संकीर्णहृदया भवन्ति तदा तत्रत्या जातिरवनतिं प्रैति। अतएव भिन्न देशनिवासिनां शिक्षा सभ्यताभावः कल्पनाबुद्धिर्मानसिकभावनासंस्कारा भिन्नप्रकारा भवन्ति। अतएव देशं कालं च विचार्य, यस्मिन् काले यस्मिन् देशे ये सर्वोच्चाः सर्वमान्या आदर्शाः पुरुषाः स्युः तेषां प्रशस्तगुणानां ग्रहणं सर्वथोचितमस्तीति। आदर्श पुरुषस्य जीवनं सर्वत्र सर्वं सुखयति"।

(ख) "पराधीनता मानवानामन्यविधं मरणमेव। यो यस्याधीनो भवति स गर्हितामप्रियामपि तस्य प्रभोराज्ञां पालयितुँ बाध्यते। स्वाभिमतं कर्म संपादयितुं न कदापि पारयति च। कियन्तो मानवाः पराधीनाः प्रभोर्जयाय समरे प्राणांस्त्यजन्ति। पराधीनस्य नरस्य कदाचिदपि मनसः प्रशमनं सुखं न जायते। अतः सर्वथा सर्वैरेव पराधीनता शृङ्खले चरणौ न देयौ। पराधीनतायां राजभोग्यद्रव्यमपि न मधुरम्।...।"

इसमें जो संस्कृत सन्दर्भ है——चाहे वह परीक्षकका अपना व पराया मर्यादा बद्ध (मुहाविरेदार) नहीं। पद-वाक्योंकी प्रयोगशैली भ्रष्टहै। वास्तवमें यह संस्कृत संस्कृत जैसे सुबन्त और तिङन्त पदोंके विन्याससमात्रसे 'संस्कृत' हैं। जैसे काठका घोड़ा 'घोड़ा'

इसमें पहला वाक्य देखिये——

"(क) यस्मिन् देशे आदर्शपुरुषा जायन्ते तथैव तस्य देशस्योन्नतिर्भवति।" यदि इस वाक्यका आशय=जैसे २ जिस २ विद्यागुण-स्वभाव वाले आदर्श पुरुष होते हैं वैसे ही उस देश के लोक होते हैं।" तो "तथैव तस्योन्नतिर्भवति।" (वैसी ही उस देशकी उन्नति होती है) यह बात कैसे संगत हो सकती है? जब कि आदर्शके अनुसार उन्नति और अवनति दोनों हो सकती है। इसके अनुसार ही आगे दिखाया गया। यथा—"यत्रादर्शपुरुषा उच्चहृदया जायन्ते तदा तत्रत्या मानवा अप्युच्चहृदयाः यदादर्शपुरुषाः सङ्कीर्णहृदया भवन्ति तर्हि तत्रत्या जातिरवनतिं प्रैति।" (जिस देशमें आदर्श पुरुष उच्चहृदय होते हैं तब वहाँके लोक भी उच्चहृदय होते हैं। जहां आदर्श पुरुष संकीर्ण हृदय होते हैं तो वहांके लोक अवनतिको पहुंचते हैं)

इस संदर्भका उपसंहार भी निरुक्त अभिप्रायके साथ संगति नहीं खाता। यथा "आदर्शपुरुषस्य जीवनं सर्वत्र सर्वं सुखयति"। (आदर्शपुरुषका जीवन सब जगह सबको सुख देता है)

तथा "जायन्ते" इस क्रियापदका भी उक्त अभिप्रायके साथ साङ्गत्य नहीं होता।

हां, यदि "यस्मिम् देशे" इत्यादि उपक्रम वाक्यका यह अभिप्राय हो (देशमें जैसे २ आदर्श पुरुष पैदा होते जाते हैं वैसे २ वहांकी उन्नति होती जाती है) तो उपसंहार और "जायन्ते" क्रियापदकी उपक्रमवाक्यके साथ संगति हो जाती है। परन्तु "यत्रादर्शपुरुषा उच्चहृदयाः"। इत्यादि बीचका सन्दर्भ इस अभिप्रायके साथ संगति नहीं पाता।

तथा 'प्रैति' 'सभ्यताभावः' 'बाध्यते' 'मनसः प्रशमनम्' 'पराधीनता शृङ्खले' 'राजभोग्यद्रव्यम्' इत्यादि पद भी असंगत हैं।

[शेष आगामी अङ्कमें]

अमूल्य उपदेश

(१) जिस मनुष्यकी निन्दा की जाती है वह समझता है कि निन्दा करने वालेने उसकी बड़ी हानि की है, वह अशान्त और म्लान हो जाता है और निन्दाके मिटानेका प्रयत्न करता है, त्यों-त्यों वह सत्यका रूप धारण करने लगती है और उससे उसका कष्ट बढ़ता ही है घटता नहीं।

वसन्त के प्रति

[ले०—बालकवि श्री रमानन्द सारस्वत साहित्यरत्न]

पीले पातों में भर भर कर,
नव जीवन की जोती !
तुमने रश्मि-राशि से दीपित,
कर दी जगती सोती !!
अपनी विमल-विभासे भावुक !
यह परिवर्तन कैसा ?
आज विपंची के तारों में,
यह नव—स्पन्दन कैसा ?
गूंज रही है मधुर-मधुर-सी,
आज मृदुल किस की बोली ?
किसने इस नीरस पतझर में,
स्वर्गिक सुषमा घोली ?
कोयल आती है गाने को,
मञ्जुल मधु के गाने !
'कुहू' 'कुहू' में 'हूक' 'हूक' की,
सुलगी आग दबाने !!

उसकी पञ्चम-स्वर—लहरी में,
कितना राग भरा है !
हल्दी—घाटी के दागों में,
अब भी प्यार भरा है !!
जगने लगती है फिर से,
वह सूनी हुई रवानी !
आज कल्पना के धागे में,
मरु की तरल निशानी !!
किन्तु, अरे, परतन्त्र लेखनी,
क्या लिख सकती वैसा ?
अमर रंगे उन इतिहासों में,
छन्द, चन्द, भूषण का जैसा !!
आज जगे तुम अपनी लेकर,
नव—जीवन सी हाला !
इसमें भी वैसा रस भर दो,
जिस से जग हो मतवाला !!

विश्वसाहित्यकी अमूल्य निधि गीतामें वर्णित 'दिव्यरथ'

लेखक—श्री पं० धर्मभानुजी शास्त्री बी०ए०

आत्मानं रथिनं विद्धि शरीरं रथमेव तु (गीता)

श्रीमद्भगवद्गीता—रत्नाकरके परिमन्थनसे कितने ही अमूल्य रत्न हाथ लगते हैं इसका अनुभव उन स्वाध्यायशील सज्जनों को है, जो रह-रह कर इसके सुगम्भीर हृदयमें उतरा करते हैं। श्री भगवान् ने पग-पग पर दिव्य-मणियां बिखरे रखी हैं। उनकी आभा बलात् ही अन्तस्तल को देदीप्यमान करती हुई सत्य—असत्य, नित्य-अनित्य, आत्म-अनात्म का तत्त्व सम्मुख ला धरती है। आज हम 'श्रीस्वाध्याय' के सतत-स्वाध्याय-परायण सहृदय महोदयोंकी सेवामें ऊपर उद्धृत की हुई एक पंक्तिपर एक 'मनन' उपस्थित किया चाहते हैं।

श्री भगवान् अपने सच्छिष्यको समझाते हुए इतना कहते हैं कि 'ऐ अर्जुन ! तू इस शरीरको रथ जान और शरीर-व्यापी आत्माको रथी अर्थात् रथका सवार समझ।' कितनी सीधी-सी बात किन सरल शब्दों में कहीं गई है — इन शब्दोंके नीचे कितना विशाल भाव सागर चल रहा है, तनिक उसका भी पर्यवेक्षण कर लें।

देही तो है रथी और देह है रथ — रथकी आवश्यकता एक व्यक्तिको कब आ जागती हैं। जब वह अपने घरसे बाहर जानेका अभिलाषी हो। अपने गृह के आंगनमें कभी कोई रथ नहीं हांका करता। घरके कमरोंमें टांगा या मोटर नहीं चलाये जाते। ज्यों ही सूक्ष्म विकल्पकी मृदुल-लहर किसी अपने संस्कार-समीरके हलके से झोंकेसे उठी, तत्काल ही इच्छा का जन्म हुआ और यह दिव्य देहधारी मनुष्य अपने घरसे बाहर जानेको उद्यत हो गया। और उसी समय ही इसे किसी-न-किसी सवारीकी आवश्यकता हुई।

जब हम किसी व्यक्तिको रथ पर बैठा देख पाते हैं, सहज ही इस परिणाम पर पहुंचते हैं कि वह अपने घर पर नहीं। जब यह आत्मा रथारूढ़ हुआ तो दूसरे शब्दोंमें वह अपने गृह पर न रहा। किसी यात्राके पथ पर चलता हुआ होना चाहिये। क्योंकि सवारी सदा बाहर निकलनेके लिये ही ली जाती है। सुतराम् — यह अमर आत्मा हमारा इस दिव्य नर देह-रथ पर आज कल आरूढ़ है अपने घर से निकला हुआ है। अपने देशको त्याग कर प्रकृति-बिहारमें संलग्न है। इसने अपना सुख धाम कब छोड़ा, क्यों छोड़ा,वह धाम है क्या, यह कब वहां लौटेगा, इन सभी की चर्चा हमें यहाँ नहीं करनी — हमें तो केवल देही-रथी और देह-रथ इन दोका ही अनुशीलन करना है, विशेषतः देह-रथका ही।

हां, तो यह आत्मा हुआ रथी-रथपर सवार, गृह निर्वासित, अपने लक्ष्य के पथ पर। रथ-आदिक सवरियां दो ही अवस्थाओंमें हमारे पास रहा करती हैं, एक तो जब हमने यात्रा आरम्भ कर दी हो, दूसरा जब तक अपने निर्दिष्ट स्थान तक नहीं पहुंच पाये हों। जीवन तो एक यात्रा है। प्रत्येक जीव उस यात्राको पूर्ण करनेमें लगा हुआ है। आत्मा ही वह यात्री है। जन्म-जन्मान्तरोंसे वह इस यात्राको चला रहा है। इसे परिपूर्ण करनेके लिए यह अनेक रथों को ग्रहण करता है। जैसा-जैसा मार्ग होता है, वैसे-वैसे ही उसे साधन अथवा वाहन लेने पड़ते हैं।

कल्पना करिये किसीने अमृतसरसे लङ्का जानेका सङ्कल्प किया है। अपने घरसे स्टेशन तक पहुंचने के लिये वह टांगा पकड़ता है। ज्यों ही स्टेशन पर पहुँचा टांगा छोड़ना पड़ा। बाम्बे एक्सप्रेसमें जा बैठा। बम्बई तक तो वह ले आई। आगे लहराता हुआ लोल जलधि, उसे जलयानका आश्रयलेना पड़ा। सागर भी लांघ गया। लङ्का नगरमें पहुंचनेके लिये पुनः उसे कोई-न-कोई वाहन लेना चाहिये। जब तक वह पथिक लङ्काके अपने नियत स्थान पर नहीं पहुंच पाता, उसे कोई-न-कोई वाहन चाहिये ही था। ज्यों ही नव-गृहमें पदार्पण किया सभी रथ अनावश्यकसे हो गये। इसी तरह यह अमर यात्री हमारा आत्मा

अपने परम-दिव्य-धाममें पहुंचनेके लिये अनेकों वाहनों का अवलम्बन लेता है जिन्हें हम देह कहते हैं गीताके शब्दोंमें उन्हें ही रथ नामसे वर्णित किया गया है। यह रथ शरीर कब छूट सकता है? या तो जब यात्राकरने की आवश्यकता ही न हो, अथवा यह यात्री जब अपने दिव्यधाममें पहुंच जाये।

कभी यह आत्मा यात्री उस परब्रह्मकी दिव्य प्रेममयी गोदमें निज स्वरूपमें लीन था। ज्यों ही महासूक्ष्म प्रकृति क्रीड़ाकी वासना उद्‌बुद्ध हुई कि स्थूल देह रथ पर बैठकर लगा विचरण करने लोक लोकान्तरोंमें। यात्रा के उतार चढ़ाव में जा पड़ा।

यात्रा कितनी भी सुखद हो, निरापद हो, है फिर भी यात्रा। एक यात्री जो फ्रण्टियर मेलके एक निस्तब्ध कक्ष Air Conditonedcar में बैठा है। खान पानकी सब व्यवस्था है। कितने ही कुशल सेवक उसकी परिचर्यामें हैं परन्तु जब कभी भी वह सोचता है कि मैं कहां पर हूँ तो हृयसे एक मधुरध्वनि उसके कान में पुचकार देती है 'तू अपने घरमें नहीं बैठा।' इतने आनन्द पूर्ण वातावरणमें भी वह पान्थ अपने गृहकी-सी मंगल भावनाओंका अभाव सा पाता है। रह-रह कर एक हूक-सी उठती है कि मैं यात्रा कर रहा हूँ, किसी सवारी पर बैठा हूं। वह चञ्चल रहनी ही है, क्योंकि एक यान है। वाहन कोई भी हो घरका स्थान नहीं ले सकता।

एक बात और — जैसा-जैसा मार्ग होता है, वैसा-वैसा ही वाहन अभिप्रेत होता है। मरुभूमिमें मोटरका क्या काम। टांगा अथवा साइकलकी गम्यता वहां नहीं। पर्वतोंकी उच्चावच भूमिमें लारी या गाड़ीकी क्या गति। लहराते हुए उदधिमें जलयान ही काम आ सकता है, मनुष्यकी यह जीवन नदी जीवन मरणके दो किनारोंमें बह रहीं है। इस जीवन यात्राको सुचारू रूपसे चलानेके लिये जैसी जैसी भी देह इसे चाहिये वही इसे प्राप्त हो जाती है। कभी मच्छरकी-सी लघु-कायामें बैठ कर जल पर तैरता है, कभी सरीसृप होकर भूमि पर सरक लेता है, विहगरूपमें 'व्योम-विहारी' बन जाता है, कभी क्रमेलक बना हुआ मरुभूमि में विहार करता है और कभी मृग बना जहां द्रुतगति से कुलांचे भरता है वहां कभी मदोन्मत्त गजराज बना हुआ मन्द-मन्द मृदुल गतिसे भी यात्रा-पथ पार कर रहा होता है। किन्तु ये सभी वाहन इस अनन्त यात्रा के पथिकको पूरे नहीं पड़ते--मार्ग काटे नहीं कटता। बीच २ में कभी २ इसे यह दिव्य-रथ नर देह भी प्राप्त हो जाता है। यह रथ अलौकिक है। यह तो वह वाहन है जो एक ही सपाटेमें चौदह भुवनोंको छान आये। उग्र गतिसे चलने वाली होकर भी सभी गाड़ियां जो भूप्रदेश पर काम आती है, छोटी सी नालीके आजाने पर रुक जाती है, उसे अतिक्रमण करनेमें अशक्त सी हो जाती हैं। सिपाहीके चतुष्पथमें ठहरे होने करके उसके संकेत की प्रतीक्षामें अड़ी रहती हैं। उसका एक क्षुद्र सङ्केत इन द्रुतगामी वाहनोंका समस्त दर्प दलित कर देता है। परन्तु आकाशमें स्वच्छन्द उड़ान भरने वाला व्योम यान—जो पहाड़ोंकी ऊंची चोटियोंको नीचे छोड़ता, बड़ी २ दुर्गम घाटियोंको लांघता, बीहड़ कान्तारोंको अनदेखा सा करता, बढ़ता चलता है, उसे कौन रोके? निर्बाध गति है उसकी। न तो उसे नदी-नालोंका भय, न किसी निष्ठुर सिपाहीकी उसे अपेक्षा—यह मानव-देह वही तीव्र गति वाहन है। यह भूलोक परसे ही समस्त ब्रह्माण्डों का परिभ्रमण करा लाता है।

यह रथी वर्तमानमें उस दिव्यरथका अधिकरी बन चुका है। इसे तो बहुत ही शीघ्रतासे अपनी यात्रा पूर्ण करनी चाहिये, दिव्य-रथसे दिव्य तक पहुंच जाए —देवता इसी दिव्य-रथकी कामना करते हैं। इसी पुरुषसे खेल खेलनेकी साध रखते हैं। श्रीमद्‌भागवतमें आया है:—

सृष्ट्वा पुराणि विविधान्यजयात्म शक्त्या,
वृक्षान् सरीसृप पशून् खगदंश मत्स्यान्।
तैस्तैरतुष्टहृदयं पुरुषं विधाय,
ब्रह्मावलोकधिषणं मुदमाप देवाः॥

भाव यह कि नरकी अभिरुचि नारायणकी ओर रहे। जिसका जीवन लक्ष्य प्रकृति-सेवन है; विभु सत्तासे जो प्यार नहीं करना चाहते वे ही इस दिव्य

रथको बड़ी अवहेलनासे हाँकते हैं। उस दिव्य-धाम से वञ्चित रह कर निरन्तर नये २ टूटे फूटे अपूर्ण इतर बाहनों पर बैठे हुए सदा निज गृहसे निर्वासित रहते हैं। यात्राको लम्बा किये जाते हैं। कई तो यात्री निराश होकर इस रथको ही तोड़ देते हैं। कई इसे मायाकी गहरी दल-दलमें उलझा कर आगे बढ़ने नहीं पाते। कई बुद्धिमान् यात्री ऐसे भी हैं जो इस दिव्य-रथकी ही दिव्यता पर मुग्ध होकर इस पर लट्टू हुए रहते हैं। सौन्दर्यके आधार ज्योतियोंकी ज्योति अपने मंगलमय आत्मरूपको नहीं देख पाते। रथी होकर रथकी छवि पर भूल जाते हैं।

आज इस महासमरमें कितने कोटि इन दिव्य देह-रथोंकी दुर्दशा देखनेमें आ रही है। इस मानव का जीवन-लक्ष्य कुछ और ही हो गया है। इसने अपनेको रथी नहीं रथ ही मान लिया है। अर्जुनको श्री भगवान् यही तो तत्त्व समवगत कराते हैं कि 'ऐ महाबाहो! अपनेको रथी जान, रथ नहीं। रथ तो यह काया है। जो रथ पर है वह प्रवासी है। गृह-निर्वासित है इसलिये दुःखी है, अशान्त है, विक्षुब्ध है।

आओ, हम 'स्वाध्याय' के स्वाध्यायशील पाठक इस दिव्य-रथको चीन्हें, इसकी सार्थकताको बनाएं और अपने चरम लक्ष्य पर पहुँच कर इस रथकी भी अपेक्षा न रक्खें—निज-धाममें जा उतरें।

प्रान्तीय स्वराज्य और मंत्रिमंडल

सन् १६१६ में माण्टेग्यू चेम्सफोर्ड सुधारोंके अनुसार भारतमें उत्तरदायित्वपूर्ण शासनका श्रीगणेश किया गया था। उसके अनुसार केन्द्रीय व्यवस्थापिका सभाके सदस्योंकी संख्यामें वृद्धि कर दी गई, तथा प्रान्तोंमें द्वैधशासन प्रणालीका सूत्र पात हुआ। इस द्वैधशासन प्रणालिके अनुसार बहुतसे अधिकार तो गवर्नरोंके हाथमें ही रहे, किन्तु शिक्षा स्थानीयस्वराज्य आदि कुछ एक विभाग जनता द्वारा चुने हुए मन्त्रियोंको सौंप दिये गये। सन् १६३२ में ब्रिटेनके तत्कालीन प्रधानमन्त्री रेमजे मैकडानल्डकी घोषणासे भारतको साम्प्रदायिक बटवारा (कम्युनल एवार्ड) मिला। इससे हिन्दु मुसलमान सिक्ख आदिको प्रथक् निर्वाचनका अधिकार दिया गया। साथ ही हरिजनों को हिन्दुओंसे भिन्न माना गया। किन्तु महात्मा गान्धीजीके प्रयत्नसे हरिजन हिन्दुओंमें ही मान लिए गये।

सन् १६३५ के नये शासन-विधानमें भारतको संघशासन देनेकी घोषणा की गई। किन्तु संघ-शासनके लिए विभिन्न प्रान्तोंका स्वतन्त्र होना परमावश्यक है। अतः संघशासन चालू करनेके लिए सन् १६३६ में भारतके प्रान्तोंको स्वतन्त्रता दे दी गई।

व्यवस्थापिका सभाओंके सभी सदस्य जनता द्वारा निर्वाचित ही लिये जानेकी घोषणा की गई। और द्वैधशासन-प्रणालीका अन्त कर दिया गया। तथा सम्पूर्ण अधिकार जनता द्वारा चुने हुए मन्त्रिमण्डलको दे दिये गये। इस प्रकार शासन की सम्पूर्ण शक्ति एक प्रकारसे जनताको

हस्तान्तरित कर दी गई। अर्थात् मन्त्रिमण्डलको प्रान्तोंके शासन कार्यके लिए पूर्णाधिकार दे दिये गये। किन्तु यह अधिकार एक हाथसे देकर साथ ही दूसरे हाथसे छीन लिए गये। क्योंकि इस विधानमें भी गवर्नरकी शक्तियां यथापूर्व अक्षुण्ण रखी गई। व्यवस्थापिका सभा द्वारा कोई भी स्वीकृत प्रस्ताव तब तक कानूनका रूप ग्रहण नहीं कर सकता जब तक कि गवर्नरकी स्वीकृति न मिल जाए। दूसरी ओर व्यवस्थापिका सभाको बिना सूचित किये हुये भी गवर्नर अपने विशेषाधिकारोंसे आर्डिनैंस भी जारी कर सकता है। इसका अर्थ यह हुआ कि मन्त्रि-मण्डल सम्पूर्ण कार्य गवर्नरकी इच्छानुसार ही कर सकता है और उधर गवर्नर अपनी इच्छासे मन्त्रिमण्डलसे बिना पूछे आर्डिनैन्स (अस्थायी कानून) बना सकता है। यद्यपि ब्रिटिश गवर्नमैंएटने विश्वास दिलाया है कि गवर्नर यथा सम्भव मन्त्रिमण्डलके कार्योंमें हस्तक्षेप न करेंगे; तथापि बहुत बार ऐसा हुआ है। सिन्धके प्रधान मन्त्री अल्लाबक्षको तो गवर्नर जनरलने अपने पदसे ही हटा दिया था।

इस विधानके अनुसार मद्रास, बम्बई बंगाल संयुक्तप्रान्त और आसाममें दो-दो भवन बनाये गये, एक निचला (लैजिस्लेटिव असेम्बली) दूसरा ऊपरला (लैजिस्लेटिव काउन्सिल)।

पंजाब, सीमाप्रान्त, सिन्ध, मध्यप्रान्त और उड़ीसामें एक भवन (लेजिस्लेटिव असेम्बली है ही) भारतमें केवल अभी तक १४ प्रतिशत जनताको वोट देनेका अधिकार मिला है।

सन् १९३६ के निर्वाचनमें कांग्रेसने भाग लिया और परिणामस्वरूप पंजाब, सिन्ध और बंगालको छोड़कर शेष प्रान्तोंमें कांग्रेसी मन्त्रिमण्डल बन गये। किन्तु देशको बिना पूछे ही भारतको युद्धग्रस्त देश घोषित कर दिया गया। क्योंकि मन्त्रिमण्डलोंकी स्वीकृतिके बिना ऐसा कर दिया गया, अतः लगभग दो वर्ष कार्यकरनेके पश्चात् कांग्रेसी मन्त्रिमण्डलोंने त्याग पत्र दे दिया। और इस प्रकार १९४६ तक उक्त आठ प्रान्तोंमें गवर्नरी राज, धारा ९३ के आधार पर चालू रहा। इस अवधिमें सभी कांग्रेसी प्रधान मंत्री कारागृहमें जा बैठे। किन्तु अन्ततः ब्रिटिश गवर्नमैंएटको जनताके सामने झुकना पड़ा। कांग्रेसी मन्त्री जो कल तक कैदी थे आज फिर अपने पदों पर आ विराजे हैं। यह कहनेकी आवश्यकता नहीं होनी चाहिए कि कांग्रेस मन्त्रिमण्डलने अपने छोटे से शासन कालमें अत्यन्त महत्त्वपूर्ण कार्य किये थे। यू० पी० में निरक्षरता निवारणका आन्दोलन चलाया गया। मद्रासमें शराबबन्दी कानून पास किया गया और हिन्दुस्तानी प्रचारके लिए प्रशंसनीय प्रयत्न किया।

इस प्रकार दूसरे प्रान्तोंमें भी जनहितकर कार्य सम्पादित हुए। हाल हीमें हुए नये निर्वाचनमें भी बंगाल और सिन्धको छोड़कर नौ प्रान्तोंमें कांग्रेसी मन्त्रिमण्डल बन गये हैं। सीमान्तमें तो कांग्रेसको अभूतपूर्व सफलता मिली है। वहांके पठानोंने एक बार फिर स्पष्ट घोषित कर दिया है कि हम कांग्रेसके लिए सर्वस्व समर्पित करनेको तैयार हैं और पाकिस्तान न बनने देंगे। पंजाबमें कांग्रेस पार्टीका संयुक्त मंत्रिमण्डल बनना भी आशा जनक हैं। शेष जिन प्रान्तोंमें शुद्ध कांग्रेस मन्त्रिमण्डल बनें हैं उनमें तो अवश्य ही दिन दूनी रात चौगुनी सर्वतोमुखी उन्नति होगी ही।

इसके अतिरिक्त ब्रिटिश मन्त्रिमण्डल मिशन आज कल भारतमें आया हुआ है। लार्ड पैथिक लारैंन्स (भारत-मन्त्री) सर स्टेफर्ड क्रिप्स और एलेग्जेण्डर सरीखे भारतहितैषी महानुभाव पूर्ण प्रयत्न कर रहे हैं कि भारतको शीघ्र ही स्वराज्य प्राप्त हो जाय। भगवान् करे इनके प्रयत्न सफल हों, भारत और इंगलैंडके आपसी अच्छे सम्बन्ध बनें रहें।

———

श्रीः

श्रीस्वाध्याय

का

ज्योतिर्विज्ञान परिशिष्टांक

(वसन्तांक सं० २००३ वि०)

"श्रीस्वाध्याय" के प्रत्येक स्तम्भकी सामग्री एक प्रकारसे स्थायी साहित्यकी ही वस्तु होती है। किन्तु धर्मस्तम्भमें पर्वव्रतोत्सवादि निर्णय, राशिफलादि एवं अर्थ-स्तम्भमें ग्रहोंका तेजीमन्दी पर प्रभाव, व्यापार व्यवसाय आदि कुछ एक सामयिक विषय भी आवश्यक होते हैं, वे इस परिशिष्टाङ्क में दिये जा रहे हैं

प्रधान सम्पादक—

श्री पं० हरदेव शर्मा त्रिवेदी ज्योतिषाचार्य, सोलन (शिमला)

सहायक सम्पादक—

श्री पं० विशुद्धानन्द गौड़ ज्योतिषाचार्य प्रो० श्री रा. कृ. सं. कालेज खुर्जा

प्रकाशक—

श्रीस्वाध्यायसदन सोलन (शिमला)

ग्राहकोंसे आवश्यक निवेदन

गताङ्कमें ज्योतिर्विज्ञान परिशिष्टाङ्कके १६ पृष्ठ अन्तमें देकर हमने 'श्रीस्वाध्याय' के इस ज्योतिषसम्बन्धी स्तम्भको ज्योतिर्विज्ञान प्रेमी महानुभावों और व्यापारी वर्गके लाभार्थ मासिक रूपमें प्रकाशित करनेका विचार प्रकट किया था। हमारे परम स्नेही बन्धुवर श्री पं० विशुद्धानन्द जी गौड़ ज्यौतिषाचार्य महोदयने इस विभागका सहायक सम्पादकत्व स्वीकार कर लिया यह पाठकोंको विदित ही है। गताङ्कमें ज्योतिषाचार्यजीके विशेषचान्स और माघकी तेजी-मंदीका जो लेख प्रकाशित हुआ था उससे व्यापारियोंने पर्याप्त लाभ उठाया और अनेकों व्यापारियोंने प्रशंसा पत्र भेजकर फाल्गुन और चैत्र मासकी रिपोर्ट और स्पेशल चान्स भी उक्त ज्योतिषाचार्यजीसे मंगवाये थे, उन्हें हस्तलिखित रिपोर्ट भेज दी गई थी। इसीसे आप अनुमान लगा सकते हैं कि 'श्रीस्वाध्याय' के मासिक हो जाने पर सर्वसाधारण जनता और व्यापारी वर्गको कितना अनुपम लाभ होगा। दो सौके लगभग ग्राहकोंने मासिक संस्करणके ग्राहक होनेकी स्वीकृति हमारे पास भेजी है, किन्तु कोई भी पत्र केवल २०० ग्राहकोंके बल पर नहीं चल सकता। अतः हम पुनः गताङ्कमें प्रकाशित ५०० ग्राहकोंकी मांगका स्मरण कराकर प्रत्येक ग्राहकसे निवेदन करते हैं कि वे अधिकसे अधिक मासिक संस्करणके ग्राहक बनाते हुये ८) रु० वार्षिक मूल्य भिजवाकर आरम्भिक कार्यमें सहायक हो जावें तो हम आगामी आषाढ़ माससे ही इसे मासिकका रूप देकर अधिकसे अधिक सेवा कर सकेंगे। मासिक रूप देनेके लिए आरम्भमें हमें पर्याप्त परिश्रम और व्यय करना पड़ेगा। सोलनमें प्रेस आदिकी सुविधा न होनेसे दिल्लीमें शाखा कार्यालय (ब्रांच) स्थायी रूपसे स्थापित करना होगा, तब यह कार्य सुचारु रूपसे चलेगा। एतदर्थ जिन ग्राहकोंने स्वीकृति भेजी और वी० पी० मंगानेके लिए लिखा है वे सब वार्षिक मूल्य ८) रु० मनीआर्डरसे भेजकर स्थायी ग्राहकोंमें नाम लिखानेकी कृपा करें। मासिक संस्करण प्रकाशित होने पर वार्षिक मूल्य ६) रु० और एक प्रतिका १) रु० हो जाएगा। मनीआर्डरसे पहले भेजकर स्थायी ग्राहक बनने वालोंके लिए ८) रु० ही रहेंगे। मनीआर्डरके कूपन और पत्रमें अपना पूरा पता स्पष्ट अक्षरोंमें साफ लिखना चाहिए। गत मासमें कई व्यापारियोंने स्पेशलचान्स और रिपोर्ट मंगवाई थी उनमेंसे कुछ लोगोंके पते स्पष्ट न पढ़े जानेसे नहीं भेजी जा सकी, अस्तु।

'श्रीस्वाध्याय' के ग्राहक व्यापारी वर्गके लिये स्वर्ण सुयोग

'श्रीस्वाध्याय' ज्योतिर्विज्ञान परिशिष्टाङ्कके सहायक सम्पादक श्री पं० विशुद्धानन्द जी गौड़ ज्योतिषाचार्य (प्रोफेसर श्री रा० कृ० संस्कृत कालेज खुर्जा) ग्रीष्मावकाश (छुट्टियों) में दो मासके लिए प्रधान कार्यालयमें सोलन आ रहे हैं। आपकी प्रत्येक वस्तु पर दैनिक (रोजाना) रिपोर्ट और शत-प्रतिशत लाभदायक एकतर्फा लाइनके तेजी मंदीके स्पेशलचान्स मय खरीद बेचके समयके साथ बड़े परिश्रम पूर्वक शास्त्रीय एवं व्यावहारिक दृष्टिसे निर्माण करके साइक्लोस्टाइल लिथोमशीन पर छाप कर श्रीस्वाध्यायसदन सोलनसे हिन्दी उर्दूमें भेजे जावेंगे। इस अद्भुत रिपोर्टका एक मासका मूल्य १५) रु० होगा। किन्तु जो सज्जन ८) रु० भेज कर 'श्रीस्वाध्याय' मासिक संस्करणके स्थायी ग्राहक बन जावेंगे उन्हें आधे मूल्य ७॥) रु० में ही ज्येष्ठ मासकी रिपोर्ट और स्पेशलचान्स भेजे जावेंगे। यह स्थायी ग्राहकोंके लिए लाभका अपूर्व अवसर है। पंजाबके व्यापारियोंकी सुविधाके लिए यह मासिक रिपोर्ट उर्दूमें भी बनाई जावेगी। अतः जो व्यापारी उर्दूमें मांगेंगे उन्हें उर्दूकी भेजी जावेगी। आगामी ज्येष्ठ माससे ही व्यापारमें महान् क्रान्ति (उथलपुथल) मचने वाली है। असंख्य व्यापारी बर्बाद और अनेक मालामाल हो जाने पूर्णसम्भव हैं। जो व्यापारी १५) रु० भेजकर हमारी ज्येष्ठकी रिपोर्ट प्राप्त कर लेंगे वे पर्याप्त लाभमें रहेंगे और जो इस अवसरसे चूकेंगे वे हाथ मलते रह जावेंगे। रिपोर्ट वी० पी० से नहीं भेजी जावेगी। पूरा या आधा मूल्य पेशगी मनीआर्डरसे आना आवश्यक है।

निवेदक—

मैनेजर, श्रीस्वाध्याय सदन (ज्योतिष-विभाग)

सोलन (शिमला)

सम्पादकीय विचार-विमर्श—

त्रैमासिक तेजीमन्दी विज्ञान और ज्यौतिष

[लेखक — श्री पं० विशुद्धानन्द गौड़ ज्यौतिषाचार्य]

यद्यपि आजकल विशेषकर व्यापारिक संसारमें रुई, सोना, चान्दी, ग्वार, बाजराका ही अधिकांशमें व्यापार प्रचलित हो रहा है। तथापि व्यापारी बन्धुओंके लिये हम प्रायः सभी आवश्यक वस्तुओं पर अपना विचार-विमर्श ज्यौतिषशास्त्र सम्बन्धी प्रकाशित करते हैं। यह व्यापारिक विचार-विमर्श पाठकोंके सामने 'श्रीस्वाध्याय'के प्रकाशनकी दृष्टिकोणसे ही दिया जा रहा है। प्रस्तुतमें इसका सम्बन्ध चैत्रशुक्ला दशमीसे लेकर आषढ़ शुक्ला दशमी तक रहेगा। चैत्रशुक्ला दशमीसे पाठकोंको ग्रहोंके योग एवं प्रतियोगके सम्बन्धमें यह ध्यान रखना परमावश्यक है कि इसी समयमें बृहस्पति कन्या राशि पर वक्री होकर अपना सम्बन्ध बना रहा है। तभी निकटवर्तिकालमें चैत्र शुक्ला द्वादशी शनिवारको ४५ मुहूर्ती बैठी स्थितिमें मेष संक्रान्तिका प्रवेश काल है। शनि राहुका विश्लेषयोग भी आगे वैशाख बदीमें है। "दिवसेऽस्तङ्गमः श्रेष्ठः" इस नियमसे दिनमें अगस्तका अस्त एवं अन्य भी ग्रहजन्य उदय अस्त योगायोग बिचार विनिमयसे प्रायः सभी व्यापारिक वस्तुओंमें एक प्रकारका नया जीवन सा बन गया है। अथवा यों कहना चाहिये कि आकाशीय ग्रहपिण्ड समूहों द्वारा भूमि पर उत्पन्न व्यापारिक वस्तुओंमें भी एक नया परिवर्तन आरम्भ होना सम्भावित हो गया है। जोकि अब नवीन संवत्सर २००३ के अन्दर क्रमशः धीरे धीरे अपने पूरे परिवर्तनका नया व्यापारिक युग बनना चाहता है। इस बर्षका दृष्टिकोण व्यापारिक क्या बनेगा? तथा केवल प्रस्तुत तीन मासोंमें होने वाले परिवर्तनका प्रत्येक वस्तुओं पर क्या तथा कैसा सम्बन्ध रहेगा? इस प्रश्नकी ओर ही व्यापारिक बन्धुओंका पहिले ध्यान आकर्षित करके हम पुनः दैनिक तेजी मन्दीकी ओर ध्यान दिलाना चाहते हैं। ग्रहोंके उदय, अस्त, संक्रमण राशिपरिवर्तन आदि विचार-विमर्शसे जितनी भी मन्दी तेजी हमें जंचती है, उसी दृष्टिकोणको भी ध्यानमें रखते हुए व्यापारिक अनुमानसे भावोंमें दृष्टिकोण बान्धते हुए ही प्रत्येक वस्तुओंका दिग्दर्शन पाठकोंके सम्मुख उपस्थित करते हैं। अनुमानजन्य कमीबेशीका अनुसन्धान व्यापारी बन्धु स्वयं भी करलें। अब प्रत्येक वस्तुओं पर विचार विमर्श निम्न लिखित है।

सोना, चांदी, तथा धातुओंकी वस्तुएं

पिछले फाल्गुन मासकी हस्तलिखित रिपोर्टमें हमने लिखा था कि शुक्रका उदय केवल चांदीमें तेजी चाहता है और सोनेमें तथा अन्य धातुओं में उसकी तेजीका असर विशेष नहीं है, तथा व्यापारिक अनुमानसे चांदी १५०) हो जायेगी तथा सोना ६८) होना संभव है। उसी दृष्टिकोणसे फाल्गुनमें चांदी १५५) तथा सोना ६६) हो गया था। अब इस वर्षमें चैत्र बदी अमावस तथा संवत्सरारम्भका जो व्यापारिक युग है यह संवत्सर २००३ के अन्तमें सोने चांदीमें अपना पूरा परिवर्तन धातुओंकी वस्तुओंमें बनावेगा।

जो भाव सोना चांदीके चैत्र सुदीमें संवत्सर २००३ में चैत्र शुक्ला पूर्णमासीसे पूर्व रहेंगे वे क्रमशः नीचे ही होते जायेंगे। ये भाव तेजीके ऊंचे ही भाव जानने चाहियें।

सोनेके अन्दर आखरी तेजीके भाव १०१) रु० हैं जो भाव फिर घटते, बढ़ते, गिरते, चढ़ते वर्षके अन्तमें ६७) तथा ६३) फी तोला बन जायेंगे। इसी प्रकार चांदीमें अन्तिम तेजीके भाव १६०) तथा १६५) से ऊपर कदापि नहीं जंचते हैं। अभी शुक्र उदय हुआ है जोकि चांदीमें तेजीका कारण बना चुका है, वह तेजी व्यापारिक अनुमानसे शुक्रकी औदयिक गतिको देखते हुए १६७) से अधिक चान्दीमें तेजीके योगको नहीं सिद्ध करती है। और ग्रहोंकी योग प्रतियोग आदि दृष्टिसे वर्षके अन्तमें चैत्र कृष्ण पक्ष संवत्सर २००३ तक गिरते चढ़ते, भाव चान्दीके अन्तिम वर्षमें ५६) तथा ६३) ही हो जाने संभव हैं। १००) का अन्तर १०० तोले पर प्रति रुपया प्रति तोला अन्तरित हो जाना पूर्ण संभव है। ।।।) तोला परिवर्तन तो निश्चित प्राय ही संभावित कहा जा सकेगा। धातुओंमें संवत् १६६८ की तेजीका वक्र और सम्वत् २००३में मन्दीका वक्र व्यापारीबन्धुओंके लिये एक महत्त्व-शाली युग कहा जाना अत्युक्तिकारक नहीं होगा। प्रस्तुत समयमें चैत्र शुक्ला १० से सोना, चांदीमें चढ़े भावमें मन्दीका रुख भी रखना परमावश्यक है। बेचानसे वैसाख बदी अमावस तक लाभ हो जावेगा। रियेक्सन तेजी मन्दीके चलते ही रहते हैं। इन तीनों महीनोंके लिये वैशाख बदीमें बेचानमें पड़कर गिरते चढ़ते भावोंको दृष्टिकोणमें रखते हुए बाजारकी मजबूतीका भी ध्यान रखते हुए व्यापार करने वाले व्यापारी अच्छा लाभ उठावेंगे। चैत्रसुदी १२ से वैशाखवदी अमावस तक व्यापारिक अनुमानसे सोना ६६ से गिरकर ६०) अथवा ८७) हो सकता है, प्रत्येक दिनकी बाजारकी मजबूती तथा मन्दी तेजीका विचार ध्यानमें रखते हुए कार्य करना चाहिए।

सौर बैशाख मास ता० १० अप्रैल सन् १६४६ से १४ मई सन् १६४६ तक सोनेमें घटते बढ़ते प्रथम सप्ताहमें १४ ता० से १६ ता० तक साधारण मन्दी, १६ ता० से २६ ता० तक साधारण तेजी, फिर २६ से ३ मई तक मन्दी, ३ से ८ तक तेजी, ८ से १४ तक साधारण मन्दी।

सौर ज्येष्ठ मास

ता० १४ मईसे बाजार भावका रुख तेजीमें रहेगा, ता० २१ मईके बाद ता० २१ जून तक भाव साधारण मंदीकी ओर होगा फिर ता० २ जूनसे ११ जून तक घटते बढ़ते बाजार मजबूत ही रखेगा। ११ जूनसे फिर मन्दीका झुकाव २१ ता० तक होगा। २१ जूनसे ३० तक कुछ सुरखी, फिर ६ जुलाई तक मन्दी। दैनिक तेजी मन्दी के लिये हमारी मासिक स्पेशियल रिपोर्ट मंगाइये।

रुई, सूत, कपड़ा, सन, पाट, बारदाना तथा हैशियन

इन सब वस्तुओंमें इन तीन महीनोंमें मन्दीके योग अधिकतर पाये जाते हैं। इन्हीं ३ मासोंके अन्दर ही पहिले रुईमें जुलाई वायदा में भी ५०) की प्रतिखण्डीसे मन्दी आकर बादमें तीसरे मासमें ही ८०) टके की प्रतिखण्डी पर तेजी आ जानेका पूर्ण योग पाया जाता है। वृष राशि का राहु, तथा वृष का शुक्र तथा अगस्त्यका दिनमें अस्त हो जाना पहिले मन्दी लाकर फिर तेजी लाते हैं। ये योग सम्वत् १६२८, ४८, ६५, ८७, ६६ में भी बने थे। इस सम्बन्धके प्राचीन अनुभूत योग हमने अपने "विशुद्ध पंचाङ्ग" में भी दिये हैं। हमने वहाँ यह भी उल्लेख किया है कि इन योगों पर व्यतीत सम्वत्सरोंमें पहले ८४ टके मन्दी आकर फिरसे १०० टके की खण्डी पर तेजीके योग बने थे। इसलिये प्रस्तुत उपरोक्त योगों पर पहिले ५०) खण्डी पर मन्दी आकर फिर ८०) टके की तेजी का आ जाना पूर्ण सम्भव है। जरीला रुई मई वायदेमें साधारण ही मन्दीका योग है। व्यापारी बन्धुओंको यह ध्यानमें अवश्य रख लेना चाहिये कि रुईमें अब जुलाई वायदे में ज्यादा तेजीकी गंजायश नहीं है। व्यापारिक

अनुमानसे ४८३) प्रति खण्डीसे ऊपर भाव होने कदापि सम्भव नहीं जंचते हैं। आरम्भमें साधारण-तेजीमें बेचनेकी राय है। २ मास तक मन्दीकी स्थिति रहेगी। सौरमास आषाढ़ ज्येष्ठ शुक्ला पूर्णिमासे ता० १४ जूनसे बाजार भाव रुईके मजबूत हो जायेंगे। इधर व्यापारिक अनुमानसे मन्दी का योग घटकर जुलाई वायदा २ मासमें गिरते चढ़ते भावोंमें १४ जूनसे पहले ४२५) हो सकता है। और फिर १४ जूनसे १ मासमें ५००) के आसपास भाव तेजी पकड़ सकता है। तैयारीमें भी रुईके भावोंमें १४ जून तक ३) ४) प्रति मन मन्दीका योग है। फिर बादमें ५) ६) रु० प्रतिमन तेजीका योग है। बारदाना पहले मासमें मन्दा, १४ मई से १४ जून तक तेज, तथा १४ जूनके बाद साधारण मन्दी ही रहेगी। विशेष तेजी नहीं। सूत, कपड़ामें १४ जून तक तेजी, १४ जूनसे असाढ़ सौरमासमें मन्दी का योग है। सन, पाट तथा हैशियनमें भी १४ जन तक तेज, फिर मन्दी होनी चाहिये।

सरसों, अलसी, एरण्डा, सींगदाना

पहिले दो मासोंमें बाजारभाव मन्दीकी ओर जावेगा। १४ जनसे बाजारभाव तेजीकी ओर ही रहेगा।

ग्वार, जौ बाजरा

ग्वार, जौ, बाजरा, इन तीनों चीजोंमें मन्दीका योग बन गया है। तेजीके योग कोई खास मजबूत नहीं हैं। हर चढे भाव बेचानकी राय है, व्यापारिक अनुमानसे ग्वारका भाव वैशाख वायदा अब आगे ८1) से ऊंचा जाना कथंचित् भी सम्भव नहीं है। अबसे कुछ भी ऊंचेका उछाला आवे हर चढ़े भाव बेचनेकी राय है। २ मास में १४ जून तक ग्वार तैयार में भी मन्दी ही आवेगी। इधर वैशाख वायदेमें ॥) मनकी मन्दीका योग आ जाना पूर्ण सम्भव है। माघ वायदेमें भी मन्दीका योग बन जायेगा। माघ वायदे में भी इसी दृष्टि से मन्दीका योग है। १४ जूनसे फिर कुछ तेजी का योग होगा।

ग्वार, जौ, बाजरे के वैशाखके वायदेके भावोंके सम्बन्धमें व्यापारियोंको विशेषकर इस ओर भी ध्यान रखना चाहिये कि मन्दी भी विशेष नहीं होगी और मन्दीका योग वैशाख शुक्ला तृतीया अक्षय तृतीया तक स्थायी किसी न किसी रूपसे अवश्य रहेगा। वैशाखवदी प्रतिपदासे अक्षयतृतीया तक व्यापारिक अनुमान से ।=) मनका मन्दीका योग है। इधर चैत्र शुक्ला १५ के आसपासमें ऊंचे भाव ८—)॥ हो सकते हैं। अक्षयतृतीया तक नीचेमें गिरकर ७॥=) हो जानेकी पूर्ण संभावना है। वैशाख शुक्ला तृतीयासे बाजार का भाव साधारण तेजी की ओर चलेगा वैशाखकी पूर्णिमा तक ८) के पेटेमें भाव फिरसे आजाने पूर्ण सम्भव है। पहले ।=) मन की मन्दी फिर ।—) मन तेजी का अनुमान है। दैनिक तेजीमन्दीकी घट-बढ़ के स्फुट विचार के लिये हमारी स्पेशल मासिक रिपोर्ट १५) फीस भेजकर मंगाइये।

धान, चावल, बिनौला

धान चावलोंमें कोई मन्दीका योग नहीं हैं, विशेष तेजी भी इन तीनों मासोंमें कोई प्रतीत नहीं होती है। बाजार बहुत साधारण मन्दी तेजीमें—घूमता रहेगा। बिनौला नरमामें कुछ मन्दीका योग सौर ज्येष्ठमें होना सम्भव है, १४ जून तक भाव विशेष बिनौलेमें नहीं गिरेंगे, रुख मुलायम ही रहेगा।

घी, तेल, खाण्ड, गुड, शक्कर तथा रसादिक पदार्थ

में साधारणतया तेजीकी ही स्थिति रहेगी, रुख बराबर मजबूतीकी ही ओर रहेगा। मन्दीके ध्यानमें नहीं बराबर रहना चाहिये, हर गिरे भाव खरीदकी राय है। खरीदके बाद बेचना चाहिये। सुपारी, हल्दी, बादाम, कालीमिरच, लालमिरच, किराना, किरानेकी वस्तुओंमें अभी इन तीन मासोंमें कोई मन्दी का योग नहीं पाया जाता है, बाजार बराबर मजबूत जंचता है, हर गिरे भाव खरीदकी राय है, मन्दीका कोई योग प्रतीत नहीं होता है।

वैशाख मास की दैनिक तेजी मन्दी

वैशाख बदी १ बुधवार ता० १७ अप्रैल—रुई, सोना, चान्दी आरम्भमें ही बाजार खुलते २ खरीदना हितकर है। स्वातिमें खरीदना अच्छा होता है। बादमें तेजीका योग है, ग्वार, जौ, बाजरा, गुड़, शक्कर खाण्ड, तेज होंगे। सरसों मन्दी, घी तेल तेज, किराना तेज, गेहूं, चना, मन्दा।

वैशाख बदी २ गुरुवार ता० १८ अप्रैल—रुई, सोना, चान्दी, तेज। ग्वार, जौ बाजरा तेज। बाद दो बजे मन्दा। गेहूं, चना, मंदा, किराना मंदा। गुड़ खाण्ड शक्कर मन्दे, वै० वदि ३ शुक्रवार ता० १६ अ० गुआर, जौ बाजरा, मन्दा, रुई तेज, सोना मंदा चान्दी तेज। खाण्ड, गुड, शक्कर मन्दे। किराना तेज। घी, तेल, तेज।

वैशाख बदी ४ शनिवार ता० २० अप्रैल—बाजार भाव। सोना चान्दी रुई तेज। गुवार मन्दा। जौ, बाजरा तेज। गुड, शक्कर तेज। गेहूँ चना मंदा। किराना मंदा। घी तेल तेज।

वैशाख बदी ५ रविवार ता० २१ अप्रैल—घी तेल, तेज। खाण्ड, गुड़ शक्कर तेज। बिनौला तेज। रुई मन्दी। किराना तेज। बादाम, जीरा, कालीमिर्च, लालमिर्च, सुपारी, हल्दीके भावों में तेजीका योग है।

वैशाख बदी ६ सोमवार २२ अप्रैल—सोना, चांदी, रुई तेज। खाण्ड, गुड़, शक्कर तेज। बिनौला नरमा मन्दा, देशी तेज। किराना मंदा आरम्भमें ही बेचना चाहिये। सरसों, एरडा, शींगदाना मन्दा। घी, तिल तेज। तेल तेज, ग्वार जौ बाजरा आरम्भमें बेचना चाहिये मन्देका दिन है, बारदाना तेज।

वैशाख बदी ७ भौमवार २३ अप्रैल—ग्वार, जौ बाजरा तेज। सोना, चान्दी मन्दे। रुई तेज। बिनौला तेज, किराना तेज, सरसों मन्दी। बारदाना तेज। घी, तेल मन्दा, किराना तेज, खाण्ड, गुड शक्कर मन्दे।

वैशाख बदी ८ बुधवार ता० २४ अप्रैल—रुई मन्दी, सोना, चांदी तेज, ग्वार, जौ बाजरा मन्दे, बिनौला मन्दा, किराना तेज सरसों, तेज, बारदाना, तेज, गुड शक्कर मन्दे।

वैशाख बदी ६ गुरुवार ता० २५ अप्रैल—सोना चांदीमें मंदा, रुई मंदी, ग्वार जौ बाजरा तेज, सरसो मंदी, बारदाना मंदा, खाण्ड, गुड शक्कर तेज।

वैशाख बदी १० शुक्रवार ता० २६ अप्रैल—रुई तेज, सोना चांदी तेज, ग्वार जौ बाजरा मंदा। घी, तेज, तिल, तेल तेज, सरसो तेज, खाण्ड, गुड शक्कर तेज, बारदाना मंदा, किराना तेज।

वैशाख बदी ११ शनिवार ता० २७ अप्रैल—रुई मंदी, सोना तेज, चांदी मंदी, ग्वार मन्दा, बाजरा तेज, सरसों मंदी, तिल, घी, तेल तेज, बारदाना तेज, किराना तेज। गुड शक्कर तेज।

वैशाख बदी १२ रविवार ता० २८ अप्रैल—रुई मंदी, ग्वार जौ बाजरा मक्का सरसों मन्दी, तिल तेज, घी तेज, गुड शक्कर तेज।

वैशाख बदी १३ सोमवार ता० २६ अप्रैल—सोना चांदी, रुई तेज, ग्वार जौ, बाजरा मंदा। गुड़ शक्कर मंदा, सरसों तेज, बारदाना मंदा, किराना तेज।

वैशाखबदी १४ मङ्गलवार ता० ३० अप्रैल—सोना, चान्दी, तेज रुई तेज, ग्वार जो बाजरा तेज, खाण्ड गुड शक्कर तेज, सरसों तेज, बारदाना तेज, घी तेज, किराना तेज।

वैशाखबदी ३० बुधवार ता० १ मई—सोना मन्दा, चान्दी तेज, रुई तेज। ग्वार, जौ बाजरा मन्दा होकर तेज होवे, रोहिणीमें शुक्र, वृष राशिमें शुक्र, चांदीमें अच्छी तेजी लाता है, अच्छी घटा बढ़ी चाहता है।

बैशाखसुदी १ गुरुवार ता० २ मई,—खाण्ड, गुड, शक्कर तेज होकर मन्दे होवे, रुई, चांदी, सोना तेज, बारदाना तेज, अलसी सरसों मंदी, घी तेज किराना मंदा।

वैशाखसुदी २ शुक्रवार ता० ३ मई, रुई तेज चान्दी तेज, खाण्ड, गुड शक्कर तेज, बारदाना मन्दी किराना मंदा होकर तेज, घी तेज, सरसों तेज।

वैशाख शुक्ला ३ शनिवार ता० ४ मई—रूई, सोना, चांदी मन्दे, खाण्ड गुड शक्कर तेज, सरसों मन्दी, बारदाना तेज, किराना मंदा, ग्वार जौ, बाजरा मन्दा।

वैशाख शुक्ला ४ रविवार ता० ५ मई—रूई तेज, ग्वार, जौ बाजरा मंदा। सरसों तेज, बारदाना मन्दा, गुड शक्कर मन्दे, किराना तेज, घी मन्दा।

वैशाख शुक्ला ५ सोमवार ता० ६—सोना, चाँदी, रूई तेज, घी तेज, बाजरा ग्वार जौ सरसों मन्दी, बारदाना तेज, खाण्ड गुड शक्कर मन्दे।

वैशाख शुक्ला ६ भौमवार ता० ७—तिथिका क्षय होना तेजी करता है। रुई, सोना, चांदी तेज, बारदाना तेज, ग्वार जौ बाजरा तेज।

वैशाख शुक्ला ८ बुधवार ता० ८—सोना चांदी मन्दे, रुई मन्दी, बारदाना तेज, ग्वार जौ, बाजरा मन्दा, सरसों तेज, घी तेज, किराना तेज।

वैशाख शुक्ला ९ गुरुवार ता० ९—सोना चांदी मन्दी होकर तेज होवे। खाण्ड, गुड शक्कर, तेज, ग्वार जौ बाजरा तेज, बारदाना मन्दा किराना तेज।

वैशाख शुक्ला १० शुक्रवार ता० १० मई—सोना चान्दी मन्दे, रुई तेज, बाजरा तेज, गुआर तेज, सरसों मन्दी, बारदाना तेज, किराना तेज।

वैशाख शुक्ला ११ शनिवार ता० ११ मई—रूई तेज, सोना तेज, चान्दी तेज, ग्वार जौ बाजरा तेज, सरसों तेज, घी तेल मंदा, किराना मंदा।

वैशाख शुक्ला १२ रविवार ता० १२ मई—रूई मंदी, सरसों मंदी, किराना मंदा, ग्वार जौ बाजरा मंदा, सरसों मंदी, घी तेज।

वैशाख शुक्ला १३ सोमवार ता० १३ मई—सुबह ही खरीदना चाहिये बराबर रात तक तेजी जचती है सोना चांदी तेज, रूई तेज, बारदाना तेज, घी तेज, तिल तेल तेज, किराना तेज, सरसों तेज।

वैशाख शुक्ला १४ भौमवार ता० १४ मई—रुई मन्दी, सरसों मंदी सोना तेज, चांदी मन्दी, खाण्ड, गुड शक्कर तेज, किराना मंदा, घी तेज।

वैशाख शुक्ला १४ बुध ता० १५ मई—तिथिवृद्धि है मंदा करती है सोना चांदी मन्दे, रुई मंदी, गेहूँ, गुड शक्कर मंदे। बारदाना, गुवार जौ बाजरा मंदा, सरसों मंदी किराना मन्दा।

वैशाख शुक्ला १५ बृ० ता० १६ मई—खाण्ड, गुड, शक्कर मंदे, सरसों मंदी बारदाना तेज, किराना तेज, घी तेज।

तीन मासका साप्ताहिक भविष्य-प्रकाश

ग्वार, मक्की, तारामीरा, गेहूँ, अलसी, रुई, सोना, चांदी आदिकी तेजीमन्दी

[लेखक — श्री पं० गङ्गाप्रसाद जी ज्योतिषाचार्य]

प्रथम सप्ताह ता० १३ से २० अप्रैल तक

इस सप्ताहमें ४ दिन तेजी ३ दिन मन्दी रहेगी। पहिले ता० १३ को १२ बजेसे २ बजे तक बाजार देखो। मन्दी टाईममें चांदी, सोना, रुई खरीदो। ता० १६ तक लाभ हो जायगा। अलसी, सरसों, गुवार, अरहर, बाजरा, चावल, शींगदाना ता० १५ को खरीदना श्रेष्ठ है। वैशाख वायदामें लाभ होगा। तारामीरा, कालीमिर्च, बारदाना, लाख चपड़ा बेचना ठीक है। अलसीकी आखिरी तेजी होगी।

दूसरा सप्ताह ता० २१ से २८ तक

इस सप्ताहमें प्रायः चांदी, सोने व रुईके भाव एक प्रखर मन्दीमें जायेंगे, किन्तु अधिक गिरनेकी सम्भावना नहीं है। घटे भाव खरीदनेकी राय है। ४ दिन मन्दी ३ दिन तेजी के होंगे। ता० २२ को रुई, चांदी, सोना खरीद करो, २४ को डबल बेचो लाभ सामने होगा। बाजारा मक्की, मूंग, चावलकी आखिरी तेजी होगी। अगला वायदा बेचो। पहले की खरीदसे लाभ उठाओ। बिनौला, रुई, मूंगफली, सींगदाना, अरहरके भावोंमें इस हफ्ते में तेजी इकतरफा चलेगी, सिर्फ तारामीरा, कालीमिर्च के भाव सम रहेंगे।

तीसरा सप्ताह ता० २९ अप्रैल से ६ मई तक

इस सप्ताहमें विदेशी खबरोंसे प्रायः सर्व वस्तुके भावोंमें तेजी ही तेजी दिखाई देगी। सोना, चांदी, रुई, ईंट, लोहा, पत्थर, बारदाना, तिलहन, तेल, घृत मिलना मुश्किल हो जायगा। सर्वत्र गल्लेकी कमी हो जायगी। सावधान इस हफ्तेमें अप्रैलकी खरीद लाभ देगी—सिर्फ कालीमिर्च अलसी सम रहेगी।

चतुर्थ सप्ताह ता० ६ से १३ मई तक

इस सप्ताहमें सूर्यमें वर्णविकार हो। अधिक उष्णता होनेके कारण व्यापारमें भारी हलचल होगी, सावधान। चांदी, सोने, रुईके भाव जो हिमालयकी चोटी तक चढ़े हुए होंगे वे एकदम मन्दीका अनुभव करेंगे। ता० ६ मईकी खरीदका ता० ८ तक मुनाफा लेकर स्टाक खत्म करदें, वरना भारी हानि हो जाना सम्भव है। यह मन्दी चांदी, सोना, रुईके भावोंमें होगी। अलसी, बारदाना, गुवार, बाजरा, मक्की, शींगदानाके भाव प्रायः तेजीकी ओर रहेंगे।

पांचवां सप्ताह १४ से २१ मई तक

इस सप्ताहमें उल्कापात, कहीं वायुके भारी प्रकोप से जनहानि एवं वृक्ष गिरें तथा रोगोपद्रव अधिक होंगे। गर्मी अधिक रहेगी। नवीन युद्ध होनेकी प्रहचाल है। चांदी, सोना, रुई ता० १४ को खरीदो १८ तक लाभ लेकर डबल बेचो। बाजरा, मक्की, गुवार, लोहा, अलसी वायदा जून या जुलाईमें बेचना ठीक है। सींगदाना, कालीमिर्च तारामीराके भाव थमे रहेंगे।

छठा सप्ताह ता० २२ से २९ मई तक

इस सप्ताह प्रखर तेजी रहेगी। चांदी, रुई, सोना, तांबा, पीतल, सरसों, राई, बारदाना ता० २२ को खरीदो, ३१ तक लाभ हो जायगा। कालीमिर्च, सींगदाना, बारदाना, अलसी मन्दी रहेगी। ता० २३ तक बेचने वाले २९ तक लाभ उठा लेंगे। गल्ले के ग्रह भारी तेजी में हैं। स्टाक दो मासमें दुगना

लाभ देगा। अलसी एरण्डा वायदा अगस्त बेचना भारी लाभ देगा। सावधान मई में तेजी आखिरी होगी। बाजार थम जायेंगे।

सातवाँ सप्ताह ता० ३० मई से ६ जून तक

इस सप्ताहमें ३ दिन तेजी व ३ दिन मन्दीके होंगे। पहले ता० ३० को घटेभाव चांदी-सोना, रुई खरीदो। ता० ३ तक लाभ लेकर डबल बेचो। अलसी, सींगदाना, मक्की, बाजरा, गुवार-चावल भारी तेजीमें होंगे। ता० १५ मई को खरीदना। ता० ३ जून तक अच्छा मुनाफा हो जायगा। मूंग, अर-हर, बारदाना, तिल्लीके भाव सम रहेंगे।

आठवां सप्ताह ७ से १४ जून तक

इस सप्ताहमें ४ दिन मन्दी ३ दिन तेजीके रहेंगे। चांदी, सोना, रुई ता० ७ को बेचो। १० को लाभ लेकर डबल खरीदो। ता० १४ तक मनमाना लाभ हो जायगा। चावल, मक्की, बाजरा, अलसी वायदा जुलाईमें बेचो। तेजीकी लाईन आपको सिर्फ बेचनेका मौका देगी। इस सप्ताहमें विदेशी खबरोंसे बाजार मन्दे जाकर पुनः बराबर हो जायेंगे। सावधान, मन्दीमें फंसे मत रहजाना।

नवमा सप्ताह ता० १५ से २३ जून तक

इस सप्ताहमें एक भयंकर उथल-पुथल होगी। व्यापार सोने, चांदी, रुई के पानी पानी हो जायेंगे। बम्बईमें व्यापारियोंमें मतभेद दावा झगड़े होंगे। बाजारोंमें एक प्रखर मन्दीका झटका अभी रहेगा। चांदीमें २०) सोनेमें १०) रुईमें ४०) किन्तु टिकेगा नहीं सिर्फ २। दिन चाल देखनेमें आवेगी। घटे भाव मन्दीमें जो खरीद लेगा वही मालामाल हो जायगा। सिर्फ नवमें सप्ताहकी स्पेशलराय भविष्य-प्रकाश कार्यालय मुरारसे पत्र भेजकर फ्री प्राप्त करलें। त्रैमासिकमें एक पेटीमें ५००) रुपये कमाने वाला एक ही चांस होगा, अलसी, गुवार, मक्की, चावल तेजीसे मन्दीमें होंगे। बेचना लाभकारी होगा।

दसवां सप्ताह २४से ३० जून तक

इस सप्ताहमें ४ दिन तेजी ३ मन्दीके होंगे। ता० २४ को खुलते बाजार चांदी, सोना, रुई खरीदो। २७ तक लाभ लेकर डबल बेचो, आखिरी मास मन्दीका रहेगा। अलसी, ताराभीरा, कालीमिर्च, बारदाना, ग्वार, बाजरा मंदीमें ता० २७को खरीदना ठीक है। ८ जुलाई तक लाभ हो जायगा। सिर्फ मूंग, अरहर, मसूर, मन्दे रहेंगे।

ग्यारहवां सप्ताह ता० १ से ८ जुलाई तक

इस सप्ताह में पहिले ३ दिन तेजी के ४ मंदी के होंगें। तारीख १ के १२ बजे चांदी सोना खरीदो, ता० २ तक लाभ लेकर डबल बेचो, ८ तक मुनाफा हो जायगा। बारदाना चावल मूंग मक्की वायदा अगस्त बेचना ठीक है, ग्वार लोहा के भाव मंदे रहेगे, यहां ता० ३ को विदेशी खबरोंसे बाजार जबरदस्त मंदी का अनुभव करेंगे — सावधान, स्टाक तिलहन गल्ला का बराबर कर लेना ही सच्चा व्यापारी काम होगा।

विनीत-विनय

[कवि सम्राट् श्री पं० अयोध्यासिंह जी उपाध्याय 'हरिऔध'

तुम्हीं हो हृदयके हृदय श्याम-सुन्दर।
बने वह न नीरस रहे वह सरस-तर।
दया पात्र कोई कहीं जो दिखाये।
दयासिन्धु तो तुम उसे दो द्रवितकर।
मिले सामने जो पतन प्राय प्राणी।
पढ़ादो उसे पाठ तो लोक-हितकर।
दिखाई पड़े ताप उत्ताप पीड़ित।
उसे तो बना दो सरस-रस-सरोवर।
विविध दुख दलोंसे दलित दृष्टिगत हो।
उसे तो बना दो कलित-कृति-कलेवर।
मिले ज्वाल-मालाकुलित जीव जो तो।
उसे कर दिखाओ कृपासिन्धु जलधर।
बुरी भावनासे उसे प्रभु बचाना।
भले ही, भले भावसे जाय वह भर।
अधिक क्या कहें हो तुम्हीं नाथ प्रेरक।
बनाना कभी भी उसे पविन प्रभुवर॥

त्रैमासिक भविष्य-प्रकाश

[लेखक--श्री पं० गंगाप्रसाद जी ज्योतिषाचार्य]

पाठकोंके सामने तेजी मन्दीके गूढ़ रहस्यको 'श्री-स्वाध्याय' के हेमन्ताङ्कमें पृष्ठ ५४ पर सर्वतोभद्र चक्र की सूक्ष्म वेध—क्रियासे तेजी मंदी स्थानिक टाइमकी विधि समझा चुका हूँ। किन्तु इस लेखमें यह बतलाना अत्यावश्यक है कि ग्रहोंका प्रभाव हर वस्तुकी तेजी मंदी पर पड़ता है। मासिक, पाक्षिक, साप्ताहिक, वा दैनिक ग्रहयोग श्रीस्वाध्याय सम्पादक पं० हरदेवजी शर्मा त्रिवेदी कृत "श्रीविश्व-विजयपंचांग" से दैनिक ग्रह मध्यमोस्टै. टा. ६।२२ के दिल्ली स्थानके दिये गये हैं, उन्हें अपने नगरके स्थानिक स्पष्ट स्टै. टा० १२-२-४ ६-८-१० के बनाने चाहियें, गणितमें वरुण, और प्रजापति (हर्शल नेपच्यून) सहित एका दश ग्रहोंके—दृष्टियोग अंशात्मक बनाने चाहियें। ३० अंश एक राश्यन्तर, ४५ अंश सार्धकेन्द्र, ६० अंश द्वि राश्यंतर किंवां त्रिरेएकादश, ९० अंश केन्द्र योग, १२० अंश त्रिकोण एव नवमपंचम योग, १८० अंश प्रतियोग तोता है। प्रत्येक ग्रहके साथ प्रत्येक ग्रहों के योग बनाकर शुभ योगसे मंदी, अशुभ योगसे तेजी समझना चाहिये। जिस ग्रहका जिस वस्तुसे संपर्क होगा प्रायः उसी वस्तुकी तेजी मंदी ज्ञात होगी। निर्णयमें पूर्व सर्वतोभद्र-चक्रसे निर्णय की हुई तेजी मंदी यदि ग्रह योगों द्वारा निकाली हुई तेजी मंदी एक रूपसे दोनों का परस्पर सम्पर्क हो जाय तो १०० प्रतिशत मिलेगी कदापि मिथ्या नहीं हो सकती। गताङ्क श्रीस्वाध्यायमें सर्वतोभद्र-चक्रसे तेजीमंदी आपके सामने त्रैमासिक रखी गई थी, अबकी बार ग्रहयोगों द्वारा बनाकर रखता हूं, पाठक स्वयं निर्णय करके लेखकको सूचना दे कि दैनिक तेजी मंदी सर्वतोभद्रचक्रसे हेमन्ताङ्कमें और ग्रहयोगोंसे वसन्ताङ्कमें दोनोंमें किस पक्षकी कितने प्रतिशत मिली। आगे जिस पक्षसे अधिक मिलेगी उसी पक्षसे 'श्रीस्वाध्याय'में छपा करेंगी। श्री-स्वाध्यायकी ग्राहकसंख्या अधिक होने पर ही मासिक व्यवस्था की जायेगी। 'श्रीस्वाध्याय' के ग्राहकोंसे निवेदन है कि प्रत्येक सज्जन ग्राहक बढ़ानेकी व्यवस्था करें।

चांदी सोनेकी दैनिक तेजी मंदी

ता०	वार	स्टेण्डर्ड टाइम १२ बजे	२ बजे	४ बजे	७ बजे	१० बजे	रिमार्क
अप्रेल १३	श०	तेजी	तेजी	मंदी	मंदी	मंदी	बेचो २ बजे
१४	इ०	सम	सम	सम	मंदी	मंदी	बाजार देखो
१५	सो०	मंदी	तेजी	तेजी	तेजी	मंदी	खरीदो १२ बजे
१६	मं०	तेजी	तेजी	तेजी	मंदी	मंदी	नफा लो
१७	बु०	मंदी	तेजी	तेजी	तेजी	मंदी	बेचो ४ बजे
१८	गु०	मंदी	मंदी	मंदी	मंदी	तेजी	खरीदो ७ बजे
१९	शु०	तेजी	तेजी	तेजी	तेजी	तेजी	नफा लो
२१	श०	तेजी	तेजी	तेजी	तेजी	मंदी	बेचो ४ बजे
२२	सो०	मंदी	तेजी	तेजी	तेजी	तेजी	खरीदो १२ बजे
२३	मं०	तेजी	तेजी	तेजी	तेजी	मंदी	नफा लो

ता०	वार	स्टैण्डर्ड टाइम १२ बजे	२ बजे	४ बजे	७ बजे	१० बजे	रिमार्क
अप्रै. २४	बु०	तेजी	तेजी	मंदी	मंदी	मंदी	बेचो ३ बजे
२५	गु०	मंदी	मंदी	तेजी	तेजी	तेजी	खरीदो ४ बजे
२६	शु०	तेजी	तेजी	तेजी	मंदी	मंदी	बेचो ५ बजे
२७	श०	मंदी	मंदी	मंदी	मंदी	मंदी	खरीदो ४ बजे
२८	इ०	सम	सम	मंदी	मंदी	मंदी	बाजार देखो
२९	सो०	तेजी	तेजी	तेजी	तेजी	तेजी	खरीदो १२ बजे
३०	मं०	तेजी	तेजी	तेजी	मंदी	मंदी	बेचो ४ बजे
मई १	बु०	तेजी	तेजी	मंदी	मंदी	मंदी	बेचो ४ बजे
२	गु०	मंदी	तेजी	तेजी	तेजी	मंदी	खरीदो १२ ,,
३	शु०	तेजी	तेजी	तेजी	तेजी	मंदी	बेचो १० ,,
४	श०	मंदी	मंदी	तेजी	तेजी	तेजी	खरीदो ४ ,,
५	इ०	सम	सम	तेजी	तेजी	सम	सम
६	सो०	मंदी	तेजी	तेजी	तेजी	तेजी	नफा लो
७	मं०	तेजी	तेजी	मंदी	मंदी	मंदी	बेचो ५ ,,
८	बु०	मंदी	तेजी	तेजी	मंदी	मंदी	खरीदो १० ,,
९	गु०	मंदी	मंदी	तेजी	तेजी	तेजी	नफा लो
१०	शु०	तेजी	तेजी	तेंजी	तेजी	तेंजी	खरीदो १२ ,,
११	श०	तेजी	तेजी	मंदी	मंदी	मंदी	बेचो ४ ,,
१२	इ०	मंदी	मंदी	मंदी	मंदी	मंदी	बाजार देखो
१३	सो०	मंदी	मंदी	तेजी	तेजी	तेजी	खरीदो १ बजे
१४	मं०	तेजी	तेजी	तेजी	मंदी	मंदी	बेचो ७ ,,
१५	बु०	मंदी	मंदी	मंदी	मंदी	मंदी	बाजार देखो
१६	गु०	मंदी	तेजी	तेजी	तेजी	तेजी	खरीदो १२ ,,
१७	शु०	तेजी	तेजी	तेजी	मंदी	मंदी	बेचो ७ ,,
१८	श०	मंदी	मंदी	मंदी	तेजी	तेजी	खरीदो ४ ,,
१९	इ०	तेजी	तेजी	तेजी	तेजी	तेजी	सम
२०	सो०	तेजी	तेजी	तेजी	तेजी	तेजी	नफालो
२१	मं०	तेजी	तेजी	मंदी	मंदी	मंदी	बेचो ४ ,,
२२	बु०	मंदी	मंदी	तेजी	तेजी	तेजी	खरीदो २ ,,
२३	गु०	तेजी	तेजी	मंदी	मंदी	मंदी	बेचो ४ ,,
२४	शु०	मंदी	तेजी	तेजी	तेजी	तेजी	खरीदो १२ बजे
२५	श०	तेजी	तेजी	तेजी	मंदी	मंदी	बेचो ४ बजे
२६	इ०	सम	मंदी	मंदी	मंदी	मंदी	सम
२७	सो०	मंदी	तेजी	तेजी	तेजी	तेजी	खरीदो १२ बजे
२८	मं०	तेजी	तेजी	मंदी	मंदी	मंदी	बेचो ४ बजे

ता०	वार	स्टैण्डर्ड टाइम	१२ बजे	७ बजे	२ बजे	४ बजे	७ बजे	१० बजे	रिमार्क
मई २९	बु०		मंदी	मंदी	तेजी	तेजी	तेजी		खरीदो १२ बजे
३०	गु०		तेजी	तेजी	तेजी	तेजी	तेजी		नफालो
३१	शु०		तेजी	तेजी	तेजी	तेजी	तेजी		खरीदो १२ बजे
जून १	श०		तेजी	तेजी	मंदी	मन्दी	मन्दी	मन्दी	वेचो ४ बजे
२	इ०		मन्दी	मन्दी	मन्दी	सम	सम	मन्दी	सम
३	सो०		मन्दी	तेजी	तेजी	तेजी	,,	तेजी	खरीदो १२ ,,
४	मं०		तेजी	,,	,,	मन्दी	मन्दी	मन्दी	वेचो ७ ,,
५	बु०		मन्दी	मन्दी	मन्दी	मन्दी	तेजी	तेजी	खरीदो ४ ,,
६	गु०		तेजी	तेजी	तेजी	तेजी	सम	,,	नफा लो
७	शु०		,,	,,	,,	,,	मंदी	मन्दी	बेचो ४ ,,
८	श०		मन्दी	मन्दी	मन्दी	तेजी	तेजी	तेजी	खरीदो ३ ,,
९	इ०		सम	सम	सम	मन्दी	मन्दी	मन्दी	बाजार देखो
१०	सो०		मन्दी	तेजी	तेजी	तेजी	तेजी	तेजी	खरीदो १२ ,,
११	मं०		तेजी	,,	,,	मन्दी	मन्दी	मन्दी	बेचो ४ ,,
१२	बु०		मन्दी	मन्दी	मन्दी	मन्दी	मन्दी	मन्दी	दोतरफा
१३	गु०		मन्दी	तेजी	तेजी	तेजी	सम	तेजी	खरीदो १२ ,,
१४	शु०		तेजी	तेजी	तेजी	मन्दी	मन्दी	मन्दी	बेचो ४ ,,
१५	श०		मन्दी	मन्दी	मन्दी	तेजी	तेजी	तेजी	खरीदो ३ ,,
१६	इ०		सम	तेजी	तेजी	तेजी	तेजी	तेजी	दोतरफा
१७	सो०		मन्दी	तेजी	तेजी	तेजी	,,	,,	खरीदो १२ ,,
१८	मं०		तेजी	तेजी	मन्दी	मन्दी	मन्दी	मन्दी	बेचो २ ,,
१९	बु०		मन्दी	मन्दी	तेजी	तेजी	तेजी	तेजी	खरीदो १ ,,
२०	गु०		तेजी	तेजी	तेजी	तेजी	तेजी	तेजी	नफालो
२१	शु०		तेजी	तेजी	तेजी	मन्दी	मन्दी	मन्दी	बेचो ४ ,,
२२	श०		मंदी	मंदी	मंदी	तेजी	तेजी	तेजी	खीरदो ७ बजे
२३	इ०		सम	तेजी	तेजी	मंदी	मंदी	मंदी	बाजार देखो
२४	सो०		मंदी	मन्दी	तेजी	तेजी	तेजी	तेजी	खरीदो १२ बजे
२५	मं०		तेजी	तेजी	तेजी	तेजी	तेजी	तेंजी	नफा लो
२६	बु०		मंदी	मंदी	मंदी	मंदी	मंदी	मंदी	बेचो १ बजे
२७	गु०		मंदी	मंदी	मंदी	मंदो	मंदी	मंदी	बाजार देखो
२८	शु०		मंदी	मन्दी	तेजी	तेजी	तेजी	नेजी	खरीदो १ बजे
२९	श०		तेजी	तेजी	तेजी	तेजी	तेजी	तेजी	नफा को
३०	इ०		सम	मन्दी	सम	मन्दी	तेजो	तेजी	बाजार देखो

त्रैमासिक राशिफल

[ले० श्री पं० गङ्गाप्रसादजी ज्योतिषाचार्यः]

ता० १३ अप्रेलसे १२ मई तक किस राशि वालोंको व्यापार कैसा रहेगा ?

मेषः— चांदी, सोना, रुई, गुवार श्रेष्ठ, ता०-१३-१८,२१-२४-२८-२७-६-६-११ लाभकारक । बाजरा अलसी मक्की चावल मध्यम । कालीमिर्च तारामीरा, शगिंदाना,का व्यापार हानिकारक रहेगा ।

वृषभः— सोना, रुई, गुवार, लाख चपड़ा अलसी का व्यापार श्रेष्ठ । ता०- १४, १७, २१, २५, २७, २, ६, १२ श्रेष्ठ, बाकी मध्यम ।

मिथुनः— रुई, चांदी, अलसी, बारदाना का व्यापार श्रेष्ठ । ता० १६, २०, २८, ३, ६, ६, १२ श्रेष्ठ । सोना कालीमिच गुवार अरहर मक्की चावल हानिकारक, बाकी सम ।

कर्कः— चांदी, रुई, चावल, लोहा, गुवारका व्यापार श्रेष्ठ ता० १३-१७-२३-२-४-८-११ श्रेष्ठ । सोना बारदाना गुवार लाख चपड़ा शेयर हानिकारक, बाकी सम ।

सिंहः— शींगदाना, विनौला, सोना, शेयर, फीचर का व्यापार लाभकारी । ता० १३-१७-२४-२६--२८-२-५-७ श्रेष्ठ, चांदी, रुई, मध्यम, बाकी नेष्ट ।

कन्याः— चांदी, रुई, गुवार अनाज का व्यापार श्रेष्ठ ता० १४-१६-२२-२८-४-८-१२ श्रेष्ठ । चावल, मक्की आलसी, का व्यापार हानि प्रद ।

तुलाः— चांदी, सोना, रुईका व्यापार तेजी का अधिक लाभ कारी । गुवार, बारदाना, मूंग, अलसी, सरसों मध्यम, काली वस्तु हानिप्रद ।

वृश्चिकः— सोना, मसूर, मूंग, अलसी, रुई, तारामीरा तोरीयाका व्यापार लाभकारी । १४-१७-२१-२४-२६-२६-३-६-११ श्रेष्ठ । चावल, मक्की, गुवार, मध्यम, बाकी नेष्ट ।

धनुः— चांदी, सोना, गुवारका व्यापार श्रेष्ठ । चावल, मक्की, गुवार मध्यम, बाकी नेष्ट ।

मकरः— सोना, रुई , शींगदाना, बाजराका व्यापार श्रेष्ठ । ता०-१४-१७-२१-२७-३-६-६ श्रेष्ठ चना, सरसों गेहूं मध्यम, बाकी नेष्ट ।

कुंभः— चांदी, रुई, सोना का व्यापार श्रेष्ठ । ता०-१२-१७-२१-२६-१-२-६-६-१० श्रेष्ठ । काली मिर्च बारदाना, चावल, मध्यम, लाख जूट शेयर नेष्ट ।

मीनः— चांदी शेयर बारदाना श्रेष्ठ । ता०-१३-१७-२२-२५ २७-२६-३६-३-५ ८ श्रेष्ठ, बाकी सर्वमध्यम ।

ता० १३ मई से १२ जून तक किस राशिको कौनसा व्यापार कैसा रहेगा ?

मेषः — सोना, शेयर, बारदाना, चांदी का श्रेष्ठ । ता०-१४-२१-२७-२६-१२ श्रेष्ठ । गुवार, चावल, सरसों जौ, चना, बाजारा मध्यम, काली वस्तु हानिप्रद रहेगी ।

वृषभः— चांदी, सोना, रुईका व्यापार लाभ कारक । ता०-१४-१६-१२-२२-२४-२८-३०-६-१०-१२ श्रेष्ठ । कालीमिच अलसी धनिया एरंड मध्यम, बाकी हानिप्रद ।

मिथुनः— सोना, रुई शेयर फीचर का व्यापार लाभकारी । ता० २०-२५-३०-१-६-७-१० श्रेष्ठ । गुवार, चांदी, चावल मध्यम ,तोरीया तारामीरा कालीमिच हानिप्रद ।

कर्कः— चांदी, सोना, रुई, गुवार श्रेष्ठ । ता०-१४ १६-२६-४-५-७-८-१०-१२ श्रेष्ठ । गुवार, बारदाना लाख चपड़ा मध्यम, शेयर, अलसी, हानि प्रद ।

सिंहः— सोना, शेयर, बारदाना, जूट, लोहा, लकड़ी लाभ कारक । ता०-१३-१७-२१-२५-२७ ३-७-११ श्रेष्ठ । बाकी हानि प्रद रहेगी ।

कन्याः— चांदी, सोना, गल्ला का स्टाक लाभकारी। ता०-१४-१८-२८-२-४-६-८-१० श्रेष्ठ। चावल, मूंग मूंगफली अरेंडा हानि प्रद समसे।

तुलाः— रुई, कपड़ा, तिल, तेल घृत चांदी सोना लाभ कारी। ता०-१३-२१-२४-२७-२६-४-६-१२ श्रेष्ठ। बाकी वस्तु मध्यम।

वृश्चिकः— शेयर, लांटरी, रेश, सोना, अरंडा, शींगदाना लाभकारी। चांदी, रुई, हानि कारक। ता०-१४-२४-४-१२ श्रेष्ठ।

धनुः— चांदी, रुई, गुवार श्रेष्ठ। ता०-१३-२० २५-३०-२-६-१२ श्रेष्ठ। चावल, मक्की, रुई, गुवार, मध्यम बाकी हानि कारक।

मकर—सोना रुई शेयर लॉटरीसे लाभ। ता० १३-१७-१८-१६-२४ ३०-४-८-१० श्रेष्ठ, चांदी गुवार बारदाना मध्यम, बाकी नेष्ट।

कुंभ—चांदी सोना रुई गुवार गल्ला श्रेष्ठ। ता० १४-१८-२४-३०-४-१२ श्रेष्ठ। गुवार चावल मक्की जौ बाजरा वायदा जून लाभकारी, बाकी वस्तु मध्यम।

मीन—चांदी सोना रूईसे लाभ हो। ता० १३-१६-१८-२१-२५-३० श्रेष्ठ। बाकी सम। कालीमिर्च तोरिया हानिकारक, विशेष व्यापारिक वस्तुके लाभहानिके निर्णयके लिये नकल जन्मपत्री भेज कर राय लो।

ता० १३ जूनसे ८ जुलाई तक किस राशि वालेको कौनसा व्यापार कैसा रहेगा ?

मेषः—रुई शेयर फीचर लाभकारक। ता० १५ २४-५ श्रेष्ठ। चांदी सोना साधारण लाभकारी। गुवार बाजरा चावल हानिप्रद रहेंगे।

वृषभः—चांदी रुई सोना श्रेष्ठ। ता० १३ २१-२७-१-८ श्रेष्ठ। बारदाना शेयर जूट गुवार समान, बाकी नेष्ट।

मिथुनः—सोना शेयर फीचर गुवार अलसी श्रेष्ठ। ता० १४-१८-२२-४-८ श्रेष्ठ। चावल तारामीरा शींगदाना समान, बाकी वस्तु हानिप्रद।

कर्कः—चांदी रुई श्रेष्ठ। ता० १६-२६-६ श्रेष्ठ। सोना बारदाना गुवार समान, अलसी शींगदाना हानिकारक।

सिंहः—सोना रुई गुवार श्रेष्ठ। ता० १७-२५ २७-७ श्रेष्ठ। शेयर, बारदाना जूट फीचर समान, बाकी नेष्ट।

कन्याः—चांदी रुई सोना अलसी एरण्डा श्रेष्ठ। बाकी वस्तु सम रहेंगी खरीदने बाद मिलता मुनाफा छोड़ना नहीं चाहिये। ता० १५-२५-५ श्रेष्ठ।

तुलाः—रुई चांदी शेयर फीचर अत्यन्त लाभकारी। ता० १३-१७ २३-२४-१-३-५-८ श्रेष्ठ। चावल लोहा अलसी गुवार सम और सब नेष्ट।

वृश्चिकः—सोना रुई फीचर शेयर श्रेष्ठ लाभकारी। ता० १४-१८-२२-२६ श्रेष्ठ। गुवार चांदी बारदाना मध्यम बाकी सब नेष्ट रहेंगी।

धनुः—चान्दी सोना रुई फीचर श्रेष्ठ। ता० १४-१६-२०-२२ २७-४-८ लाभकारक। चावल गुवार बारदाना मध्यम, कालीमिर्च तारामीरा हानिप्रद।

मकरः—चांदी रुई अलसी श्रेष्ठ, बारदाना मध्यम, सोना बाजरा वायदा नुकसान कारक।

कुम्भः—चांदी रुई सोना श्रेष्ठ। ता० १३-१७ २१-२४-२६-३०-६ लाभकारक। बाकी सम मध्यम।

मीनः—चांदी सोना रुई लाभकारक बाकी सर्व वस्तु बध्यम ता० १४-१८-२२-२८-४ ६ श्रेष्ठ।

———

व्यापारिक तेजी-मन्दी और ज्योतिष

[लेखक — श्री प्रोफेसर बी० सी० महता M. R. A. S.]

गत 'हेमन्तांक' के पृष्ठ ४६ पर हमारा तेजी-मन्दी सम्बन्धी लेख प्रकाशित हुआ था, जिसने संसार को यह बतला दिया कि व्यापार और ग्रहोंमें कितना घनिष्ठ सम्बन्ध है और ग्रहोंका व्यापारिक वस्तुओं पर कितना अच्छा प्रभाव होता है।

रुई, चांदी, सोना और शेयर की तेजी-मन्दीके सम्बन्धमें गत तीन महीनोंके लिये जो भविष्यवाणी हमने 'श्रीस्वाध्याय' द्वारा पाठकोंके सामने उपस्थित की वह कितनी सत्य सिद्ध हुई यह आपके सामने है। जिस समय रुईका बाजार अपनी ढीली चाल से चल रहा था। और व्यापारी रुईमें विशेष मन्दी धारते थे—हमने पाठकोंको कितने दृढ शब्दोंमें रुईमें पोते व्यापारकी सलाह दी और हमें पूर्ण विश्वास है कि पाठकोंने हमारी उक्त सलाहसे पूर्ण लाभ उठाया होगा। 'चांदी और सोनेमें फरवरी और मार्च मासमें बाजार भड़क उठेगा' ये शब्द अक्षरशः सत्य हुए। जिन २ महानुभावों ने हमारे उक्त लेख व भविष्यवाणीसे लाभान्वित होकर हमारी सेवाके उपलक्षमें पुरस्कार व प्रसंशा-पत्र भेजे उनके हम आभारी हैं और आशा करते हैं कि भविष्य में भी आप इसी प्रकार हमें प्रोत्साहन देते रहेंगे तथा हमारे प्रिय पत्र 'श्रीस्वाध्याय' का भी पूरी तरह ध्यान रखेंगे जिसकी कृपासे ही हमें आपके सम्पर्क व सेवाका अवसर प्राप्त हुआ है।

चालू वातावरण रुई, चांदी, सोना आदिके लिये तेजी-मय हो रहा है। हर आदमी चांदी २०० सोना ११० और रुई जरीला ६०० बता रहा है। व्यापारिक जगत्में जो मन्दी बतानेकी जरा भी इच्छा प्रकट करता है वह मूर्ख समझा जारहा है, किन्तु हमें सांसारिक वातावरणकी ओर ध्यान नहीं देते हुए आकाशी कोन्सिलकी ओर ध्यान देना परमावश्यक है। राहु शनि मंगल इन तीन ग्रहोंका Combination एक तरफ है और शुक्र सूर्य और बुधका Combination दूसरी ओर, इन दोनों कोम्बीनेशनसने अपना अपना प्रभाव चांदी, सोना रुई और शेयर के बाजारमें खूब बतलाया और आशासे अधिक चांदी, सोना और रुईमें तेजी आ गई। किन्तु अब ये Combination अलग २ हो रहे हैं, अतः पाठकों से हमारा अनुरोध है कि वे ता० २० अप्रेल के पहले २ तेजी के व्यापार से एक दम अलग हो जायें, सांसारिक किसी भी वातावरणकी ओर ध्यान न दें और ग्रहोंके चमत्कार प्रत्यक्ष देखे हमें ऐसा विश्वास है कि अप्रेलके महीनेमें उपरोक्त चीजोंमें एक अच्छा मन्दीका झटका आयगा और उस झटकेसे तेजीकी धुन वाले व्यापारियोंका नफा कांचमें हो जायगा और उनको हाथ मलते रहना पड़ेगा।

रुईके जैसे चांदी सोनेमें भी इस वक्तके ऊंचे भाव नीचे गिरेगें और चांदी सोनेमें पोतेके व्यापारियों को थोड़ी चिन्ताका सामान करना पड़ेगा।

ता० १ से ५ अप्रैल तक बाजार स्टेडी रहेगा। ६ से ६ मन्दा और १२ से २४ तक घटा बढ़ीके साथ मन्दा रहेगा। ता० २५ के बाद थोड़ी तेजीका चमकारा आ सकता है, किन्तु तेजीका व्यापार करनेकी सलाह नहीं है। २६ से फिर मन्दी।

मई का महीना :— यह चांदी सोनेके लिये विशेष महत्व का है। इसमें चांदी सोनेमें विशेष मन्दीका झटका आनेकी सम्भावना हैं। ता० ४ मई तक बाजार में तेजी रहकर फिर धीरे २ बाजार मन्दी की तरफ ही रहेगा। बीच २ में तेजीके उछाले आते रहेगें। ता० १७ से २१ तक अच्छी मन्दी चांदी सोने और रुई में नजर आती है। ता० २३-२५-२६-२७-

२६ और ३१ इन तारीखोंमें तेजी के उछाले रुई चांदीमें आवेंगे, बाकी जनरल टोन मन्दी का नजर आता है। विशेष विवरण के लिये आप हमारे आफिस 'जैन ज्योतिष व्यूरो -ब्यावर,से पत्र व्यवहार करें।

जूनः— जून के महीने में फिर रुई के बाजार में भड़का आने की सम्भावना है। इसका असर चांदी सोने पर भी पड़े बिना नहीं रह सकेगा। हमारा ऐसा मत है कि चांदी सोना ता० १२-१३ जून से तेजीकी तरफ घूमेगा जबकि रुई का बाजार ता० ८ से ही तेज होना शुरू होजायगा, परंतु तेजीकी तरफ स्पीड बहुत तेज नहीं होगी। घटाबढ़ी के साथ जनरल ट्रेण्ड तेजीकी तरफ हो जायेगा। इस समय व्यापारियों को बहुत कुशलतासे काम करना चाहिये, क्योंकि उक्तसमय अर्थात् ता० १५ जूनके लगभग बृहस्पति कन्या राशि पर मार्गी होगा यह पोलिटिकल फील्ड में बहुत परिवर्तन सूचक हैं। यह टाईम हमारे ख्याल से भारतवर्ष के लिये अत्यन्त महत्त्वशाली है, बहुत सम्भव है कि इन दिनों भारतको वह वस्तु प्राप्त हो जिसके लिये हमारे माननीय नेता गण वर्षोंसे प्राणपणसे प्रयत्नमें लगे हुये हैं। ता० १५ जूनसे १५ अगस्त तकके दो मास भारतवर्षके लिये अत्यन्त अनुकुल हैं। और कई प्रकारके राजनैतिक परिवर्तन होने की उक्त अवधिमें सम्भावना है।

हमारा ऐसा अनुमान है कि इसी अवधिमें हमारे देशके प्राण श्रीनेताजी भी प्रकट हो जावेंगे और देशकी गुत्थी सुलझानेमें पूर्ण सहायक होंगे। इन राजनैतिक परिवर्तनोंका व्यापार संसार में प्रभाव पड़े बिना नहीं रहेगा और व्यापारमें निश्चित असाधारण घटा बढ़ी होगी, अतः आपको बहुत सावधानीसे अपने व्यापारका संचालन करना चाहिये।

खग्रास चन्द्रग्रहणका संसार पर प्रभाव

[लेखक—श्री पं० विशुद्धानन्द गौड़ ज्यौतिषाचार्य]

भूमेः दूरभवं दिव्यं ज्ञानं चार्केन्दुसम्भवम्।
भविष्यं पूर्वमुक्तं चेत्चमत्कृतिकरं नृणाम्॥

कमलाका रूट दैवज्ञकी इस उक्तिके अनुसार भूमण्डलसे बहुत दूर होने वाला सूर्य एवं चन्द्रमा के ग्रहण सम्बन्धि दिव्यज्ञानका प्रवचन यदि पहिले ही कर दिया जाता है तभी वह मानव समाजमें चमत्कारी ज्ञान माना जाता है।

इस त्रैमासिक अवधिमें ज्येष्ठशुक्ला १५ शुक्रवार ता० १४ जून सन् १६४६ ईसवीको भारतवर्षमें खग्रासचन्द्रग्रहण होगा। ज्योतिषशास्त्र के सिद्धान्त मतानुसार चन्द्रग्रहणका मध्यकाल पूर्णिमातिथिकी समाप्ति होने पर रात्रिमें प्रतिपदाके लग जाने पर ही माना जाता है। भारतमें स्टेण्डर्ड टाइमसे प्रस्तुत चन्द्रग्रहणका मध्यमकाल रात्रिमें १२ बजकर १० मिनिट पर होगा। भारतमें स्टेण्डर्ड टाइमके अनुसार इस ग्रहणका स्पर्शादि-काल निम्नलिखित है—

स्टे० टाईम	घं	मि०
स्पर्श	१०	१५
सम्मीलन	११	२४
मध्य	१२	१०
उन्मीलन	१२	५४
मोक्ष	२	४
सर्वग्रहण	३	४८



यह स्पर्शादिका समय किसी एक स्थानका नहीं है। अपितु रेलवे स्टेण्डर्ड टाईमके अनुसार सम्पूर्ण भारतवर्षमें ऊपर लिखे समय पर ही

स्पर्शमोक्ष होता हुआ दिखाई देगा। घड़ियोंका रेडियो टाइम वा स्थानीय पोष्ट-आफिससे ठीक मिला हुआ रहना परमावश्यक है।

छाद्य छादक कक्षा भेद न होनेके कारण चन्द्र-ग्रहणका स्वरूप (ग्रास) सर्वत्र एक जैसा ही दिखाई देता है।

वेध वा सूतक

इसका वेध (सूतक) धर्मप्राण जनताके लिये मध्याह्नोत्तर स्टैण्डर्ड-टाइमसे १ बजकर १५ मिनिट पर प्रारम्भ होगा। और रोगी, बाल, वृद्ध, आतुरोंके लिये सायंकाल स्टे० टाइम ७ बजकर १५ मिनिटसे प्रारम्भ होगा। ग्रहणके वेधमें भोजन आदि नहीं करना चाहिये।

राशियोंको शुभाशुभ

यह ग्रहण ज्येष्ठा एवं मूलनक्षत्र वालोंके लिये विशेष अरिष्टप्रद है। मेष वृषभ मिथुन सिंह कन्या, वृश्चिक, धनुः मकर राशिवालोंके लिये नेष्ट है। कर्क, तुला, कुम्भ, तथा मीन राशि वालोंके लिये श्रेष्ठ हैं।

ग्रहणका संसार पर प्रभाव

ज्येष्ठ शुक्ला पूर्णिमाके प्रस्तुत चन्द्रग्रहण का मध्यकाल जोकि १२ बजकर १० मिनिट पर है। उस समयमें कुम्भ लग्न है। "न कुम्भलग्नं शुभमाह सत्यः" सत्याचार्यके इस बचनसे यह चन्द्रग्रहण संसारके लिये अनिष्ट सूचक ही है। लग्नेश शनि षष्ठ स्थानमें और षष्ठेश चन्द्रमा (प्रजा सत्ताकारक) नीचका दशमस्थानमें और दशमेश मङ्गल सप्तममें गुरु नेपच्यून अष्टममें हैं इन सब योगोंके सूक्ष्म विचारसे ज्ञात होता है कि यह ग्रहण संसारके लिये अच्छा नहीं है। राजा प्रजाका वैमनस्य परस्पर बढ़ेगा। शासक वर्ग पर भी आपत्तियोंका सम्बन्ध स्थायी सा ही रहेगा। प्रजासत्तात्मक बल बढ़ेगा। भारतीय लोकमत विशेष रूपसे सुसंगठित और सज्जित होगा। अन्तर्राष्ट्रिय व्यवस्थाओंमें बाधा उत्पन्न होगी। चट्टान अथवा किसी खानके फटनेसे अकस्मात् जन धनकी हानि होगी। मल्लाहों और खल्लासियोंकी भी मृत्यु होगी।

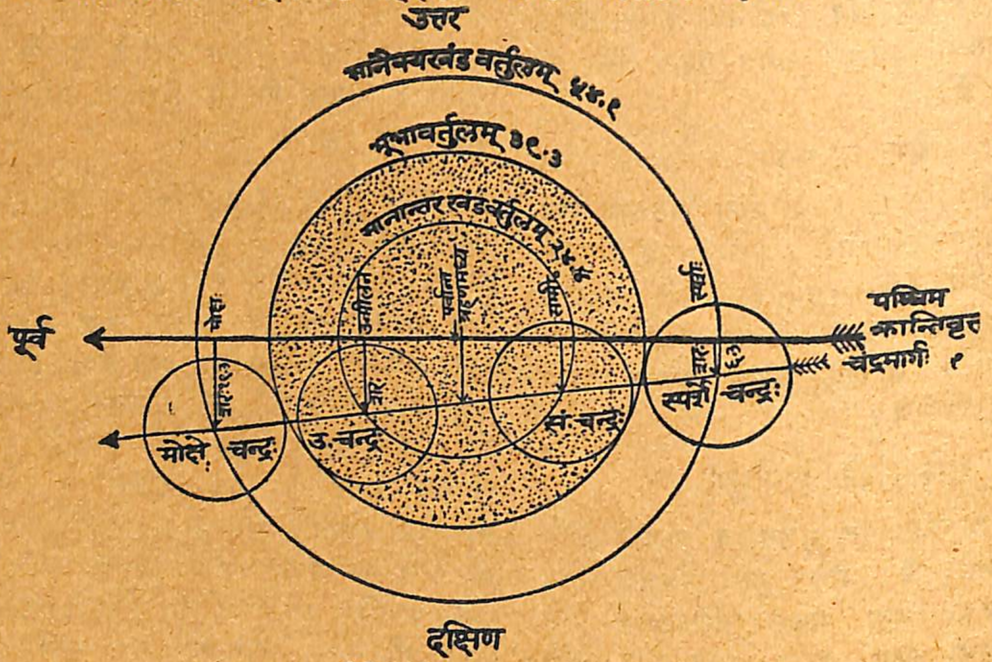
वृश्चिक, कन्या, मीन राशिके देशोंमें भूकम्प आवेंगे। समस्त विश्वमें विशेषकर उत्तरपश्चिमी भूभाग पर क्रान्ति होगी।

किसी महान् राजपुरुषकी मृत्युका होना भी पूर्ण संभव है। मित्रराष्ट्रोंके मतभेद बढ़ेंगे। यूरोपके अनेक प्रान्तोंमें और सुदूरपूर्वके जापानादि छोटे बड़े द्वीपसमूहोंमें भीषण अन्न संकट और नाना प्रकारके उत्पातोंसे प्रजा त्रस्त हो उठेगी। भारतवर्षके लिये भी इस ग्रहणका प्रभाव तथा फल विशेष उत्तम प्रतीत नहीं होता है। भारतकी आर्थिक सामाजिक एवं राजनैतिक समस्याएं शोचनीय रहेंगी। गुरु, बुध, शुक्र, तीनों ग्रहों की गोचर परिस्थिति वश वाग्युद्ध वादविवाद राष्ट्रिय और अराष्ट्रिय दलोंमें अधिक होंगे। साम्प्रदायिक संघर्ष भी कहीं कहीं तीव्र रूप धारण करेगा। पंजाब, काश्मीर, सिन्ध, गुजरात, काठियावाड, महाराष्ट्र और बंगालमें, रोग दुर्भिक्ष, वायु प्रकोप वर्षाकी न्यूनाधिकता द्वारा तथा अन्न, वस्त्रादिकोंके नाना प्रकारके कष्टोंसे भी प्रजा पीड़ित रहेगी।

भारतकी आर्थिक स्थिति, व्यापारिक स्थितिमें भी विशेष परिवर्तन होंगे, खेती पर, फसलों पर, वर्षा पर धर्मप्राण पुरुषों पर एवं मठाधिपतियों पर भी इस ग्रहणका बुरा ही प्रभाव पड़ेगा। व्यापारिक वस्तुओंमें विशेष उथल पथल होगी। चांदी, मोती, रुई, घी, श्वेत वस्त्र तथा चीनी, देशीखाण्डमें अत्यधिक एवं अन्य लाल वस्तुओं पर भी ग्रहणका प्रभाव भलि-भांति पड़ेगा।

व्यापारिक समाजके लिये यह समय बहुत स्वर्णयुग भी कहा जा सकता है, तथा दोषकारक भी रह सकता है। बहुतसी व्यापारिक वस्तुओंमें

ग्रहणसे पूर्व मन्दी तथा तेजीके योग पाये जाते हैं और बहुतसी वस्तुओंमें ग्रहणके बादमें मंदी तेजी होनेके योग हैं। व्यापारिक बन्धुओंको इस ओर भी ध्यान रखना चाहिये कि ग्रहणका प्रभाव प्रत्येक वस्तुओं पर ६ मास तक रहता है। व्यापारमें आगामी ६ मासोंमें क्या परिवर्तन होगा? इसका स्पष्ट विवरण हमारी स्पेशल मासिक रिपोर्टमें देखो।



'श्रीविश्वविजयपञ्चाङ्ग'से

भारतके सुप्रसिद्ध ज्योतिषी और पञ्चाङ्गकार 'श्रीस्वाध्याय' के यशस्वी सम्पादक, ज्योतिषमार्तण्ड ज्योतिर्विद्यारत्न पण्डितभूषण श्रीहरदेवजी शर्मा त्रिवेदी ज्योतिषाचार्य द्वारा सम्पादित—

सं० २००३ वि० का

"श्रीविश्वविजय—पंचांग"

यह पंचांग नवीन शुद्ध गणनानुसार बड़े परिश्रमसे निर्माण किया गया है। वर्षफल, भविष्यवाणी, पाक्षिक फलादेश, दैनिक स्पष्ट ग्रह, दैनिक लग्नसारणी प्रतिदिनकी ग्रहयुति शुभाशुभयोग मुहूर्त आदि अनेक आवश्यक महत्त्वपूर्ण विषय दिये गये हैं। उत्तर भारतमें इस प्रकारका सर्वाङ्गशुद्ध केतकी द्वारा सूक्ष्म गणित और फलितसे परिपूर्ण यह पहला ही पंचांग है। भारतके बड़े बड़े धुरन्धर विद्वानोंने मुक्तकण्ठसे इस पंचांग की प्रशंसा की है। छपते ही हाथोंहाथ बिक रहा है। अब बहुत थोड़ी प्रतियां शेष हैं। अतः अपनी प्रति शीघ्र मंगवा लीजिये अन्यथा गत वर्षकी भांति इस वर्ष भी कहीं आप इस अद्भुत पंचांगसे वंचित न रह जायें। एक प्रतिका मूल्य डाकखर्च सहित ।।।=) परन्तु 'श्रीस्वाध्याय'के ग्राहकोंको ।।=) में भेजा जायगा। इस पंचांग की छपाई और कागज बहुत सुन्दर है। पृष्ठ १००। इस पंचांग और अन्य सब प्रकारकी हिन्दी संस्कृत पुस्तकोंके लिये नीचे के पते पर आर्डर भेजिये—

मेहरचन्द्र लक्ष्मणदास, संस्कृत पुस्तकालय, सैदमिट्ठा बाजार, लाहौर।

श्रीसुभाषचन्द्र वसु नेताजीका जन्मलग्न

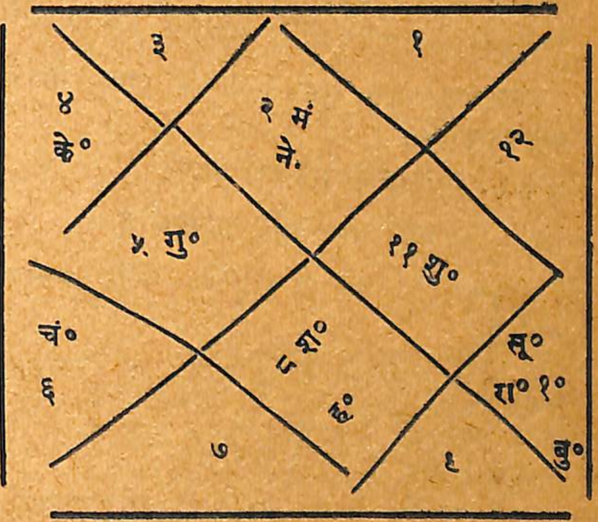
[लेखक—श्री हरदेव शर्मा त्रिवेदी सम्पादक 'श्रीस्वाध्याय' और 'श्रीविश्वविजयपञ्चाङ्ग']

[गत हेमन्ताङ्कमें हमने श्री शम्भुनाथसेन द्वारा प्रचारित नेताजी की जन्मकुण्डली प्रकाशित करके लिखा था कि "आगामी अङ्क में हम अपना मन्तव्य प्रकाशित करेंगे" तदनुसार यहां अब हम श्री नेताजीके जन्मलग्न पर विशेष रूपसे प्रकाश डाल रहे हैं। विगत कुछ मासोंसे भारतके प्रायः प्रत्येक पत्र पत्रिकाओंमें ऐसे समाचार आते रहे हैं, जिन्हें पढ़कर जनता क्षुब्ध है। जापानी सरकारकी सूचनाके अनुसार 'श्री सुभाषचन्द्र वसुका देहान्त विमान दुर्घटनासे हो चुका है।' श्री सुभाष बाबूके निकटवर्ती स्वतन्त्रभारत सेनाके प्रमुख अधिकारी श्री कैप्टन हबीबुर्रहमानका कथन है कि 'मेरे सामने नेताजी का देहान्त हुआ है' वे उनकी जलकर काली हुई घड़ी भी अपने साथ लाये हैं। नेताजीके दूसरे साथी श्री अय्यरने भी श्री महात्मा गांधीजी से कहा है कि—"मुझे उनकी (नेताजी की) जिन्दा होनेकी मान्यताको छोड़ देना चाहिए।' अब कुछ दिनोंसे समाचारपत्रोंमें नेताजी के जीवित होनेकी सूचनाएं भी छप रही हैं। कोई उन्हें रूस, मंचूरिया चीनमें तो कोई भारतमें ही बताता है, अस्तु। आजसे तीन मास पूर्व लाहौरमें श्री नेताजीके स्वर्णजयन्ती महोत्सव पर हमने अपने सं० २००३ के 'श्रीविश्वविजयपञ्चाङ्ग' और 'विश्वबन्धु' में श्री नेताजी के जन्मलग्न पर जो निर्णय किया था वही हम यहां अक्षरशः दे रहे हैं। —लेखक]

इस समय नेताजीकी दो जन्मकुण्डलियाँ भिन्न-भिन्न लग्नोंकी हमारे सामने हैं। कलकत्ताके सुप्रसिद्ध ज्योतिषी श्री शम्भुनाथ सेन द्वारा प्रेषित मेष लग्नकी कुण्डली जो गताङ्कमें प्रकाशित हुई है उस पर सम्यक्तया विचार करनेसे हमें मेष लग्नसे महान् क्रान्तिकारक, युगनिर्माता, सेनापति, साहसी, अनुपम देशभक्त होना प्रतीत नहीं होता। मेषलग्न से पंचम गुरुकी स्थितिसे वे केवल बौद्धिक विचारक प्राणी ही हो सकते थे। इसके विपरीत वृषभ लग्न की ग्रहस्थिति उनके स्वभाव और जीवनकी कई घटनाओंको स्पष्ट प्रकट करती है। उज्जैनके अन्तर्राष्ट्रिय-ख्यातिप्राप्त विद्वान् ज्योतिर्विज्ञानाचार्य श्री पं० सूर्यनारायणजी व्यासने अपनी 'कुण्डली-संग्रह' में नेताजीका वृषभ लग्न दिया है, वही हमें ठीक प्रतीत होता है। नेताजी की जन्मतिथि और कुण्डली यह है—

सं० १९५३ माघ कृष्ण ५ शनिवार ता० २३ जनवरी सन् १८९७ ई०।

जन्म लग्नम्



इस लग्नसे मंगल नेपच्यून शनि हर्शल चन्द्र गुरुकी स्थितिसे नेताजीका राजयोग, प्रधानसेनापतित्व कष्टसहिष्णु, त्यागी, अविवाहित जीवन, जितेन्द्रिय, विज्ञ, उग्रविचारक आदि कई गुण अधिक घटित होते हैं। यही ग्रह सर्वोच्च नेतृस्थान प्राप्त कराने त. । राज्यसे संघर्ष कराने वाले भी हैं।

शनि आपत्ति तथा साहसपूर्ण घटनाओंका कारण होता है। जो नेताजीने प्रच्छन्न प्रवृत्तियोंका अनुकरण किया था वह वृषभलग्नसे शनि मङ्गलकी स्थितिसे ही सम्भावित हैं।

वृषभ लग्नसे केन्द्रमें गुरु-शुक्र शनि और लग्न में मङ्गल होनेसे अंशावतार योग भी घटित होता है। यद्यपि शनि वहां उच्चका नहीं है, तथापि अंशावतार योगका फल नेताजीके जीवनमें अधिकतर घटित हो जाता है। योग और उसका फल निम्न है—

केन्द्रगौ सितदेवेज्यौ स्वोच्चे केन्द्रगतेऽर्कजे।
भौमे लग्नगते जन्म योगोऽयमवतारजः॥
पुण्यश्लोको देशचारी कलाज्ञः कार्यासक्तः कालकर्ता जितात्मा।
वेदान्तज्ञो वेदशास्त्राधिकारी जातो राजा श्रीधरोंऽशावतारे॥

इस प्रमाणसे स्पष्ट सिद्ध होता है कि नेताजी एक अलौकिक महापुरुष ही नहीं प्रत्युत इस युगके अंशावतार हैं। जातक ग्रन्थोंके कथनानुसार वृषभलग्नसे सिंहासनाख्यिका योग भी बनता है, यथा—
"धर्मेऽम्बुपे शुक्रेज्यौ तुर्ये धर्मेशे केन्द्रकोणे सिंहासनाख्यिः"

अष्टमेश षष्ठेश गुरुका केन्द्रमें होना प्रतापी योगकारक है—

"रन्ध्रारीशौ केन्द्रगौ प्रतापी"

आयुर्विचार और अरिष्टयोग

वृषलग्नसे नेताजी की आयु ७० वर्षके आसन्न आती है—

(१) रन्ध्राङ्गेशाः केन्द्रकोणलाभगाः दीर्घायुः।
(२) रन्ध्रेशे केन्द्रे दीर्घायुः।
(३) शुभाः केन्द्रकोणे दीर्घायुः।

इन दीर्घायुः योगोंके अतिरिक्त जातकतत्त्वमें ७० वर्षकी आयुके दो योग और लिखे हैं—

(१) केन्द्रमें मित्र राशिका शुक्र ७० वर्षकी आयु करता है और (२) यदि बलवान् शुभग्रह केन्द्रमें हों, लग्नेश पापदृष्ट न हो, अष्टममें कोई पापग्रह न हो तो ७० वर्षकी आयु होती है।

मंगल शनिके कारण उन्हें अपने जीवनमें अनेक बार घोर आपत्तियों और महान् संकटोंका सामना करना तो निश्चित ही है, साथ ही उदरविकार, रक्तविकार और वातव्याधि वा स्नायविक-पीड़ासे भी कई बार स्वास्थ्य हानिका योग था। परन्तु केन्द्रस्थ गुरु शुक्र सब प्रकारकी आपत्तियोंको सहन करनेकी शक्ति और आध्यात्मिक बलको निरन्तर बढ़ाते रहते हैं। इस समय गुरु महादशा चल रही है। जन्मका ठीक यथार्थ समय या इष्ट काल प्राप्त न होनेसे हम सूक्ष्म अन्तर्दशाएं नहीं लगा सके। स्थूल मानेन इस समय राहुकी अन्तर्दशा चल रही है, इससे पूर्व चन्द्र भौमान्तरमें ही उन्होंने लग्नानुरूप महान् सैनिक संगठन और आक्रामक प्रवृत्तियां की हैं। किन्तु वृषलग्नसे ४६वां वर्ष नेताजी के लिये सफलताका सूचक न होकर महान् अरिष्टप्रद बन रहा था। गुरुसे राहु षष्ठ होनेके कारण यह अन्तर्दशा भी भयप्रद ही है। 'अन्योन्यषष्ठाष्टमगयोरन्तरे महद्भयम्" ४६वें वर्षमें लग्नस्थ मंगल शनि हर्शल नेपच्यूनके योग प्रतियोगसे नेताजीके जीवन के लिए महान् संकट अग्निभय और दुर्घटनाका योग बना अवश्य था, परन्तु गुरु शुक्रकी बलवान् स्थितिके कारण और भगवत् कृपासे वे इस विपत्ति की ज्वालामें से भी सुरक्षित निकलनेमें सक्षम हो सकते थे।

विमान-दुर्घटनासे मृत्यु होनेवाले ४ व्यक्तियोंकी जन्म-कुण्डलियां इस समय हमारे सामने हैं। इनमें पहले हैं ड्यूक आफ केण्ट, २ रे युवराज श्रीप्रतापसिंह जी सांगली, ३ रे श्री पंत वैद्य और ४ थे श्री मधुसूदन दाते। इन चारोंका जो जन्मलग्न है वही अपघात लग्न है और प्रायः वातप्रधान ग्रह अथवा राशियां अष्टमसे सम्बन्धित हैं। एवं लग्न लग्नेश क्रूरकर्तरीमें या क्रूराक्रान्त होकर गुरुसे युत दृष्ट नहीं है। श्री सुभाषचन्द्र वसु की विमान-दुर्घटना के समय ता० २० अगस्तको भी वृषभलग्न ही था और वहां भी लग्नमें मङ्गल है, यह भी एक विशेष बात है। साथ ही इस अपघात लग्नको पंचमस्थ गुरु मित्र

दृष्टिसे देख रहा है। (उपर्युक्त चारों मृतव्यक्तियोंके अपघात लग्नोंपर गुरुकी पूर्ण मित्रदृष्टि नहीं है) उधर नेताजी की जन्मकुण्डलीमें भी गुरु बलवान् है और वर्तमानमें महादशा गुरुकी ही चल रही है, अतः हमें आशा ही नहीं विश्वास है कि वे उक्त दुर्घटनासे भी बच निकले हैं। वर्तमान राह्वन्तरमें (सूर्य सहयोगी राहु है) उनका प्रच्छन्न हो जाना भी स्वाभाविक है। कर्कके शनिमें (जो ज्येष्ठ शु० ६ को आकर प्रायः २।। वर्ष तक रहेगा) वृश्चिकका गुरु आने पर उनका प्रकट हो जाना सम्भव है। कोई विस्मय नहीं कि कन्याके गुरुमें भी ता० ८ जूनके अनन्तर कुछ पता लग जावे। आनेवाली शनिमहादशा और कर्कके शनिमें उनका प्रकाशमें आना और भाग्येश दशमेश शनि सप्तम होनेके कारण महत्ता एवं समादरणीय नेतृस्थान प्राप्त कर लेना साहजिक दिखाई देता है। १९ वर्ष के लिए यह शनि महादशा महान् राजयोग कारक सिद्ध होगी, इसी दशामें वे अपने सत्प्रयत्नों द्वारा भारतको स्वतन्त्र करानेमें सफल होंगे। नेताजी की कुण्डलीमें 'यव' नामक योग भी घटित होता है, जो उनको चिरायुः त्यागी गुणी और आयुके अन्तिम भागमें सुखी बनाता हैं। यथा—

पापग्रहाः प्रथम व सप्तमभा संस्थाः,
सौम्याः गताः दशम पंचम भूमिगेहे।
योगो यवो निगदितः सुखिनो वयान्ते,
त्यागात्मवान् शुचिगुणी प्रथितश्चिरायुः ॥

निष्कर्ष यह है कि गत ४९वें वर्षमें नेताजीको किसी घातक दुर्घटनासे सामना तो अवश्य होना चाहिए। किन्तु उपर्युक्त गुरु शुक्रके प्रभावसे सुरक्षित होने पर वे ५२वें वर्षसे पूर्व ही प्रकट होकर राष्ट्रमें नवजीवनका संचार करेंगे।

यह फल हमने वृषभलग्नकी ग्रहस्थितिमात्रसे लिखा है। इष्टकाल (जन्म समय) ठीक ठीक निश्चित न होनेसे चलित षड्वर्गबल और दशान्तर-दशाओं का सूक्ष्म विचार नहीं हो सका। हम नेताजीका शुद्ध इष्टकाल प्राप्त करनेके प्रयत्नमें हैं। शुद्ध जन्मेष्टकाल प्राप्त होने पर किसी आगामी अङ्कमें हम इस पर विशेष प्रकाश डालेंगे। अन्यान्य ज्योतिर्विज्ञानके विशेषज्ञ विद्वान् भी नेताजीकी जन्मकुण्डली पर अपना अपना मत प्रकट करें तो अधिक उत्तम होगा और किसी सज्जनके पास नेताजीका ठीक ठीक जन्म समय शुद्ध इष्टकाल हो तो वह भी हमें भेजनेकी कृपा करें। नेताजी जैसे राष्ट्रिय महापुरुषका भविष्य निर्णय करना किसी एक स्वल्प-साधन-सम्पन्न व्यक्ति का कार्य नहीं। जिस प्रकार राष्ट्र और समाजके भविष्यके लिए बहुत सूक्ष्म विचारकी आवश्यकता है, उसी प्रकार राष्ट्रनिर्माता महापुरुषोंके लिए भी। क्योंकि ऐसे महापुरुषोंका जीवन व्यक्तिगत न होकर समस्त राष्ट्रके साथ सम्बधित होता है। अतः राष्ट्रके विशेषज्ञ विद्वानोंका कर्तव्य है कि वे पारस्परिक सहयोग द्वारा ऐसे प्रश्नोंका सामूहिकनिर्णय करें। साथ ही यहां एक निवेदन हम और कर देना चाहते हैं कि ज्योतिर्विज्ञानके गणित-विभागमें जिस प्रकारके नवीन सूक्ष्मातिसूक्ष्म अन्वेषण और संशोधन हुए हैं उसी प्रकार अब फलित विभागमें भी पर्याप्त नवीन अन्वेषण और संशोधनकी आवश्यकता है। डाक्टरी एलोपैथी होम्योपैथी आदि अन्यान्य विज्ञानोंकी भांति ज्योतिष भी एक महान् विज्ञान है। परन्तु इसे राज्याश्रय प्राप्त न होने और ज्योतिर्विदोंके पारस्परिक-संगठन-सहयोगजन्य अन्वेषणकार्यके अभावमें यह विज्ञान पिछड़ासा दिखाई देता है। जिस प्रकार परफेक्ट कहे जाने वाले राज्याश्रय प्राप्त डाक्टरी विज्ञानमें अभी तक शतप्रतिशत सार्वत्रिक सफलता न होने पर भी उसकी उन्नति और अन्वेषणके लिये राज्यकी ओरसे प्रतिवर्ष लाखों रुपये व्यय किये जाते हैं, उसी प्रकार यदि इस विज्ञान पर भी कुछ व्यय करके विशेषज्ञोंका संगठन किया जाय तो हमें विश्वास है कि यह विज्ञान डाक्टरीसे अधिक सफल और लोकोपकारक हो सकता है। आर्यसंस्कृतिके संरक्षक विज्ञानप्रेमी भारतीय राजा महाराजाओं और लक्ष्मीके वरदपुत्र धनी मानी महानुभावोंका यह कर्तव्य है कि वे अपना उदार आश्रय देकर इस विज्ञानकी उन्नतिमें सहायक हों।

त्रैमासिक पर्व व्रतादि निर्णय

['श्रीविश्वविजयपञ्चाङ्ग' से]

चैत्र शुक्ल	११ शुक्रवार	ता० १२ अप्रैल	कामदा एकादशी व्रत दोलोत्सव
	१२ शनिवार	ता० १३ ,,	मेष संक्रान्ति (वैशाखी) पुण्यकाल मध्याह्नोत्तर मु० ४५❋
	१४ सोमवार	ता० १५ ,,	सत्य व्रत ❋ शनिप्रदोष व्रत अनङ्ग त्रयोदशी
	१५ मंगलवार	ता० १६ ,,	वैशाख १५ वैशाख स्नानारम्भ
वैशाख कृष्ण	४ शनिवार	ता० २० ,,	श्रीगणेश ४ व्रत चन्द्रोदय स्टै० टा० १०।२५
	१० शनिवार	ता० २७ ,,	वरूथिनी एकादशी व्रत स्मार्त्तोंके लिए
	१३ सोमवार	ता० २९ ,,	सोमप्रदोष व्रत
	३० बुधवार	ता० १ मई	अमावस्या मेला पञ्जोर सत्तुदान
वैशाख शुक्ल	१ गुरुवार	ता० २ ,,	चन्द्रदर्शन
	२ शुक्रवार	ता० ३ ,,	श्रीपरशुराम जयन्ती अक्षया ३
	५ रविवार	ता० ५ ,,	श्री भगवान् आद्यशङ्कराचार्य जयन्ती
	७ मंगलवार	ता ७ ,,	श्री गङ्गा सप्तमी
	११ शनिवार	ता० ११ ,,	मोहिनी एकादशी व्रत
	१३ सोमवार	ता० १३ ,,	सोमप्रदोष व्रत
	१४ मङ्गलवार	ता० १४ ,,	श्री नृसिंह १४ जयन्ती वृषभसंक्रान्ति मु० १५ पुण्यकाल मध्याह्नोत्तर
	१५ बुधवार	ता० १५ ,,	सत्यव्रत कूर्म जयन्ती
	१५ गुरुवार	ता० १६ ,,	वैशाखस्नान समाप्ति जलघटान्नदान
ज्येष्ठ कृष्ण	३ रविवार	ता० १९ ,,	श्री गणेश ४ व्रत चन्द्रोदय स्टै० टा० १०।८
	११ सोमवार	ता० २७ ,,	अपरा (भद्रकाली) एकादशी व्रत
	१२ मङ्गलवार	ता० २८ ,,	भौम प्रदोष व्रत
	३० गुरुवार	ता० ३० ,,	वटसावित्री अमावस्या व्रत
ज्येष्ठ शु०	२ शनिवार	ता० १ जून	चन्द्रदर्शन
	३ रविवार	ता० २ ,,	श्रीप्रताप जयन्ती, रम्भा व्रत
	१० रविवार	ता० ९ ,,	श्री गङ्गा दशहरा
	११ सोमवार	ता० १० ,,	निर्जला एकादशी व्रत
	१२ मङ्गलवार	ता० ११ ,,	भौमप्रदोष व्रत
	१५ शुक्रवार	ता० १४ ,,	सत्यव्रत खग्रास चन्द्रग्रहण मिथुन संक्रान्ति मु० ३० पुण्यकाल दूसरे दिन
आषाढ़ कृ०	४ मंगलवार	ता० १८ ,,	श्री गणेश ४ व्रत चन्द्रोदय स्टै० टा० १०।२६
	११ मङ्गलवार	ता० २५ ,,	योगिनी एकादशी व्रत
	१२ बुधवार	ता० २६ ,,	प्रदोषव्रत
	३० शनिवार	ता० २९ ,,	शनैश्चरी अमावस
आषाढ़ शु०	२ रविवार	ता० ३० ,,	चन्द्रदर्शन श्री जगदीश रथयात्रा

दैवज्ञकी दृष्टिमें संसार-चक्र

सं० २००३ की ग्रह परिषद्का विचार

संसारकी राजनैतिक आर्थिक सामाजिकादि परिस्थितिका विश्लेषण

[श्री हरदेव शर्मा त्रिवेदी, सम्पादक 'श्रीस्वाध्याय']

इस संसारचक्र स्तम्भ द्वारा विगत पांचवर्षों से हम 'श्रीस्वाध्याय' के पाठकोंकी सेवा निरन्तर कर रहे हैं। हमें इस बातका परम सन्तोष है कि भारत के महामान्य विद्वानों नेताओं और प्रेमी पाठकोंने हमारे प्रयत्नकी प्रशंसा करके भारतीय ज्योतिविज्ञानकी ओर अपनी अभिरुचि प्रकट की है। जगदम्बाकी कृपासे इस स्तम्भमें लिखी गई भविष्यवाणियां ६०–६५ प्रतिशत तक सत्य सिद्ध हुई और हो रही हैं। यह पाठकोंको भलीभांति विदित ही है कि आज से प्रायः डेढ़वर्षपूर्व गत वर्षके 'हेमन्ताङ्क' 'वसन्ताङ्क' और 'ग्रीष्माङ्क' में—मित्रोंकी विजय होना, शासन चक्रोंमें, युद्धकी गति विधिमें राष्ट्रोंके रूपान्तरोमें अकल्पित आश्चर्यजनक घटनाऐ घटित होना, भारतीय गत्यत्ररोध दूर करके स्वराज्य देनेकी बृटिश--शासकों की ओरसे विशेष चर्चा होना, भारतमें कहीं-कहीं साम्प्रदायिक संघर्ष रक्तपात, कण्ट्रोलकी कठोरता, सेना और राजकीय विभागोंमें असन्तोष धान्योत्पत्ति न्यून कौंसिल असेम्बलियोंमें प्रजापत्तका बहुमत होना, कांग्रेसको अभूतपूर्व सफलता मिलकर कई प्रान्तोंमें कांग्रेसी मंत्रीमण्डल और कुछ प्रान्तोंमें संयुक्तमंत्रिमण्डल बनना, जापानके लिये विनाशक योग और रूसकी महत्वाकांक्षा निरन्तर बढते रहना, दिसम्बरसे मार्च ४६ तक संसारमें अनेक प्रकारके उपद्रव नानाविध कष्टादिका होना' आदि २ जिन अनेकों बातों का स्पष्ट उल्लेख विस्तृतरूपमें किया था वे सब घटनाएं अक्षरशः सामने आचुकी हैं। चारमास पूर्व गत पौषमासके 'हेमन्ताङ्क'में और आपने 'श्रीविश्वविजय पञ्चाङ्ग'में हमने चैत्रकृष्णपक्षमें तिथिवृद्धि और चैत्र शुक्लमें तिथिक्षयका सप्रमाण योग बताकर भीषण रूपमें अन्नसंङ्कट प्रकट होनेकी सूचना दी थी वह भी अब प्रत्यक्षमें उपस्थित हो रही है, अस्तु।

ग्रहपरिषद्

सं० २००३ की ग्रहपरिषद्के दश--अधिकारियों में से ६ अधिकार पापग्रहों और ४ शुभग्रहोंको प्राप्त हुए हैं। इस वर्षके सर्वाधिकारी वा राजा बुध हैं, जो स्वयं निर्बली (नीचराशिस्थ) तथा अस्थिरमानस नपुंसक ग्रह हैं। प्रधानमंत्री क्रूरकर्मा शनिदेव राहुके साथ हैं, ये राजाबुधको प्रभावित कर संसारमें अनार्यत्वकी वृद्धि करते हुए अपना आतङ्क स्थापित करेंगे। मन्त्रिमण्डलमें इस वर्ष बहुमत इन्हींका (पापग्रहोंका) रहेगा, अतः इन सब अधिकारियों और वर्षेशादि लग्नोंका सम्यक्तया विचार करनेसे, तथा गुरुकी राशित्रय स्पर्शिनी अतिचार गतिको देखनेसे ज्ञात होता है कि यह वर्ष भी समस्त संसार को शांतिकी सुखद छाया में बिठाने वाला सिद्ध न होगा। संसार की महाशक्तियोंके सामने अनेक विषम समस्याएं उत्पन्न होंगी। बड़े राष्ट्रोंमें पारस्परिक पूर्णसहयोग और आन्तरिकसद्भावना न रहेगी। कूटनीतिका आश्रय अधिक होगा। मित्रराष्ट्रोंकी साम्राज्यवादी प्रतिस्पर्धा के कारण अन्तर्राष्ट्रिय संगठन और सम्मेलन कुछ विशेष सफल न होंगे। कई राष्ट्रोंके शासनविधानमें अकल्पित परिवर्तन होंगे। आधिदैविक आधिभौतिक उपद्रव, दुर्भिक्ष रोग महामारी जलप्लावन भूकम्पादिसे भी भूमण्डलके कई प्रदेश क्षतिग्रस्त होंगे।

कर्क और मकर संक्रान्ति इस वर्ष एक ही वार (मंगल) की हैं तथा मेष संक्रान्ति भी क्रूर (शनि)

वार की है, यह योग भी दुर्भिक्ष राजविग्रहादि उत्पात सूचक है, यथा —

मेषकर्कमकरेऽर्कसंक्रमे क्रूरवारसहिते जलं नहि।
धान्यमल्पतरमेव वत्सरे विग्रहो विपुलरोगतस्करैः॥

अमेरिका यूरुप चीन जापान और पूर्वीय एशिया के द्वीपसमूहोंमें उक्त आधिव्याधियों का प्रकोप अधिक होगा। भारतमें इन कुयोगोंका दुष्परिणाम कम होगा। हमने १२ वर्ष पूर्व इस द्वितीय महायुद्ध एवं भीषण जन-धन-संहारकी भविष्यवाणी की थी और 'श्रीस्वाध्याय' में भी कई बार स्पष्ट घोषित कर चुके थे कि 'सं० २००५ वि० तक संसारमें पूर्णशांति स्थापित नहीं हो सकती।' तदनुसार इस वर्ष यूरोप और एशियाका युद्धग्रस्त अशान्त वायुमण्डल विस्फोटक बमोंके धुवें और तोपोंकी भीषण गर्जनासे चाहे भले ही शान्त हो गया है, किन्तु वहांका सामाजिक राजनैतिक एवं आर्थिक वायुमण्डल अभी अशान्त और अन्धकारमय ही रहेगा। अस्तु।

भारतवर्ष

इस वर्ष ग्रहोंका प्रभाव भारतके लिए सर्वथा प्रतिकूल नहीं है, अधिकांशमें अनुकूल रहेगा और राजनैतिक दृष्टिसे यह वर्ष ऐतिहासिक एवं महत्त्वपूर्ण होगा। चिरकालसे स्वातन्त्र्यके लिए जो अथक परिश्रम और बलिदान किये जा रहे हैं, वे सफल होते प्रतीत होंगे और कुछ अधिकार भारतको अवश्य प्राप्त होंगे। इस वर्षमें भारतीय जनमतके सामने ब्रिटिश साम्राज्यको झुकना पड़ेगा, अन्तर्राष्ट्रिय आर्थिक एवं सामाजिक समस्याओंमें अब भारतकी उपेक्षा न होगी। राजनैतिक दृष्टिसे उत्तम होते हुए भी यह वर्ष भारतीय प्रजाके लिए पूर्ण सन्तोषकारक नहीं कहा जा सकता। कई प्रकारकी आर्थिक सामाजिक और राजनैतिक समस्याएं विकटरूपमें उपस्थित होंगी। वर्षके आरम्भमें बृटिश उच्चाधिकारी भारतीय लोकमतके साथ अपनी पूर्ण सहानुभूति प्रकट करेंगे और भारतीय जनता अपने लक्ष्यकी ओर अग्रसर होती जायगी।

यह वर्ष वृषभलग्नमें प्रारम्भ हो रहा है। लग्नेश १२ वें है और शुक्रसे चन्द्रमा १२ वें है, अतः प्रजाका शारीरिक एवं मानसिक स्वास्थ्य विशेष उत्तम न रहेगा। धनमें मंगल शनि राहुका योग भयंकर आर्थिक कष्ट और उत्पादन-हानि दुर्भिक्षादिका द्योतक है। ग्यारहवें तृतीयेश चतुर्थेश चन्द्र सूर्यके साथ वर्षराज बुध धनेश पञ्चमेश होकर नीच राशिमें बैठे हैं, तथा न्याय-प्रिय देवगुरु लाभेश अष्टमेश होकर छठे गये हैं, इन योगोंसे ज्ञात होता है कि संसारमें अभी पूर्ण शान्ति नहीं होगी। राजा प्रजामें वैमनस्य रहेगा। पूर्वीय विभागमें उत्पात दुर्भिक्ष, रोगोपद्रव, रक्तपात, अवर्षण, प्रजामें क्लेश आदि हों। प्रजाकारक चन्द्रमा पराक्रमेश होकर लाभ स्थानमें सुखेश सूर्य और वर्षाधिपति बुधके साथ योग कर रहा है अतः इस वर्षमें प्रजापक्ष और श्रमजीवियोंका बल बढ़ेगा। प्रजाकी प्रातिनिधिक संस्थाएं कांग्रेस लोकपरिषद आदि संस्थाओंका प्रभुत्व बढ़ेगा। बृटिशसत्ताकारक शनि वर्ष कुण्डलीमें राज्येश होकर धनमें मङ्गल राहुसे पीड़ित है, यह योग बृटिश शासकोंके लिए उत्तम नहीं है, भारतकी स्थिति उनके लिए चिन्ता कारक होती जायगी। राष्ट्रियताके शत्रुओंकी शक्ति क्षीण होगी और राष्ट्रहितचिन्तकों एवं राष्ट्रियमहासभाकी प्रतिष्ठा सर्वत्र बढ़ेगी। आषाढसे पूर्व ही बृटिश शासकों की ओरसे भारतीयोंके हाथमें कुछ सत्ता सौंपी जायगी, किन्तु राष्ट्रियदल उससे पूर्ण रूपेण सन्तुष्ट न होगा। वैधानिक समस्याओंको शासकगण टालेंगे नहीं, किन्तु उनमें बहुत अधिक प्रगति नहीं होगी, फिर भी शनिके कर्कमें जाने पर किसी प्रकारकी राष्ट्रिय सरकारके स्थापित होनेका पूर्ण योग है। वैशाख कृष्णामावास्याको राहु शनि से अलग होकर वृषभमें हर्शलके साथ जा रहा है और आगे ज्येष्ठ शुक्ला ६ को शनि प्रजा सत्ताकारक चन्द्रमाकी राशिमें जा रहा है, अतः वैशाखसे आगेका समय संसार और भारतकी

कथनको सानुराग उद्धृत किया जाता है। जैसे—"देखते हो कितनी कड़ाकेकी सर्दी पड़ रही है ?', उत्तर—'अच्छा, इतने मोटे कपड़ोंसे भी तुम्हारी ठण्ड नहीं जाती।', 'नहीं भाई ! इन २।४ कपड़ोंसे क्या होता है।.......अच्छा, तुम्हारा शरीर तो इस एक ही लबादेसे ढका है, क्या इससे शीतकी रक्षा हो जाती है ?'; उत्तर—'यह केवल एक होकर भी गरम है और टिकाऊ तथा सस्ता है। तुम भी अमुक दुकान पर जा कर इसे खरीद लो। प्रायः ५ वर्षसे इसका व्यवहार कर रहा हूँ पर यह काम देने और देखनेमें आज भी नया है।' इत्यादि २। कहनेकी आवश्यकता नहीं कि विदेशके विज्ञापनोंमें यही एक विशेषता है कि वे अपनी सजीवता और प्रामाणिकता के उदाहरण होते हैं। अतएव उनकी कार्यकरी शक्ति में कभी अविश्वास करनेकी अशङ्का नहीं रहती। इधर कुछ दिनोंसे वैदेशिक चित्र-विज्ञापनके अनुकरण पर हमारे देशमें विज्ञापनके लिये बहुविध चित्रोंका व्यवहार होता हुआ देखा जाता है। पर हम देखते और अनुभव करते हैं कि ऐसे चित्र विज्ञापनोंमें प्रायः पुरुषकी अपेक्षा स्त्रियोंके ही अधिक दिये जाते हैं। कदाचित् विज्ञापनदाताओंका यह विश्वास है कि स्त्रियोंके बहुविध चित्र सर्वसाधारणके लिये विशेष आकर्षणका कारण होते हैं और यह सम्भव है कि अनेक क्षेत्रोंमें उनकी यह धारणा सत्य भी उतरती हो, पर इसकी कोई सीमा निश्चित है या सब में इसका परिणाम सदा आशानुरूप ही हुआ करता है—ऐसा कहना सर्वथा असङ्गत होगा। एक वैद्यराज के विज्ञापनका शीर्षक है—'उदर कल्याण वटी'। शीर्षकके नीचे गुणावलीके वर्णन स्वरूप मोटे-मोटे अक्षरोंमें लिखा हैं-"यह वटी गृहस्थीमें रहने पर हाजमेके लिये अमृततुल्य औषधि है"। इन आकर्षक पंक्तियोंके अतिरिक्त एक आकाश गामिनी परीका चित्र साथमें अलगसे दिया गया है — जिसके हाथ में 'उदर कल्याण वटी' की शीशी शोभा दे रही है। पाचन शक्ति बढ़ानेकी औषधिके विज्ञापनमें इस प्रकार के चित्रकी क्या आवश्यकता थी — यह एक अबूझ पहेली जैसी ही बात है। इसके सिवाय विज्ञापनोंमें नामाङ्कित व्यक्तियोंके अभिमत छाप कर उनके द्वारा जनताको विज्ञापित वस्तुके प्रति खीचनेकी भी एक पद्धत्ति-विशेषका प्रचार देखा जाता है परन्तु, कभी २ इस पद्धत्तिके अपप्रयोगवशतः विज्ञापन सर्वसाधारण के निकट हास्यास्पद सिद्ध होते हैं और उनका वास्तविक उद्देश्य भी नष्ट हो जाता है; अतएव विज्ञापनमें प्रमाणपत्र या जनमतको प्रकाशित करनेके लिये भी यथेष्ट विवेककी आवश्यकता है।

नगरोंमें कई दुकानों पर विद्युत्की सहायतासे विज्ञापन देनेकी एक पद्धतिका प्रचार देखनेमें आता है और इससे दुकानदारोंके सायन्बोर्ड अथवा विज्ञापन बहुरंगी रोशनी द्वारा पथिकोंका ध्यान सहज ही खींच लेते हैं। विज्ञापनकी यह आधुनिक नवीन पद्धत्ति आये दिनों शहरों और बड़े २ नगरों में विशेष रूपसे प्रचार पा रही है। कई वर्ष पूर्व 'पियर्स सोप कम्पनी' ने उज्ज्वल नीलाकाशको विज्ञापनकी पृष्ठ भूमि का रूप देकर, वायुयानसे निकलते हुये धुयेंकी सहायतासे 'पियर्स' शब्द वायुमें अङ्कित कर जनताको सहसा आकर्षित और आश्चर्य विमुग्ध कर दिया था। इसी प्रकार सिनेमा घरोंमें चलित चित्रकी सहायता से "डालडा बनस्पति और उसके अस्तित्वके सम्बन्ध में अथवा फ्रेन्च मोटर कम्पनी" आदिके विज्ञापन विचित्र रीतिसे प्रदर्शित किये जाते हैं। और दर्शकों पर उनका जीवित तथा स्थायी प्रभाव पड़ता है। इस प्रकार विज्ञापनके कितने ही विभिन्न उपाय हमारे देशमें नित्य प्रचार पा रहे हैं—यह ऊपरके कुछ उदाहरणों पर से स्पष्ट है। इसके साथ २ यह भी प्रकट है कि विज्ञापनकी उद्देश्य सिद्धिके लिये जिन सब विषयों पर दृष्टि रखना आवश्यक है वे सब ही मनः शक्तिसे सम्बन्धित हैं। मनस्तत्त्वविदोंके मतानुसार विज्ञापनकी प्रणालीमें वह अचूक प्रभाव होना आवश्यक है कि जिससे वस्तु विशेषके सम्बन्धमें जनसाधारणकी मनोवृत्ति स्वतः विश्वासके लिये बाध्य हो जाए, विज्ञापित वस्तुको पानेके लिये उनमें तीव्र इच्छा जागरुक हो उठे। मानवके मनोराज्यकी

समस्त बाधाओंका अतिक्रमण कर, कौतूहल उत्पन्न कर, विज्ञापित वस्तुको प्राप्त करनेकी वासना जागृति करा देना ही विज्ञापनके उद्देश्यकी सिद्धिका मुख्य आधार होता है।

मनोविद् लोगोंने विज्ञापनके सम्बन्धमें अब तक नाना गवेषणाओं द्वारा कई तथ्य सूत्र ढूंढ़कर निकाले हैं। जिनके सम्पूर्ण विवेचनके लिये यह लेख ही यथेष्ट नहीं कहा जा सकता। ऐसे कई लेख लिखे जाने पर उस सम्पूर्ण विवेचनका सारांश सम्भव है पाठकों तक पहुँचाया जा सके। क्योंकि जिस विज्ञापन-कला की शिक्षाके लिये विदेशमें महाविद्यालय सदृश विशाल शिक्षा केन्द्र स्थापित हों, वह विषय दो एक लेख द्वारा साङ्गोपाङ्ग रीतिसे समझाया नहीं जा सकता। इसके लिये नियमित अध्ययन और शिक्षा आवश्यक है। यहां हमने देशके विज्ञापनदाताओंकी कुछेक सूझोंका परिचय दिया है, जो अनेक क्षेत्रोंमें विज्ञापन-कलाके नाम पर मिथ्या प्रचारका कारण ठहरती हैं। ऐसे विज्ञापकोंको जानना आवश्यक है कि मनोवैज्ञानिक तथ्य के ऊपर भित्ति स्थापित किये बिना, विज्ञापन द्वारा उनकी अभिलाषा पूर्त्ति होना असम्भव है। पाश्चात्य देशोंमें विशेषकर अमेरिका विज्ञापन-कलाकी उन्नत्तिमें अग्रगण्य माना गया है। यहांके प्रचार कार्यकी पद्धति एकदम अद्भुत और अनूठी है। विज्ञापनके मार्ग पर हम यहांके आदर्शको अपने लिये चुन सकते हैं। परन्तु, यह स्मरण रखना आवश्यक है कि हमारे देशके आर्थिक, नैतिक, सामाजिक और राजनैतिक शिक्षाके विकास आदिकी अवस्था अन्य देशोंसे सवथा भिन्न है। अतएव पाश्चात्य प्रणालीकी उपयुक्त दृष्टि सामने रखते हुये, आवश्यकतानुसार परिवर्तित रूपसे ग्रहण न किया गया तो उससे लाभ के बदले हानिकी ही अधिक सम्भावना रहेगी। इस प्रकार देशके विज्ञापकोंके समक्ष विज्ञापनके सुधार और सफलताके लिये दो महत्त्वके मार्ग खुले हुये हैं। पहिला यह कि विज्ञापन प्रणालीमें विदेशियोंका अन्धानुकरण न करें और दूसरा यह कि अपने प्रत्येक विज्ञापनको मनोविज्ञान सम्मत प्रणाली पर चलाएं। इन दो तथ्य-सूत्रोंको साथमें लेनेसे ही विज्ञापनके उद्देश्यकी सफलता सहज हो उठेगी और इससे देशका भी कुछ कम कल्याण नहीं होगा।

पीपल

[ले०—श्री डा० सुधाकर जी त्रिवेदी "द्विजराज" M.B.H.]

हमारे धर्मशास्त्रमें पीपलकी महिमा बहुत बढ़ा-चढ़ाकर लिखी है। यहां तक कि पीपलको सभी वृक्षोंसे श्रेष्ठ बतलाया है। गीतामें श्रीकृष्ण भगवान्‌ने भी अपने श्रीमुखसे कहा है कि "वृक्षाणामश्वत्थोऽहम्" अर्थात् वृक्षोंमें पीपल मैं हूँ। धर्मशास्त्र पीपल वृक्षको घरमेंसे उखड़वाना पाप बतलाता है। अब हमें यह देखना है कि विज्ञानकी दृष्टिसे पीपल कुछ महत्त्व रखता है या नहीं। स्त्रियोंका पीपल-सींचना पोप-लीला नहीं प्रत्युत स्त्रियोंको गर्भाधानमें सहायता देता है। हमारे धार्मिक कृत्य विज्ञान पूर्ण हैं, भले ही अप-टूडेट अंग्रेजीदान न मानें। पीपल सब वृक्षोंमें उत्तम इस लिये माना है कि उसकी छाया भी स्वास्थ्य वर्द्धनीय है। प्रस्तुत लेखमें पीपलकी वैज्ञानिकता एवं उपयोगिता पर विचार किया गया है।

धर्मशास्त्रमें स्त्रियोंके लिए पीपलको सींचने, उसकी परिक्रमा करने, उसके नीचे बैठकर धार्मिक व्याख्यानोंकी चर्चा तथा पीपलकी अर्चाका जो विधान है—वह केवल ढकोसला ही नहीं प्रत्युत वैज्ञानिक है। पीपलमें सन्तानोत्पत्तिकी प्रबल शक्ति है। यहां तक कि बन्ध्या स्त्रीको भी सन्तानका दर्शन हो सकता

है। जब वैसाख ज्येष्ठ मासमें पीपल वृक्षमें (पीपली) फल लगता है। तब गौरैया पक्षी (चिड़े) उन फलोंको खूब खाते हैं। पीपलके फलोंमें रासायनिक शक्ति वर्तमान रहती है, इस लिए उनका चूर्ण आयुर्वेदमें पौष्टिक बतलाया है। पीपलकी जटामें वन्ध्यारोग (Sterility) को नाश करनेका विशेष गुण है, किन्तु विरले पीपलोंमें ही जटा पायी जाती है। अब हम पाठकोंकी सेवामें ५ प्रयोग ऐसे बतलाते हैं कि उन प्रयोगोंकी परीक्षा करने पर उन्हें पीपलके प्रति बड़ी श्रद्धा उत्पन्न हो जायेगी।

(१) यदि बालतोड़ फोड़ा बड़ा कष्ट देता हो, लहर मारती हो, जलन भी होती हो तो पीपलके कोमल पत्तों (कोपलों) को लाकर घीसे चुपड़कर आगपर तपा तपाकर बांधनेसे सुपारी सरीखी कड़ी गांठ भी मोमके समान नरम हो जाती है।

(२) पीपलकी लकड़ी का प्याला या कठौती बनवा कर केवल एक मास तक प्रतिदिन उसमें दूध भरकर पीनेसे बिना पौष्टिक औषधि खाये ही काया पलट जाती है। गन्धक या कपूरका कटोरा जो गुण रखता है वह गुण इस निःशुल्क प्राप्य कटोरेसे मिल जाता है। सम्पन्न श्रीमान् लोगोंको चाहे इसकी सत्यता पर विश्वास न हो किन्तु निर्धनोंको तो अवश्य परीक्षा करनी चाहिये।

(३) पीपलकी छालको जलाकर एक हांडीमें रखकर पानीमें घोल दें। जब पानी निथर जाय तब उस पानीको छानकर दूसरी हांडीमें रख लें। जिसे दाह या प्यासकी प्रबलता हो उसे थोड़ा थोड़ा पानी पिलानेसे शान्ति मिलती है। जिसे कै होती हो, उसे भी यही पानी पिलाना चाहिये। यही नहीं इस पानीसे कपड़े भी भली-भान्ति स्वच्छ हो जाते हैं। गर्भवती स्त्रियोंकी कै भी इस पानीसे रुक सकती है।

(४) उकवत Eczema) आदि अविकघावोंका पानी सुखानेके लिये यद्यपि झड़बेरीके मूलत्वक्‌का चूर्ण (रांगजड़) उपयोगी हो सकता है। किन्तु वह दुष्प्राप्य है। यदि पीपलकी छालका चूर्ण बनाकर रख लिया जाय और मक्खन या वैसलीनमें मिलाकर लगाया जाये तो आइडोफार्मसे सौगुणा उपयोगी होगा। आग से जले हुए घावोंसे पानी चूता हो तो इसे लगानेसे पानी शीघ्र ही सूख जाता है।

(५) पीपलकी फुनगियां (अंकुरों)का अवलेह बनाकर सेवन करनेसे स्वर्ण-भस्मसे जितना लाभ होता है पीपलके सूखे फलोंका चूर्ण इसके सामने तुच्छ है। पीपलकी लाख हीसे आयुर्वेदका सुप्रसिद्ध "लाक्षादि तैल" बनता है, इस तैलसे विषम-ज्वर टूट जाता है और बच्चे मोटे ताजे हो जाते हैं।

भारतीय भैषज्य-विज्ञानके चमत्कार

[लेखक — एक अनुभवी वैद्य]

सूखते हुए बच्चोंके लिए

दो तीन बंगला पान लेकर भली-भांति कत्था-चूना लगाकर कंघी-बूटीके दो-तीन पत्तोंके साथ मुखमें रखकर चबाएं और थूक बच्चेकी पीठ पर (रीढ़ हड्डी पर) गिरायें और हाथसे धीरे २ मलो। कुछ समयके पश्चात् छोटे २ कृमि बाहर निकलेंगे, उनको चुनकर फेंक दीजिये। फिर पुनः थूक गिराइये और कृमि चुन दीजिये। तीन चार दिन तक ऐसा करनेसे सूखता हुआ बच्चा ठीक हो जाता है और मोटा-ताजा होने लगता है। हमने महात्माओंका यह अमूल्य प्रयोगरूपी अपना हृदय निकालकर यहां लिख दिया है। भगवान्‌का नाम लेकर प्रयोग कीजिए और अद्भुत चमत्कार देखिये।

प्राप्ति करानेवाले थोथे कर्मोंका जंजाल नहीं मानते। उन्होंने अपने ध्यानसे धर्मकी एक नई परिभाषा, एक नये स्वरूपका अनुभव किया—

नमो धर्माय महते धर्मो धारयति प्रजाः।
(उद्योग० १३७। ६)

व्यक्तिको, राष्ट्रको, जीवनको, संस्थाओंको, लोक और परलोक—सबको धारण करने वाले जो शाश्वत सर्वोपरि नियम हैं वे धर्म हैं—

धारणाद्धर्म इत्याहुर्धर्मो धारयते प्रजाः।
यस्याद्धारण संयुक्तः स धर्म इत्युदाहृतः॥

धर्म स्वर्गसे भी महान् है। लोकस्थितिका सनातन बीज धर्म है। इस दृष्टिसे देखने पर धर्म गंगाके ओजस्वी प्रवाहकी भांति जीवनके सुविस्तृत क्षेत्रको सिञ्चित और पवित्र करनेवाला अमृत बन जाता है। राजाओंकी जय और पराजय आने-जाने वाली वस्तु हैं, जीवनमें सुख और दुःख भी सदा एकसे नहीं रहते, पर सम्पति और विपत्तिमें भी जो वस्तु एकसी बनी रहती है वह धर्म है। व्यास ने महाभारत संहिता लिखनेके बाद उसके अन्तमें अपने दृष्टिकोण और उद्देश्यका निचोड़ चार श्लोकोंमें दिया है, जिसे भारतसावित्री कहते हैं। उसका अंतिम श्लोक यह है—

न जातु कामान्न भयान्न लोभाद्
धर्मं त्यजेज्जीवितस्यापि हेतोः।
नित्यो धर्मः सुख दुःखे त्वनित्ये
जीवो नित्यो हेतुरस्य त्वनित्यः॥

अर्थात् कामसे, भयसे, लोभसे, यहां तक कि प्राणोंके लिए भी धर्मको छोड़ना ठीक नहीं। क्योंकि धर्म नित्य है, सुख और दुःख क्षणिक हैं। इसी प्रकार जीव भी नित्य है, जन्म और मृत्यु अनित्य हैं। 'मैं भुजा उठाकर कह रहा हूं, पर कोई मेरी बात सुननेवाला ही नहीं है। धर्मसे ही धन और काम मिलते हैं, उस धर्मका आश्रय क्यों नहीं लेते।' ये भारत-सावित्रीमें व्यासके साक्षात् वचन हैं।

यदि धर्म जीवनको धारण करनेवाला है और धर्म अच्छी वस्तु है तो जीवन भी मूल्यवान् होना चाहिए। व्यासके धर्ममें जीवन रोने-धोने या माया समझकर खोनेकी वस्तु नहीं। उनकी दृष्टिमें यह लोक कर्मभूमि है, परलोक फलभूमि होगा। देवदूतने मुद्गलसे कहा—

कर्मभूमिरियं ब्रह्मन् फलभूमिरसौ मता।
(वन० २६१। ३५)

वनमें पाण्डवोंके पास जाकर स्वयं व्यासने यह मत रक्खा था। वे इस लोकमें कर्मवादको मानते हैं। उसके साथ दैववादको मानते हैं और दोनोंके ऊपर अध्यात्म ब्रह्म या आत्मतत्त्वमें विश्वास रखते हैं। उन्होंने जो दार्शनिक मत रक्खा उसमें मनुष्य सबके केन्द्रमें है। व्यासका यह श्लोक स्वर्णके अक्षरोंमें टांकने योग्य है—

गुह्यं ब्रह्म तदिदं ब्रवीमि
नहि मानुषात् श्रेष्ठतरं हिं किञ्चित्।
(शान्ति० १८०। १२)

अर्थात्, यह रहस्य-ज्ञान तुमको बताता हूँ—मनुष्यसे श्रेष्ठ अन्य कुछ नहीं है। व्यासका यह मानव-केन्द्रिक (man as the centre of universe) मत हमारे अर्वाचीन ज्ञान-विज्ञान और सामाजिक अध्ययनमें सर्वत्र व्याप्त होता जा रहा है।

व्यासकी परिभाषाके अनुसार कर्म मनुष्यकी विशेषता है—

प्रकाशलक्षणा देवा मनुष्याः कर्मलक्षणाः।
(अश्व० ४३। २०)

कर्म करनेसे जो प्रकाश जीवनमें आता है उसीसे मनुष्य देव बन जाता है। आत्माभिमानके साथ मनुष्य-शरीर रखनेसे ही सारे लाभ प्राप्त होते हैं।

पाणिवाद

व्यासने मानवी पुरुषार्थकी श्रेष्ठताका प्रतिपादन करते हुए इन्द्रके मुखसे पाणिवादका व्याख्यान कराया।

है। जिनके पास हाथ हैं वे क्या नहीं कर सकते? जिनके हाथ हैं वे ही सिद्धार्थ हैं। जिनके हाथ हैं उनकी मैं सबसे अधिक सराहना करता हूं। जैसे तुम धन चाहा करते हो, वैसे मैं तो पांच अंगुलियोंवाले हाथ चाहाता हूँ। पाणिलाभसे बढ़कर और कोई लाभ नहीं है। ❀ जैसा कर्म किया जाता है वैसा ही लाभ मिलता है, यही शास्त्रका निचोड़ है—

यथा कर्म तथा लाभ इति शास्त्रनिदर्शनम्।
(शान्ति० २७६। २०)

किन्तु धनागम धर्मसे होना चाहिए। व्यासजी के मनमें धर्मका जो ऊंचा स्थान है उसके अनुसार न केवल अर्थ वरन् काम और मोक्ष भी धर्म पर आश्रित हैं और यह राज्य भी धर्ममूलक है—

त्रिवर्गोऽयं धर्ममूलं नरेन्द्र! राज्यञ्चेदं धर्ममूलं वदन्ति।
(वन० ४,४)

व्यासकी दृष्टिमें लोक-संग्रह और लोक-धर्म बहुत मूल्यवान् पदार्थ हैं। आजगर मुनिको 'लोकधर्मविधानवित्' अर्थात् लोक-धर्मके सिद्धान्त और संगठनका वेत्ता (शा० १७६।६) कहा गया है। जो व्यक्ति लोकपक्षका इतना समर्थक हो, उसे गृहस्थधर्मका प्रशंसक होना ही चाहिये। व्यासके अनुसार धर्मके द्वारा प्रवृत्त गृहस्थ आश्रम सब आश्रमोंमें तेजस्वी मार्ग है, वह पवित्र धर्म है जिसकी उपासना करनी चाहिए। +

व्यास और अध्यात्म

लोक, गार्हस्थ्य और मनुष्यके लिए जिस महापुरुषके मनमें श्रद्धा है, जिसका दृष्टिकोण इन विषयों में इतना मंजा हुआ है; उसका अध्यात्मशास्त्र भी तदनुकूल ही मानवको साथ लेकर चलता है। मनुष्य पंचेन्द्रियोंसे युक्त प्राणी है। इन्द्रियां ही मानवको देव या असुर बना देती हैं। व्यासके अध्यात्मशास्त्र का सार इन्द्रियनिग्रह है—

आत्मनस्तु क्रियोपायो नान्यत्रेन्द्रियनिग्रहात्।
(उद्योग० ६६।१७)

इन्द्रियोंको रोकनेके सिवाय आत्माकी उन्नतिका दूसरा उपाय नहीं है। विषयोंकी ओर जाती हुई इन्द्रियोंको वशमें रखनेसे अध्यात्माग्नि प्रकाशित हो उठती है। जिस प्रकार इन्धनके जलनेसे अग्नि चमक उठती है, उसी प्रकार इन्द्रियनिरोधसे महात्मा प्रकाशित होता है। डसनेके भावसे सर्प जाने जाते हैं, दम्भभावसे असुर, दानभावसे देव और दमभावसे महर्षि पहचाने जाते हैं (अश्व० आ०२१)। वेदज्ञानका रहस्य सत्य भाषणमें है, सत्यका उपनिषद् इन्द्रियदमन है, और दमका फल मोक्ष है—

वेदस्योपनिषत्सत्यं सत्यस्योपनिषद्दमः।
दमस्योपनिषन्मोक्ष एतत्सर्वानुशासनम्॥
(शा० २६६।१३)

आत्मनिरोधके द्वारा जो व्यक्ति जीवनमें अपना मार्ग विषयोंसे भरे हुए जंगलमें स्वयं निश्चित करता है, वह अपना ज्ञान औरों पर नहीं बघारता, बल्कि अपने आचारसे औरोंको उपदेश देता है। बोध्य ऋषिकी कही हुई पुरातन गाथाओंको उद्धृत करके व्यासने यही कहा है—

उपदेशेन वर्तामि नानुशास्मीह कंचन। (शा० १७८।६)

मैं अपनी 'करनी'से सिखाता हूँ, 'कथनी'से नहीं वेदव्यास जीवनमें ऋजुभावके माननेवाले हैं। ऋजुभावकी उपासना ब्रह्मपदकी प्राप्ति है, कुटिलता मृत्युका पद है। इतना ही ज्ञानका सार है, और सब भूठी बकवाद है। ★

❀अहो सिद्धार्थता तेषां येषां सन्तीह पाणयः।
अतीव स्पृहये तेषां येषां सन्तीह पाणयः॥
पाणिमद्भ्यः स्पृहाऽस्माकं यथा तव धनस्य वै।
न पाणिलाभादधिको लाभः कश्चन विद्यते॥
(शान्तिपर्व १८०। ११-१२)

+ सर्वाश्रमपदेऽप्याहुर्गार्हस्थ्यं दीप्तनिर्णयम्।
पावनं पुरुषव्याघ्र यं धर्मं पर्युपासते॥ (शा० ६६।३५)

★ सर्वं जिह्मं मृत्युपदमार्जवं ब्रह्मणः पदम्।
एतावान् ज्ञानविषयः किं प्रलापः करिष्यति॥ (आश्व०११४)

विपुलांसो महाबाहु कंबुग्रीवः शुभाननः ।
गूढ़जत्रुः सुताम्राक्षो रामो देवि जनैः श्रुतः ॥

रामके लिये 'ताम्राक्ष' लिखा है और जगद्देव कहते हैं:— "रक्ताक्षं भजति श्रीः"। लाल नेत्रवाला द्रव्यवान् होता है। रामको द्रव्यकी क्या कमी थी, और द्रव्य यदि रुपये पैसे अथवा सोने चांदीको न मान कर विद्या या ज्ञानको माने तो उसकी भी क्या कमी थी। लोग विद्याको विद्याधन कहते ही हैं, वास्तव में सभी अच्छी वस्तुएं धन या द्रव्य हैं और वे सभी द्रव्योंसे युक्त थे। इस प्रकार हम देखते हैं कि सामुद्रिक शास्त्रके अनुसार उनके अङ्गोंके लक्षण मिलते हैं। वे गुण जो उनके अङ्ग प्रदर्शित करते हैं राममें पाये जाते हैं।

ये आंखें इसी प्रकार अनेक बातें प्रकट करती हैं। डाक्टरों, वैद्यों, हकीमोंको भी व्याधिके निर्णयमें ये बड़ी सहायता पहुँचाती हैं, हृदावरणशोथ, हृदय विकृति न्यूमोनिया आदि मारक रोगोंमें भावी विपत्ति का बोध कराती हैं और धतूरा, अफीम,, संखिया आदि विषके प्रकोपको भी स्पष्ट प्रकट कर देती हैं। इसी प्रकार—

(१) **वायु** प्रकोपसे आंखें टेढ़ी, रूखी, धूम्रवर्ण, दाहयुक्त और चंचल हो जाती हैं।

(२) **पित्त** प्रकोपसे पीली, ताम्रवर्ण, दाहयुक्त और चंचलवृत्ति (रोशनी देखनेमें असमर्थ) होती हैं।

(३) **कफ** दोषसे निस्तेज, चिकनी, स्रावयुक्त और स्थिर दृष्टि दिखती हैं।

(४) **सन्निपातमें** काली या लाल रंगकी बैठी हुई तन्द्रायुक्त प्रतीत होती हैं।

(५) **न्यूमोनिया** की अरिष्टावस्थामें आंखें लाल और खुली रहती हैं।

(६) **निर्बलता** (जीर्णज्वरके पश्चात्) और पाण्डु-रोगमें आंखें निस्तेज हो जाती हैं और उनकी अधो पलकके भीतर देखनेसे रक्तकी कमीका स्पष्ट बोध हो जाता है।

(७) **हेजेमें** आंखें खड्डेमें गिरीहुई सी दिखती हैं और किंचित् लाल हो जाती हैं।

(८) **अफीमके विषसे** आंखोंकी पुतली अत्यन्त संकुचित हो जाती है और अन्तिम अवस्थामें खूब फैल जाती हैं।

(९) **धतूरेके विषसे** भी पुतलियां चौड़ी हो जाती हैं।

(१०) **सर्वाङ्गवातमें** पुतली प्रकाशमें नहीं सिकुड़ती, किन्तु समीपकी चीज देखनेमें सिकुड़ जाती हैं।

(११) **आंखोंका लाल होना** मस्तिष्कमें रक्त वृद्धि होना, सूर्यके तापमें फिरना, आंखोंमें धुंआ लगना, पित्त प्राधान्य ज्वर, तमाल पत्र, गांजा या चरस पीने, आंखोंमें जल या जन्तु घुसजाने, वमन होने और दिनमें शयन आदि कारणोंसे आंखें लाल हो जाती हैं

(१२) **गर्भपातके पश्चात्** अनेक स्त्रियोंकी पलकोंके नीचे बाजरीके समान दाने हो जाते हैं।

(१३) **राजयक्ष्मा** बढ़जाने पर आंखें निस्तेज, मैली श्वेत हो जाती हैं, भृकुटीकी आकृति गोल हो जाती है अथवा गोलाई कम हो जाती है और ग्रीवा लम्बी हो जाती है।

(१४) **उपदंश और सुजाक** रोगके बाद कई व्यक्तियोंके नेत्रमें व्रण हो जाते हैं और पुतलियोंमें सूक्ष्मरेखाएं हो जाती हैं।

(१५) **मरणासन्न अवस्थामें** आंखें खड्डेमें घुसी-सी और स्थिरसी दिखती हैं। पलकें खुली हुई, गाल बैठे हुए और मुंह डरावना प्रतीत होता है।

(शेष आगामी अङ्कमें)

महर्षि व्यास

[लेखक—श्री० डा० वासुदेवशरण जी अग्रवाल, एम० ए०, एल-एल० बी०]

व्यास भारतीय ज्ञान-गंगाके भगीरथ हैं। जिस प्रकार इस देवनिर्मित देशको किसी पुरायुगमें भगीरथने अपने उग्र तपसे गंगावतरणके द्वारा पवित्र किया था, उसी प्रकार पुराण मुनि वेद-व्यासने भारतीय लोक-साहित्यके आदि युगमें हिमालयके बदरिकाश्रममें अखंड समाधि लगाकर अध्यात्म, धर्मनीति और पुराणकी त्रिपथगा गङ्गाको पहले अपनी आत्मामें साक्षात्कार किया और फिर साहित्यिक साधनाके द्वारा देशके आर्यवाङ्मयको उससे पवित्र बनाया। ज्ञानरूपी हिमवान्के उच्च शिखरोंपर बहनेवाले दिव्य जलोंको मानो वेद-व्यास भूतलपर ले आये। उन्होंने लोक-साहित्यको वेगकी प्रेरणा दी। उनके द्वारा पूर्वजोंके ज्ञान और चरित्रोंसे गुम्फित सरस्वती लोकके कंठमें आ विराजी।

जिसप्रकार भारतवर्षकी प्राकृतिक सम्पदाका अपरिमित विस्तार है, उसी प्रकार कालक्रमसे वेदव्यासकी साहित्यिक सृष्टि भी लोकके देश-व्यापी जीवनमें अनन्त बनकर समा गई है। एक प्रकारसे सारे राष्ट्रका जीवन ही आज व्यास रूपी महान् वटवृक्षकी छायाके आश्रयमें आ गया है। व्यास भारतवर्षीय ज्ञानके सर्वोत्तम प्रतिनिधि बन गये हैं। यदि भारतीय ज्ञानकी उपमा एक ऐसे रत्नसे दी जाय जिसकी चमकके सहस्रों पहलू हों, तो व्यासकी शत-साहस्री संहिता पूरी तरहसे उस महार्घ मणिका स्थान ले सकती है। जैसे भगवान् समुद्र और हिमवान गिरि दोनों रत्नोंकी खान हैं, वैसे ही भारत भी रत्नोंसे सम्पूर्ण है।* व्यासकी प्रतिभाकी स्तुतिमें इससे अधिक और क्या कहा जा सकता था—

धर्मे चार्थे च कामे च मोक्षे च भरतर्षभ।
यदिहास्ति तदन्यत्र यन्नेहास्ति न तत्क्वचित्॥
(आदिपर्व ५६।३३)

अर्थात् धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष नामक जीवनके चार पुरुषार्थोंसे सम्बन्ध रखनेवाला जो कुछ ज्ञान भारतमें है, वही अन्यत्र है; जो यहां नहीं है वह कहीं और भी न मिलेगा।

जीवन-चरित

पुराविदोंके प्रयत्न करने पर भी व्यास हमारे ऐतिहासिक तिथिक्रमके पाशमें पूरी तरह नहीं बांधे जा सके। विक्रमसे तीस शताब्दी पूर्वसे लेकर पन्द्रह शताब्दी पूर्व तकके किसी युगमें हमारे व्यासका उदय हुआ। पुराणोंके अनुसार ब्रह्मासे लेकर कृष्ण-द्वैपायन तक अट्ठाईस व्यासोंकी परम्परा मिलती है। ये मुख्यतः पुराणोंके प्रवचनकर्त्ता रहे होंगे। पर जब तक सब पुराणोंके सुसमीक्षित संस्करण तैयार न हो जांय तब तक इस अनुश्रुतिका पूरा मूल्य नहीं आंका जा सकता। हां 'जय' नामक उत्तम इतिहासके रचनेवाले अमितौजा महामुनि व्यास, जिनका नाम अट्ठाईस व्यासोंके अन्तमें आता है, अवश्य ही हमारे चिरपरिचित वे पुराण मुनि हैं जो कुरु-पाण्डव युगमें इस पृथिवी पर बदरिकाश्रम और हस्तिनापुरके बीचमें आते जाते थे। हिमालयके रम्य शिखरपर जहां नर-नारायण नामक दो पर्वत हैं, वहां भागीरथीके समीप विशाला-बदरी नामक स्थानमें व्यासने अपना आश्रम बनाया था। आज भी बदरीनारायणके इस प्रदेशके दर्शनके लिये प्रति वर्ष सहस्रों यात्री जाते हैं। विशाला-बदरीके समीप ही आकाशगङ्गा है, जहां व्यासका चंक्रमण (घूमने का) स्थान था।

* यथा समुद्रो भगवान्यथा हिमवान् गिरिः।
ख्यातावुभौ रत्ननिधी तथा भारतमुच्यते॥
(आदिपर्व ५६।२७, सुकठणकर संस्करण)

यह स्थान हरद्वारसे लगभग एक मासकी पैदल यात्रा के बाद आता था। उसी हिमवत् पृष्ठ पर व्यासका आश्रम था, जिसके कण-कणमें दिव्य-तपकी भावना ओत-प्रोत थी। वहां व्यासने चार प्रमुख शिष्योंको वैदिक संहिताओंका अध्ययन कराया। पैलने ऋग्वेद, वैशम्पायनने यजुर्वेद, जैमिनिने सामवेद और सुमन्तुने अथर्ववेदकी संहिताओंका पारायण किया। कहा जाता है कि व्यासने स्वयं अत्यधिक परिश्रमसे समस्त वैदिक मन्त्रोंका वर्गीकरण करके चार संहिताओंका विभाग किया, और इस साहित्यिक साधना के कारण ही उनका नाम वेद-व्यास प्रसिद्ध हुआ।* इसी आश्रममें कुरु-पाण्डवोंके युद्धकी समाप्ति पर व्यासजीने तीन वर्षके संतत उत्थानके बाद महाभारत नामक श्रेष्ठ काव्यात्मक इतिहासकी रचना की—

त्रिभिर्वर्षैः सदोत्थायी कृष्णद्वैपायनो मुनिः।
महाभारतमाख्यानं कृतवानिदमुत्तमम्॥
(आदिपर्व ५६।३२)

यह महाभारत पांचवां वेद कहलाता है और इसे व्यासने अपने पांचवें शिष्य रोमहर्षणको पढ़ाया था, इसका एक नाम कार्ष्णवेद भी है। वस्तुतः व्यास का जन्म-नाम कृष्ण था। महाभारतकी राजनीतिके युगमें दो कृष्ण प्रसिद्ध हुये, एक वासुदेव कृष्ण और दूसरे द्वैपायन कृष्ण। यमुना नदीके एक द्वीपमें जन्म होनेके कारण ये द्वैपायन कहलाये। चेदि-देशके राजा वसु उपरिचरके वीर्यसे हस्तिनापुरके पास, जहां एक टापू था, सत्यवतीका जन्म हुआ। जन्मकाल से ही यमुनातीर-वासी दाशराजने उसका पालन-पोषण किया था। सत्यवती नामक यह कन्या यमुना के पार नाव चलाती हुई प्रथम यौवनके समय योगी पाराशर मुनिके संयोगसे व्यासकी माता बनी। इसी सत्यवतीके साथ आगे चलकर राजा शान्तनुने विवाह किया। व्यासकी माता सत्यवती गङ्गापुत्र भीष्मकी सौतेली मां थी, अतएव व्यास और पितामह भीष्म का सम्बन्ध अत्यन्त निकटका था। सत्यवतीके पुत्र विचित्रवीर्य निस्सन्तान ही मृत्युको प्राप्त हुए। उनके बाद जब कुरुकुल अनपत्यताके कारण डूबने लगा, तब अपनी माता सत्यवतीके कहनेको मानकर व्यासने विचित्रवीर्यकी स्त्रियोंसे धृतराष्ट्र और पाण्डु नामक दो पुत्रोंको उत्पन्न किया। इसी अवसर पर एक दासी से विदुर उत्पन्न हुये आम्बिकेय धृतराष्ट्रके पुत्र दुर्योधनादि कौरव और कौशल्यानन्दन पाण्डुके पुत्र युधिष्ठरादि पांच पांडव हुए। व्यासजी ही इस वंशके बीज वपन करने वाले थे। अतएव जन्म-पर्यन्त हस्तिनापुरके राजनीतिक उतार-चढ़ावके साथ उनका घनिष्ठ सम्बन्ध बना रहा। पुत्रोंके जन्मके बाद व्यास ने हस्तिनापुरके पास सरस्वती नदीके किनारे भी एक आश्रम बना लिया था। वहांसे वे हस्तिनापुर आते रहते थे। जिस समय पाण्डुकी मृत्युके बाद पाण्डव हस्तिनापुर आये और पाण्डुका दाह-संस्कार हुआ, उस समय व्यास वहां विद्यमान थे। व्यासने माता सत्यवतीको सम्मति दी कि अब तुम हस्तिनापुर छोड़कर वनमें जाकर योगमें चित्त लगाओ। कौरव-पाण्डवोंकी अस्त्र-परीक्षाके समय भी व्यास हस्तिापुर में थे। उन्होंने वनवासके समय एकचक्रा नगरीमें पाण्डवोंसे भेंट करके उन्हें द्रौपदीके स्वयंबरमें सम्मिलित होनेकी सम्मति दी। व्यासजीका अमोघमंत्र गाढ़े समयमें सदा पाण्डवोंके साथ रहा। व्याहके पश्चात् जब पांडवोंको राज्य मिला तब भी राजसूय यज्ञकी सूझ व्यासजीसे ही उनको प्राप्त हुई। इस यज्ञमें आपसी डाहके ऐसे बानक बने जिनसे आगे युद्ध अवश्यम्भावी जंचने लगा। व्यासजी युधिष्ठिर को क्षत्रियोंके भावी विनाशकी सूचना देकर स्वयं कैलाश पर्वतकी यात्राको चले गये।** इधर पाण्डवों ने जुएमें हारकर फिर वनका मार्ग लिया। व्यासजी

* यो व्यस्य वेदांश्चतुरस्तपसा भगवानृषिः।
लोके व्यासत्वमापेदे कार्ष्ण्यात्कृष्णत्वमेव च॥
(आदिपर्व ६६।१५)

** स्वस्ति तेऽस्तु गमिष्यामि कैलासं पर्वतं प्रति।
अप्रमत्तः स्थितो दान्तः पृथिवीं परिपालय॥
(सभापर्व ४६।१७)

को जब यह समाचार ज्ञात हुआ तब उन्होंने आकर धृतराष्ट्रको समझाया कि पाण्डवोंके साथ न्याय करें, और स्वयं द्वैतवनमें जाकर पाण्डवोंसे मिलें। वहां उन्होंने युधिष्ठिरको प्रतिस्मृति नामक सिद्ध विद्या दी और उन्हें दूसरी जगह जाकर रहनेकी सम्मति दी। पांडव द्वैतवनको छोड़कर सरस्वतीके किनारे काम्यकवनमें रहने लगे। उनके बनवासके बारह वर्ष समाप्त हो रहे थे। व्यासजी फिर उनके पास पहुँचे और युधिष्ठिरको नीतिमार्ग और आत्मसंयमके धर्मका उपदेश देकर अपने आश्रमको चले गये। तेरहवें वर्षके बाद जब युधिष्ठिरने अपना राज्य वापस मांगा तब व्यासने फिर धृतराष्ट्रको समझाया। परन्तु कालके सामने बूढ़े और अन्धे राजा धृतराष्ट्र तथा मनीषी वेद-व्यासका एक भी उपाय सफल न हुआ। व्यास अपने ज्ञान-चक्षुसे कालकी महिमाको जानते थे। कालकी दुर्धर्ष सत्तामें विश्वास उनके दर्शनका अभिन्न अङ्ग था जिसे उन्होंने कई जगह महाभारतमें प्रकट किया है—

कालमूलमिदं सर्वं जगद्बीजं धनञ्जय !
काल एव समादत्ते पुनरेव यदृच्छया।
स एव बलवान् भूत्वा पुनर्भवति दुर्बल ॥
(मौसल पर्व ८।३३।३४)

काल सबकी जड़ है, काल संसारके उत्थानका बीज है। काल ही अपने वशमें करके उसे हड़प लेता है। कभी काल बली रहता है, कभी वही निर्बल हो जाता है। समन्तपञ्चकके सर्व क्षत्रियोंका क्षय करनेवाले युद्धको अपनी आंखोंसे देख कर वेद-व्यासने कालकी महिमाके ध्यानसे ही अपने चित्तको धैर्य दिया। जिस समय कुरुक्षेत्रमें दोनों ओरसे भारतीय सेनाएं आ डटीं तब भी व्यासजीने धृतराष्ट्रको समझा कर युद्ध रोकना चाहा। पर उनकी एक न चली। युद्धके दिनोंमें भी वह जब तब अपने मन्त्रसे स्थितिको संभालते रहे और युद्धके अन्तमें शोकमना धृतराष्ट्रको और युधिष्ठिरको समझा-बुझा कर धैर्य बंधाया। युधिष्ठिरको राज्यके लिए प्रस्तुत करके नीति, धर्म और अध्यात्मकी शिक्षाके लिए भीष्मके पास भेजा और अश्वमेध करनेकी प्रेरणा की। युद्धके सोलह वर्ष बाद वह धृतराष्ट्रसे फिर हिमालयमें जाकर मिले और तप करनेकी सलाह देकर अपने आश्रमको चले गये। जब सरस्वती नदीके तीर पर बसने वाले आभीरगणों (हरियानेके दस्युओं) ने वृष्णिवंशकी स्त्रियोंको अर्जुनके देखते-देखते लूट लिया, तब शोक अपमानसे भग्न-हृदय अर्जुन अन्तिम बार व्यासके दर्शनको गये। व्यासने उन्हें कालचक्रके उत्थान और पतनका उपदेश देकर बिदा किया। घटनाओंके झंझावातमें भी क्षोभरहित स्थितिके प्रतीक वेद-व्यास हैं।

ग्रन्थ-परिचय

व्यासको वेदान्तसूत्रोंका कर्ता भी माना जाता है। वेदान्तसूत्रोंका नाम भिक्षुसूत्र भी है। पाणिनिकी अष्टाध्यायीसे विदित होता है कि भिक्षुसूत्रके रचयिता पाराशर्य थे। पाराशरके पुत्र होनेके कारण व्यासका ही एक नाम पाराशर्य था। बदरी आश्रममें रहनेके कारण व्यासका दूसरा नाम बादरायण मुनि भी था और इसी कारण कभी-कभी वेदान्तसूत्रोंको बादरायणसूत्र भी कहते हैं। पाणिनिके शास्त्र में जो ऐतिहासिक सामग्री प्राप्त होती है उसको प्रामाणिक मानते हुए यह विश्वास करनेके लिए पर्याप्त हेतु है कि वेदान्तसूत्रोंकी रचना वेद-व्यासने ही की हो। वेदान्तसूत्र उपनिषदोंके अध्यात्मज्ञानका निचोड़ है। कहा जाता है कि वेद-व्यास ने अपने पुत्र शुकको मोक्षशास्त्रका अध्ययन कराया। सम्भव है, बादरायण सूत्रोंकी रचनामें यही हेतु रहा हो।

परन्तु जो ग्रन्थराट् व्यासकी कीर्तिका शुभ्र जय-स्तम्भ है वह महाभारत है। महाभारतमें व्यासने अपनी अमित बुद्धिसे अर्थशास्त्र, धर्मशास्त्र और मोक्षशास्त्रको भारतीय कथाके साथ-साथ बड़े सुन्दर ढंगसे सजाकर सदाके लिए आर्य जातिके विस्तृत ज्ञान और लौकिक जीवनका रूप खड़ा कर दिया है—

अर्थशास्त्रमिदं पुण्यं धर्मशास्त्रमिदं परम् ।
मोक्षशास्त्रमिदं प्रोक्तं व्यासेनामितबुद्धिना ॥
(आदिपर्व ५६ । २१)

महाभारत सच्चे अर्थों में प्राचीन भारतवर्षका विश्वकोष है । संसारके साहित्यमें महाभारत एक दिग्गज ग्रन्थ है । इसकी तुलनामें यूनानके इलियड और ओडेसी अथवा आइसलैंड और स्कैण्डिनेवियाके प्राचीन एड्डा और सागा, जिसमें उत्तराखंड का बचा-खुचा गाथाशास्त्र ❀ सुरक्षित है, बहुत पीछे छूट जाते हैं। महाभारत जहां एक ओर प्राचीन नीति और धर्मका अक्षय भंडार है, वहीं दूसरी ओर इसमें भारतीय गाथाशास्त्रकी भी अनन्त सामग्री है। महाभारतको वेद-व्यासने अतीतकी घटनाओंके नीरस क्रोड़पत्रके रूपमें नहीं रचा, अन्यथा वह अब से कहीं पहले अन्य देशोंके भारी भरकम ऐतिहासिक पोथोंकी भांति धूलि-धूसरित हो गया होता । महाभारत एक जीते-जागते चित्रपटके रूपमें सदा हमारे सामने रहा है, जिसके अर्थका व्याख्यान अनगिनत सूत अपने-अपने आसन से करते रहे हैं। आज भी व्यास-गद्दीका उत्तराधिकार भारतके अपने साहित्यिक जगत्में अक्षुण्ण बना हुआ है । आकाशमें उड़नेवाले ज्ञानको पृथिवीके मानवकी पहुँचमें किस प्रकार लाया जा सकता है ? इस प्रश्नका समाधान भारतवर्षीय व्यास-गद्दी है। पश्चिमको यह शिकायत है कि उसका नया ज्ञान विशेषज्ञोंके हाथमें पड़कर लोकसे दूर जा पड़ा है। जीवन-मरण एवं सृष्टि और प्रलयके सम्बन्धमें जो विज्ञानके संशोधन हैं उनको जन-साधारणके जीवनमें ढालनेके साधनका विज्ञानके पास अभाव है । परन्तु भारतवर्षमें सार्वजनिक शिक्षाके चमत्कारी विधानोंमें व्यास-गद्दीसे कही जाने वाली कथाओंके द्वारा विशेषज्ञ और लोकके बीचकी खाई पर पुल बनानेका सफल प्रयास होता आया है। इसी कारण रामायण, महाभारत और पुराणोंके महान् चरित्रोंकी अमर कथाएं देशके कोने कोनेमें फैली हुई हैं। अपने पूर्वपुरुषाओंके चरित्रोंको सुननेकी जो हमारे मनमें स्वाभाविक उमंग है, वही हमारा सबसे उत्कट इतिहास-प्रेम है । जनमेजयके शब्दोंमें हम कह सकते हैं—

नहि तृप्यामि पूर्वेषां शृण्वानश्चरितं महत् ।
(आदि० ५६ । ३)

'पूर्वपुरुषोंके महान् चरित्रको सुनते-सुनते मैं कभी तृप्त नहीं होता ।' उस स्वाभाविक कौतुकको तृप्त करने का राष्ट्रिय साधन महाभारत ग्रन्थ था । पराक्रमी द्रोण, भीष्म, अर्जुन, भीम, कर्ण और दुर्योधनके महावीर्य भुजदण्डोंकी शक्तिके जिस ओजको वेद-व्यासने अपने श्लोकोंमें भरा है, उससे अब भी हमारा वीर हृदय उछलने लगता है।

भारत—महाभारत

महाभारतको शत-साहस्री-संहिता कहा गया है। हरिवंशको मिलाकर महाभारतके १८ पर्वोंमें एक लाख श्लोक होनेका अनुमान किया जाता है । पर यह निश्चय है कि वेद-व्यासके समयमें इस ग्रन्थका यह बृहद् रूप न था। पाणिनिकी अष्टाध्यायीके एक सूत्र (६।२।३८) में महाभारत नाम आता है। उससे पहले आश्वलायन-गृह्यसूत्रमें भारत और महाभारत दोनोंका एक ही वाक्यमें अलग-अलग उल्लेख है। वास्तविक कुरु-पाण्डवोंका वीर गाथा ग्रन्थ भारत ही था, जिसमें चौबीस हजार श्लोक थे और इस कारण जिसका नाम 'चतुर्विंशति साहस्री भारत संहिता' था। इसकी अन्तःसाक्षी स्वयं महाभारतमें ही प्रस्तुत है—

चतुर्विंशतिसाहस्रीं चक्रे भारतसंहिताम् ।
उपाख्यानैर्विना तावद् भारतं प्रोच्यते बुधैः ॥
(आदि० १।६१)

व्यासका मूल भारत बिना उपाख्यानोंके था, पर वर्तमान ग्रन्थमें सैकड़ों उपाख्यान यथास्थान पिरो दिये गए हैं। व्यासने तीन वर्षके संतत परिश्रम (उत्थान) से २४००० श्लोकोंमें भारतवंशके इतिहास और युद्धका मूलकाव्य रचा । उसको रोमहर्षण सूतने यथावत् पढ़ा, पुनः व्यास-शिष्य वैशम्पायनने जनमेजय

❀ Nardic Mythology

के यज्ञमें उसका पारायण किया। इस समय तक ग्रन्थ का रूप शुद्ध बना रहा। महाभारतका तीसरा संस्करण भार्गववंशी कुलपति शौनकके बारह वर्षोंके यज्ञमें देखनेमें आता है। यहां वक्ता और श्रोता दोनों नैमिषारण्यकी सघन छायामें शान्तिके साथ पर्याप्त अवकाश लेकर बैठे थे। इस समय भारतका उपबृंहण महाभारतके रूपमें हो चुका था। 'चतुर्विंशति-साहस्री-संहिता' बढ़ कर शतसाहस्री बन गई थी। उसमें ययाति* और परशुराम जैसे बड़े-बड़े उपाख्यान स्वच्छन्दतासे मिला लिए गये। बहुत-सी कथाएं, जिन्हें हम बौद्ध जातकों तकमें पाते हैं, लोककी चलती-फिरती सम्पत्ति थीं, वे भी महाभारतमें मिला ली गईं। अनुशासनपर्वकी पुष्कर-हरणकी कथा (अ० ९३-९४) और बिसजातक (सं० ४८८) एक ही है। अनागत विधाता आदि तीन मछलियोंकी कहानी या राजा ब्रह्मदत्त और पूजनी चिड़ियाकी बाल कहानियाँ भी महाभारतके भीतर आ गईं। इसके अतिरिक्त शिव, विष्णु, सूर्य, देवी और गणपतिकी बढ़ती हुई भक्तिके आवेशमें सम्प्रदायविदोंने महाभारतको अपनी कृपाका लक्ष्य बनाया। परन्तु इन सबसे बढ़ कर अध्यात्म, धर्म और नीतिके अनेक संवाद महाभारतमें समय-समय पर मिलते गये। इन सब सम्मिश्रणोंके कारण मूल ग्रन्थका कायापलट हो गया। कुछ समय तक तो भारत और महाभारतका अस्तित्व अलग-अलग पहचाननेमें आता रहा, परन्तु जैसा स्वाभाविक था, आगे चल कर केवल महाभारत ही आर्यसंस्कृतिके सबसे महान् ज्ञान-विज्ञान-कोषके रूपमें रह गया।

पूना-संस्करण

प्रश्न यह है कि क्या फिर मूल भारत ग्रन्थको महाभारतमेंसे अलग किया जा सकता है? क्या यह सम्भव है कि महाभारतके भीतर कालक्रमसे जमी हुई विभिन्न साहित्यिक तहोंको फिरसे उलट कर हम कुछ उस पर्देको हटा सकें जिसके पीछे नवीनने प्राचीन भागको छिपा रक्खा है? यह प्रश्न हमारे राष्ट्रिय पाण्डित्यकी कसौटी है। हर्षकी बात है कि यह भगीरथ कार्य पूनाके 'भांडारकर प्राच्य विद्या इन्स्टीट्यूट' की ओरसे आज लगभग बीस वर्षोंसे हो रहा है। महाभारतके इस संस्करणमें जहां तक मानवी बुद्धि और परिश्रमके लिए सम्भव है, वहां तक महाभारतके उस मूल रूपका, जिसका पारायण उग्रश्रवा सूतने शौनकके सत्रमें किया था, उद्धार करनेका प्रयत्न किया गया है। डा० सुक्थणकर इस कार्यके प्राण हैं। उन्होंने अपनी प्रखर प्रतिभासे कुछ-कुछ यह भी प्रयत्न किया है कि हम शौनकके संस्करणसे भी पूर्वमें हुए परिवर्धनोंको अलग पहचान सकें। इस दिशामें उनका 'भृगु और भारत'* शीर्षक बृहत् निबन्ध स्तुत्य है। उससे यह ज्ञात होता है कि भृगुवंशी ब्राह्मणोंके द्वारा किये गये सम्पादनके फल-स्वरूप शताब्दियोंमें भारतको महाभारतका स्वरूप प्राप्त हुआ होगा। कुलपति शौनक स्वयं भार्गव थे। भरतवंशसे भी पहले उनकी जिज्ञासा भार्गववंशकी कथाके लिए प्रकट होती है—

तत्र वंशमहं पूर्वं श्रोतुमिच्छामि भार्गवम्।

भार्गव शौनकका यह पक्षपात समग्र ग्रन्थ पर पड़े हुए भार्गव प्रभावका द्योतक मात्र है। और्वोपाख्यान (आदि), कार्तवीर्योपाख्यान (वन), अम्बोपाख्यान (उद्योग), विपुलोपाख्यान (शान्ति), उत्तंकोपाख्यान (अश्वमेध) का सम्बन्ध भार्गवोंसे है। आदिपर्वके पहले ५३ अध्याय, जिसमें पौलोम और पौष्य पर्व हैं, भार्गव कथाओंसे सम्बन्ध रखते हैं। भरतवंशकी कथा उसके बाद चली है। शान्ति और अनुशासन पर्वोंमें जो धर्म और नीति परक अंश हैं, भृगुओंकी प्रेरणा के फल हैं। यह सत्य है कि मूल भारतसंहिताके उस शुद्ध रूपका जिसमें

*व्याकरण—साहित्यमें इन उपाख्यानोंका उल्लेख 'यायात' 'आधिराम' नामोंसे किया गया है। (काशिका सूत्र ६।२।१०३)

* भंडारकर इंस्टीट्यूटकी मुखपत्रिका, भाग १८, पृ० १-७६

उसका आविर्भाव हिमवत् पृष्ठके बदरीवनमें हुआ था, इस समय ठीक-ठीक उद्धार करनेका साहस कोई नहीं कर सकता, पर फिर भी सहस्रोंवर्षों की जमी हुई काई को हटाकर जितना भी परिष्कार किया जा सके श्रेयस्कर है। इस दृष्टिसे पूनाके भारत-चिन्तकोंका कार्य राष्ट्रिय महत्त्वका है। महामति पुराणज्ञ डा० सुकक्ठणकर इस कार्यमें हमारे अर्वाचीन उग्रश्रवा हैं।

साहित्यिक महत्त्व

महाभारत संस्कृत-साहित्यका धुरंधर ग्रन्थ है। उसका साहित्यिक तेज सर्वातिशायी है। 'एड्डा' और 'सागाओ' के लिए प्रख्यात लेखक कारलाइलने लिखा है कि वे इतनी महान् कृतियां हैं कि उन्हें किंचित् स्वल्प कर देने पर शेक्सपियर, दांते और गेटे बन सकते हैं। यही बात हम महाभारतके लिए कह सकते हैं। भास, कालिदास, माघ, भारवि, हर्षकी साहित्यिक-कृतियां महाभारतके ही अल्प-विषयात्मक रूप हैं। यों भी महाभारत साहित्यिक शैलियोंकी खान है—उपाख्यान शैली, गल्प शैली, दर्शन और अध्यात्म-निरूपणकी संवादात्मक शैली, प्रश्नोत्तर शैली (युधिष्ठिर-अजगर और युधिष्ठिर-यक्ष प्रश्न, वनपर्व अ० १८०—८१, अ० ३१३), केवल प्रश्नात्मक शैली (सभापर्व अ० ५, नारद प्रश्न मुखसे राजधर्मानुशासन), नीति-ग्रन्थात्मक शैली (विदुरनीति, उद्योग प० ३३-४०), स्तोत्र शैली*, सहस्रनाम शैली—इस प्रकार वर्तमान महाभारतमें साहित्यिक पद्धतिके अनेक बीज पाये जाते हैं।

व्यास और राष्ट्र

पर हमारे राष्ट्रिय अभ्युत्थानके लिए महाभारतका विशेष महत्त्व यह है कि वह प्राचीन भूगोल, समाज-शास्त्र, शासन-सम्बन्धी संस्था, नीति और धर्मके आदर्शोंकी खान है। वेद-व्यास जिस भारतराष्ट्रकी उपासना करते थे, भविष्यका प्रत्येक हिन्दू उसका स्वप्न देखेगा। उनका निम्नलिखित राष्ट्रगीत हमारे इतिहास का सनातन मंगलाचरण होगा।

अत्र ते कीर्तयिष्यामि वर्षं भारत भारतम्।
प्रियमिन्द्रस्य देवस्य मनोर्वैवस्वतस्य च ॥
पृथोस्तु राजन्वैन्यस्य तथेक्ष्वाकोर्महात्मनः।
ययातेरम्बरीषस्य मान्धातुर्नहुषस्य च ॥
तथैव मुचुकुन्दस्य शिबेरौशीनरस्य च ॥
ऋषभस्य तथैलस्य नृगस्य नृपतेस्तथा ॥
कुशिकस्य च दुर्धर्षे गाधेश्चैव महात्मनः।
सोमकस्य च दुर्धर्ष दिलीपस्य तथैव च ॥
अन्येषां च महाराज क्षत्रियाणां बलीयसाम्।
सर्वेषामेव राजेन्द्र प्रियं भारत भारतम् ॥ ×

आओ, हे भारत! अब मैं तुम्हें भारत देशका कीर्ति-गान सुनाता हूं—वह भारत, इन्द्र देवको प्रिय है, जो मनु, वैवस्वत, आदिराज पृथु, वैन्य और महात्मा इक्ष्वाकुका प्यारा था; जो भारत ययाति, अम्बरीष, मान्धाता, नहुष, मुचुकुन्द और औशीनर शिव को प्रिय था, ऋषभ, ऐल और नृग जिस भारतको प्यार करते थे, और जो भारत कुशिक, गाधि, सोमक, दिलीप और अनेकानेक वीर्यशाली क्षत्रिय सम्राटोंको प्यारा था। हे नरेन्द्र! उस दिव्य देशकी कीर्ति-कथा मैं तुम्हें सुनाऊंगा।

व्यासने राष्ट्रिय राजनीतिका जो आदर्श रक्खा है वह मनु और वाल्मीकिसे मिलता है। वाल्मीकिके 'अराजक जनपद' गीतसे मिलता-जुलता व्यासका 'यदि राजा न पालयेत्' (शान्ति० ६८।१-३०) गीत है। लोकमें शान्तिकी व्यवस्था राजाका सबसे प्रथम कर्त्तव्य है। धर्मकी जड़ राजाकी सुव्यवस्थाके बल पर टिकी रहती है। यदि राजा न हो, तो दुष्ट

* जैसे महापुरुषस्तव (शान्ति अ० ३३८) कृष्णनाम स्तुति (शा० अ० ४३), भगवन्माहात्म्य (अनु० अ० १५८), शतरुद्रिय (अनु० अ० १६१), भगवन्नाम निरुक्ति (शा० अ० ३४१) और कृष्णस्तवराज (शा० अ० ४७) स्तोत्र और सहस्रनामोंका संग्रह इन्हीं दो पर्वोंमें अधिक है। यह संदेहजनक है।

× भीष्मपर्व अ० ६, श्लो० ५-६। संजय धृतराष्ट्रसे कह रहे हैं।

साधुओंको खा डालें, धर्म डूब जाय, वेद कहींके न रहे, सारी प्रजा अन्धकारमें विलीन हो जाय।* राष्ट्र के धर्मबन्ध शासनकी सुव्यवस्थाके अधीन हैं। व्यास के मतमें बिना राजाका राष्ट्र मरा हुआ है—

मृतं राष्ट्रमराजकम्। (वन० ३१३। ८४)

आराजक राष्ट्र मात्स्यन्यायका शिकार हो जाता है। (शा० १६-१७)। व्यासने राजा और क्षत्रियकी परिभाषा दी है। जो लोक रंजनकरता है वही राजा है। (शा० ५६। ११), जो क्षतसे बचाता है वही क्षत्रिय है (शा० २९। १३८) इन्हीं आदर्शोंका हमारे इतिहासके स्वर्णयुगमें कालिदासने दोहराया था। † भीष्मने युधिष्ठरसे कहा है कि राजा कालको बनाता है, या काल राजाको बनाता है, इसमें तुम कभी संशय मत करना, राजा ही कालको बनाता है—

कालो वा कारणं राज्ञो राजा वा काल कारणम्।
इति ते संशयो मा भूद्राजा कालस्य कारणम्॥

जब राजा भली प्रकार दण्डनीतिका पालन (Administration of law) करता है, तभी सतयुग आ जाता है। राजाका आसन राष्ट्रका ककुद् है। राजाकी उस आदर्श आसन्दीकी रक्षामें रहकर प्रजा जिस धर्मका पालन करती है, उसका एक चतुर्थ अंश राजाको प्राप्त होता है। राजाको अपनी नीतिमें मालीकी भांति होना चाहिए, कोयला फूंकनेवाले आंगारिककी भांति नहीं। एक फूलोंकी चाहमें वृक्षों को पोसता है, दूसरा अंगारोंके लिए पेड़ोंको फूंक डालता है। राजाका शरीर प्रजाएं हैं। अपने आप को बचानेके लिए भी राजाको प्रजाकी रक्षा करनी चाहिए। प्रजाका भी सर्वोत्तम शरीर राजा ही है। राजाको पुष्ट करके वे अपने आपको बढ़ाती है। जो राष्ट्रकी कामना करते हैं उनको सबसे पहले लोककी रक्षा करनी चाहिए। व्यासने षोडश राजीयपर्वमें प्राचीन आर्य राजाओंके आदर्शका स्मरण दिलाया है। रामके राज्यमें समय पर मेघ बरसते थे, और सदा सुभिक्ष रहता था। दिलीपके राज्यमें स्वाध्याय घोष, टंकार घोष और दानके संकल्पका घाष, ये तीन शब्द बराबर सुनाई पड़ते थे। सक्षेपमें वेद व्यासके मतके अनुसार लोकका सारा जीवन राजधर्मके आश्रित है, राजधर्म बिगड़ गया तो वेद, धर्म, वर्ण, आश्रम, त्याग, तप, विद्या, सब कुछ नष्ट हुआ समझना चाहिए (शान्तिपर्व ६३। २८-२९)—

मज्जेत् त्रयी दंडनीतौ हतायां सर्वे धर्माः प्रक्षयेयुर्विवृद्धाः।
सर्वेधर्माश्चाश्रमाणाहताःस्युः क्षात्रे त्यक्ते राजधर्मे पुराणे॥
सर्वे त्यागा राजधर्मेषु दृष्टाः सर्वाः दक्षा राजधर्मेषु युक्ताः।
सर्वा विद्या राजधर्मेषु चोक्ताः सर्वेलोका राजधर्मे प्रविष्टाः॥‡

व्यास और धर्म

व्यासने जो धर्मका स्वरूप रक्खा है, वह उनका सबसे महान् ऋषित्व या दर्शन है। वे धर्मको स्वर्ग

* राजमूलो महाप्राज्ञ धर्मो लोकस्य लक्ष्यते।
प्रजा राजभयादेव न खादन्ति परस्परम्॥
न योनिदोषो वर्तेत न कृषिर्न वणिक् पथः।
मज्जेद्धर्मस्त्रयी न स्याद्यदि राजा न पालयेत्॥ (शा०अ०६८)

† क्षतात् किल त्रायत इत्युदग्रः
क्षत्रस्य शब्दो भुवनेषु रूढः (रघुवंश २। ५३)
तथैव सोऽभूदन्वर्थो राजा प्रकृति रंजनात्। (रघु० ४।१२)
अर्थात् रघु प्रकृतिरंजनके कारण सच्चे अर्थोंमें राजा कहलाये।

‡ 'हिन्दू पालिटी' में डा० जायसवाल ने इन श्लोकोंका निम्नलिखित अनुवाद दिया है—

"When Politics becomes lifeless the triple Veda sinks, all the dharmas [i. e., the bases of civilization] (howsoever) developed, completely decay. When traditional State Ethics are departed from, all the bases of the divisions of individual life are shattered.

"In Politics are realised all the forms of renunciation, in Politics are united all the sacraments, in Politics are combined all knowledge, in Politics are centred all the Worlds.

प्राप्ति करानेवाले थोथे कर्मोंका जंजाल नहीं मानते। उन्होंने अपने ध्यानसे धर्मकी एक नई परिभाषा, एक नये स्वरूपका अनुभव किया—

नमो धर्माय महते धर्मो धारयति प्रजाः।
(उद्योग० १३७ । ९)

व्यक्तिको, राष्ट्रको, जीवनको, संस्थाओंको, लोक और परलोक—सबको धारण करने वाले जो शाश्वत सर्वोपरि नियम हैं वे धर्म हैं—

धारणाद्धर्म इत्याहुर्धर्मो धारयते प्रजाः।
यस्माद्धारण संयुक्तः स धर्म इत्युदाहृतः ॥

धर्म स्वर्गसे भी महान् है। लोकस्थितिका सनातन बीज धर्म है। इस दृष्टिसे देखने पर धर्म गंगाके ओजस्वी प्रवाहकी भांति जीवनके सुविस्तृत क्षेत्रको सिञ्चित और पवित्र करनेवाला अमृत बन जाता है। राजाओंकी जय और पराजय आने-जाने वाली वस्तु हैं, जीवनमें सुख और दुःख भी सदा एकसे नहीं रहते, पर सम्पति और विपत्तिमें भी जो वस्तु एकसी बनी रहती है वह धर्म है। व्यास ने महाभारत संहिता लिखनेके बाद उसके अन्तमें अपने दृष्टिकोण और उद्देश्यका निचोड़ चार श्लोकोंमें दिया है, जिसे भारतसावित्री कहते हैं। उसका अंतिम श्लोक यह है—

न जातु कामान्न भयान्न लोभाद्
धर्मं त्यजेज्जीवितस्यापि हेतोः।
नित्यो धर्मः सुख दुःखे त्वनित्ये
जीवो नित्यो हेतुरस्य त्वनित्यः ॥

अर्थात् कामसे, भयसे, लोभसे, यहां तक कि प्राणोंके लिए भी धर्मको छोड़ना ठीक नहीं। क्योंकि धर्म नित्य है, सुख और दुःख क्षणिक हैं। इसी प्रकार जीव भी नित्य है, जन्म और मृत्यु अनित्य हैं। 'मैं भुजा उठाकर कह रहा हूं, पर कोई मेरी बात सुननेवाला ही नहीं है। धर्मसे ही धन और काम मिलते हैं, उस धर्मका आश्रय क्यों नहीं लेते।' ये भारत-सावित्रीमें व्यासके साक्षात् वचन हैं।

यदि धर्म जीवनको धारण करनेवाला है और धर्म अच्छी वस्तु है तो जीवन भी मूल्यवान् होना चाहिए। व्यासके धर्ममें जीवन रोने-धोने या माया समझकर खोनेकी वस्तु नहीं। उनकी दृष्टिमें यह लोक कर्मभूमि है, परलोक फलभूमि होगा। देवदूतने मुद्गलसे कहा—

कर्मभूमिरियं ब्रह्मन् फलभूमिरसौ मता।
(वन० २६१ । ३५)

वनमें पाण्डवोंके पास जाकर स्वयं व्यासने यह मत रक्खा था। वे इस लोकमें कर्मवादको मानते हैं। उसके साथ दैववादको मानते हैं और दोनोंके ऊपर अध्यात्म ब्रह्म या आत्मतत्त्वमें विश्वास रखते हैं। उन्होंने जो दार्शनिक मत रक्खा उसमें मनुष्य सबके केन्द्रमें है। व्यासका यह श्लोक स्वर्णके अक्षरोंमें टांकने योग्य है—

गुह्यं ब्रह्म तदिदं ब्रवीमि
नहि मानुषात् श्रेष्ठतरं हि किञ्चित्।
(शान्ति० १८० । १२)

अर्थात्, यह रहस्य-ज्ञान तुमको बताता हूँ—मनुष्यसे श्रेष्ठ अन्य कुछ नहीं है। व्यासका यह मानव-केन्द्रिक (man as the centre of universe) मत हमारे अर्वाचीन ज्ञान-विज्ञान और सामाजिक अध्ययनमें सर्वत्र व्याप्त होता जा रहा है।

व्यासकी परिभाषाके अनुसार कर्म मनुष्यकी विशेषता है—

प्रकाशलक्षणा देवा मनुष्याः कर्मलक्षणाः।
(अश्व० ४३ । २०)

कर्म करनेसे जो प्रकाश जीवनमें आता है उसीसे मनुष्य देव बन जाता है। आत्माभिमानके साथ मनुष्य-शरीर रखनेसे ही सारे लाभ प्राप्त होते हैं।

पाणिवाद

व्यासने मानवी पुरुषार्थकी श्रेष्ठताका प्रतिपादन करते हुए इन्द्रके मुखसे पाणिवादका व्याख्यान कराया।

है। जिनके पास हाथ हैं वे क्या नहीं कर सकते ? जिनके हाथ हैं वे ही सिद्धार्थ हैं। जिनके हाथ हैं उनकी मैं सबसे अधिक सराहना करता हूं। जैसे तुम धन चाहा करते हो, वैसे मैं तो पांच अंगुलियोंवाले हाथ चाहाता हूँ। पाणिलाभसे बढ़कर और कोई लाभ नहीं है। * जैसा कर्म किया जाता है वैसा ही लाभ मिलता है, यही शास्त्रका निचोड़ है—

यथा कर्म तथा लाभ इति शास्त्रनिदर्शनम्।
(शान्ति० २७६। २०)

किन्तु धनागम धर्मसे होना चाहिए। व्यासजी के मनमें धर्मका जो ऊंचा स्थान है उसके अनुसार न केवल अर्थ वरन् काम और मोक्ष भी धर्म पर आश्रित हैं और यह राज्य भी धर्ममूलक है—

त्रिवर्गोऽयं धर्ममूलं नरेन्द्र ! राज्यञ्चेदं धर्ममूलं वदन्ति।
(वन० ४,४)

व्यासकी दृष्टिमें लोक-संग्रह और लोक-धर्म बहुत मूल्यवान् पदार्थ हैं। आजगर मुनिको 'लोकधर्मविधानवित्' अर्थात् लोक-धर्मके सिद्धान्त और संगठनका वेत्ता (शा० १७६।६) कहा गया है। जो व्यक्ति लोकपक्षका इतना समर्थक हो, उसे गृहस्थधर्मका प्रशंसक होना ही चाहिये। व्यासके अनुसार धर्मके द्वारा प्रवृत्त गृहस्थ आश्रम सब आश्रमोंमें तेजस्वी मार्ग है, वह पवित्र धर्म है जिसकी उपासना करनी चाहिए। +

व्यास और अध्यात्म

लोक, गार्हस्थ्य और मनुष्यके लिए जिस महापुरुषके मनमें श्रद्धा है, जिसका दृष्टिकोण इन विषयों में इतना मंजा हुआ है, उसका अध्यात्मशास्त्र भी तदनुकूल ही मानवको साथ लेकर चलता है। मनुष्य पंचेन्द्रियोंसे युक्त प्राणी है। इन्द्रियां ही मानवको देव या असुर बना देती हैं। व्यासके अध्यात्मशास्त्र का सार इन्द्रियनिग्रह है—

आत्मनस्तु क्रियोपायो नान्यत्रेन्द्रियनिग्रहात्।
(उद्योग० ६६।१७)

इन्द्रियोंको रोकनेके सिवाय आत्माकी उन्नतिका दूसरा उपाय नहीं है। विषयोंकी ओर जाती हुई इन्द्रियोंको वशमें रखनेसे अध्यात्माग्नि प्रकाशित हो उठती है। जिस प्रकार इन्धनके जलनेसे अग्नि चमक उठती है, उसी प्रकार इन्द्रियनिरोधसे महानात्मा प्रकाशित होता है। डसनेके भावसे सर्प जाने जाते हैं, दम्भभावसे असुर, दानभावसे देव और दमभावसे महर्षि पहचाने जाते हैं (अश्व० आ०२१)। वेदज्ञानका रहस्य सत्य भाषणमें है, सत्यका उपनिषद् इन्द्रियदमन है, और दमका फल मोक्ष है—

वेदस्योपनिषत्सत्यं सत्यस्योपनिषद्दमः।
दमस्योपनिषन्मोक्ष एतत्सर्वानुशासनम्॥
(शा० २६६।१३)

आत्मनिरोधके द्वारा जो व्यक्ति जीवनमें अपना मार्ग विषयोंसे भरे हुए जंगलमें स्वयं निश्चित करता है, वह अपना ज्ञान औरों पर नहीं बघारता, बल्कि अपने आचारसे औरोंको उपदेश देता है। बोध्य ऋषिकी कही हुई पुरातन गाथाओंको उद्धृत करके व्यासने यही कहा है—

उपदेशेन वर्तामि नानुशास्मीह कंचन। (शा० १७८।६)

मैं अपनी 'करनी'से सिखाता हूँ, 'कथनी'से नहीं वेदव्यास जीवनमें ऋजुभावके माननेवाले हैं। ऋजुभावकी उपासना ब्रह्मपदकी प्राप्ति है, कुटिलता मृत्युका पद है। इतना ही ज्ञानका सार है, और सब झूठी बकवाद है।★

---

*अहो सिद्धार्थता तेषां येषां सन्तीह पाणयः।
अतीव स्पृहये तेषां येषां सन्तीह पाणयः॥
पाणिमद्भ्यः स्पृहाऽस्माकं यथा तव धनस्य वै।
न पाणिलाभादधिको लाभः कश्चन विद्यते॥
(शान्तिपर्व १८० । ११-१२)

\+ सर्वाश्रमपदेऽप्याहुर्गार्हस्थ्यं दीप्तनिर्णयम्।
पावनं पुरुषव्याघ्र यं धर्मं पर्युपासते॥ (शा०६६।३५)

★ सर्वं जिह्मं मृत्युपदमार्जवं ब्रह्मणः पदम्।
एतावान् ज्ञानविषयः किं प्रलापः करिष्यति॥ (आश्व०११४)

कालधर्म

वेदव्यासके आध्यात्मिक दर्शनमें कालधर्मका बड़ा स्थान है। उनकी आंखोंने समंतपंचकमें हुए कुरु-पाण्डवोंके दारुण नाशको देखा। बड़े कुशाग्रबुद्धि और कल्याणाभिनिवेशी व्यक्ति इच्छा रहते हुए भी उस क्षयको नहीं रोक सके। यह कालचक्रकी ही महिमा है। कर्मके साथ मिलकर काल ही संसारमें बहुत प्रकारके उलटफेर करता है (शा० २१३।१३)। कालके पर्याय धर्मके सामने सब अनित्य ठहराता है, कभी एककी बारी, कभी दूसरे की। महाभारतके अन्तमें जो व्यक्ति स्त्री-पर्वका देखे, वह इसके सिवाय और क्या कह सकता है—

न च दैव कृतो मार्गः शक्यो भूतेन केनचित्।
घटतापि चिरं कालं नियन्तुमिति मे मतिः॥

कोई प्राणी कितना भी प्रयत्न करे दैवके मार्गको नहीं रोक सकता। यह दैव या उत्कट काल विश्वका नित्य विधान है। इसीका नामान्तर सनातन ब्रह्म है। वेदव्यास मानव जीवनकी घटनाओंकी ऊहापोह करते हुए उनके अन्तिम कारणकी खोजमें यहीं विश्राम लेते हैं। यह सत्य है कि मनुष्य विधाताके द्वारा निश्चित संसारके विधानको बदल नहीं सकता, पर वह यह अवश्य कर सकता है कि उस सर्वोपरि शक्तिके रहस्यों का साक्षात्कार करके जीवनमें ऋजु भावको अपना ले। वह यह भी कर सकता है कि इन्द्रियोंके निरोध और आत्म-चिन्तनसे आत्म-ज्योतिको इसी शरीरमें प्राप्त कर ले। यह शरीर मूंज घास है, आत्मा उसके भीतरकी सींक है। जिस प्रकार मूंजसे इषीका निकाली जाती है, वैसे ही योगवेत्ता शरीरमें आत्मा का साक्षात्कार करते हैं (आश्व० १६।२२-२३)।

व्यासकी आज्ञा है कि 'जय' नामक इतिहास सबको सुनना चाहिए। यह धुरंधर ग्रन्थ भारतीय चरित और ज्ञान का पूर्णतम वर्ण-पट (Spectrum) है। इसके निर्माताकी प्रज्ञा सूर्यरश्मियोंकी भांति विराट् है। सारा भारत-राष्ट्र महामुनि वेदव्यासके लिए अपनी श्रद्धांजलि अर्पित करता है। हम भी हिमालयके शिलाप्रस्थ पर विराजमान बदरिकाश्रमके पुराण-मुनिको प्रणाम करते हैं, जिनके पृथु नेत्रोंमें हमारे ज्ञानका सारा आलोक समा गया था, जिनका शालस्कन्धके समान उन्नत मेरुदण्ड राष्ट्रिय मेरुदण्ड का प्रतीक था, जिनके चन्दनोक्षित कृष्णशरीरमें हमारे शुभ आदर्श मानो राशिभूत होकर मूर्तिमान् हो उठे थे।

मधुकरसे

कवयिता—श्री आचार्य "किशोर"

मधुकर क्यों करता मनमानी!
क्यों फूला फिरता उपवन में मधुलोभी बनकर अज्ञानी। मधुकर०

चहुँ ओर फूलके घूम-घूम
उसके चरणोंको चूम-चूम
फिर झूम-झूम धीरे-धीरे
कहता क्या! निज मन की बानी॥ मधुकर०

क्यों मंडराता इन कलियों पै
मधुशालाकी मधु गलियों पै
मधुपानकी मधुमय आशामें
क्यों जीवन खोनेको ठानी॥ मधुकर०

मृग फंसा नादकी मस्तीमें
अरु मीन स्वादकी मस्तीमें
रसलोलुप बन पगले भंवरे;
मत करना तुम यह नादानी॥ मधुकर०

कलियां नश्वर तू भी नश्वर
रस नश्वर है उपवन नश्वर
नश्वरताके रम्यप-शमें—
फंस करता क्यों जीवन हानी॥ मधुकर०

काश्मीरकी विख्यात योगिनी लल्लेश्वरी

[लेखक—डाक्टर श्रीनाथ जी तिक्कू शास्त्री, A. M. S. (B. H. U.)]

भारतवर्षमें वैदिककालसे लेकर बौद्धकाल तक महिलाओंकी पुनीत और वीर गाथाओंसे सारा ही भारतीय-साहित्य ओत प्रोत है। वैदिककालकी नारी का आदर्श कितना उच्च और उज्ज्वल था यह ऋग्वेद और अथर्ववेदके कई सूक्तोंमें सविस्तार वर्णित है। वैदिककालकी लोपामुद्रा और उषा कई ऋचाओंकी ऋषि भी हुई हैं। उपनिषत्कालकी आत्रेयी, मैत्रेयी और गार्गी अपने प्रकाण्ड पाण्डित्यमें अद्वितीय हैं। रामायण और महाभारतकालकी सीता, सावित्री, शकुन्तला, दमयन्ती, अनसूया, विदुला, सुलभा और गान्धारी भारतीय साहित्यकी उन उज्ज्वल महिलाओंमेंसे हैं जिनकी गौरव-गाथाओंसे आज भी इस देशकी जनता संसारको सभ्यताकी दीक्षा देनेका अभिमान रखती। है बौद्धकालकी नारी भी हमें भारती, संघमित्रा और बिज्जिकाके रूपमें भारत के उज्ज्वल अतीतका स्मरण दिलाती हैं। अर्वाचीन-कालमें भी भारतकी नारी इतनी पददलिता दीना और हीना नहीं थी जितनी कि आजकल वह समझी जाती है। महारानी अहिल्याबाई, महारानी लक्ष्मी-बाई, महारानी पद्मावती, मीरा, काश्मीरकी महारानी दिद्दा, सुगन्धा, वाक्पुष्टा और यशोमती इत्यादि नारियोंकी वीर गाथायें भारतकी महिलाका गौरव अखण्ड और उज्ज्वल रखनेके लिये पर्याप्त हैं। आज भी भारतीय नारीका सतीधर्म संसारकी नारियोंके लिये न केवल प्रशंसनीय ही है अपितु अनुकरणीय भी है।

यदि हम भारतीय साहित्यकी जरा सूक्ष्म आलोचना करें तो यह विदित होगा कि वैदिककालसे लेकर आज तक यद्यपि भारतकी नारीका आदर्श अक्षुण्ण रहा है, तथापि तुलनात्मक दृष्टिसे उस का शनैः शनैः ह्रास होता गया है। वैदिककाल और उपनिषत्कालकी उषा, सूर्या, गार्गी और सुलभा जितनी ब्रह्मवादिनी विदुषी और दक्षा हैं, उतनी महाभारत-कालकी कोई भी नारी नहीं। अर्वाचीनकालके साहित्यमें तो हमें नारियोंमें ब्रह्मज्ञानका नितान्त अभाव मिलता है। परन्तु केवल एक ही नारी ऐसी है जिसको हम उपनिषत्काल और वैदिककालकी एक मात्र प्रतिनिधि कह सकते हैं। वह है काश्मीर देशकी सुविख्यात योगिनी—"लल्लेश्वरी"। आज 'श्रीस्वाध्याय' के पाठकोंके समक्ष इसी महिलाका कुछ वर्णन करेंगे।

जन्मस्थान और वंशपरिचय

काश्मीरमें पाम्पोर (पद्मपुर) नाम वाला एक छोटा नगर है। यह श्रीनगरसे १० मील पर है। इसके पास ही स्यमपोर नामक एक ग्राम है, इसका पुराना नाम 'सिंहपुर' था। शैव सम्प्रदायके परमप्रसिद्ध आचार्य 'सोमानन्द' इसी ग्राममें उत्पन्न हुए थे। यहाँ पर शैव शास्त्रके अध्यापनके वास्ते एक बड़ा मठ था, जिसे 'सिंह गुहा मठ' कहते थे। राजनिघण्टुकार पण्डित नरहरि इसी ग्रामके निवासी थे और वे अपनेको बड़े गौरवसे सोमानन्दपादका वंशज कहते हैं, जिससे प्रतीत होता है कि प्राचीन समयमें यहां बहुतसे विद्वान् ब्राह्मण निवास करते थे, परन्तु आजकल यह ग्राम नष्टप्राय हो चुका है और ऐसा अनुमान होता है कि इसका अधिकांश भाग वितस्ताके जलमें मग्न हुआ होगा, इसका कारण यह है कि पहले वितस्ता इससे बहुत दूर बहती थी, परन्तु अब बहुत निकट आ गई है।

भगवती लल्लेश्वरीका जन्म इसी ग्रामके एक ब्राह्मण घरमें हुआ था। यह १३वीं शताब्दीका मध्य-

काल था। उस समय काश्मीरमें महाराजा उद्यानदेव का राज्य था। काश्मीरमें हिन्दुशासनका देदीप्यमान-दिवाकर अब अस्ताचलके उस पार चला गया था। केवल कुछ क्षीण किरणें काश्मीरकी वसुधा पर अपनी अन्तिम आभामें विराजमान थीं, जो कि उद्यानदेवके शासनके रूपमें विद्यमान थी। वहां इस समय मुसलमानोंकी सभ्यताका सम्मिश्रण हो चुका था। अनेक हिन्दू घराने मुसलमानी सभ्यताके रङ्गमें रङ्ग गये थे। हिन्दुओंके अन्दर अनेक सांस्कृतिक और सामाजिक त्रुटियोंका भयङ्कर पिशाच अपना भीषण ताण्डव कर रहा था, यह वही समय था जब कि काश्मीरका वह विश्वविदित पाण्डित्य और कवित्वकी कला अपना चरमनिश्वास ले रही थी। ऐसे ही समय में भगवती लल्लेश्वरीका अवतार हुआ।

बहुतसे विद्वानोंका कथन है कि लल्लेश्वरी 'बाला त्रिपुर सुन्दरी' का अवतार थी। लल्लेश्वरीके माता पिताका नाम क्या था? इस बातका कुछ पता नहीं चलता। लल्लेश्वरीका नाम वास्तवमें 'लल्ला' था। अधिकांश लेखकोंका कथन है कि 'लल्ला' नाम इनका पेट बड़ा होनेके कारण बादमें पड़ा था और वास्तविक जन्मनाम कुछ और ही था। परन्तु यह मत युक्तियुक्त नहीं है। मेरे विचारमें लल्ला जन्मनाम है। इसके कई प्रमाण हैं। राजतरंगिणीमें लिखा है कि हर्षदेवकी एक रानीका नाम 'लल्ला' था।

"लल्ला नामाभवतस्य वेश्यान्तः पुरचारिणी"

इससे यह स्पष्ट है कि उस समय लल्ला नाम रक्खा जाता था। भारतके अन्य प्रान्तोंमें अब भी यह नाम रखा जाता है। कश्मीरी भाषामें लल्ला या लल् आजकल तोन्दको कहते हैं। मेरी यह धारणा है कि 'लल्ली' का पेट बहुत मोटा था और उसका नाम 'लल्ला' था; वह अपने मोटे पेटके लिए साधारण जनतामें अधिक प्रसिद्ध थी, अतएव बाद मोटे पेटका और पेटका भी नाम 'लल' प्रसिद्ध हुआ। जिस प्रकार कविवर 'सूरदास' अन्धे थे और उसी अभिधाके कारण आज भी सूरदास अन्धमात्र पर आरूढ़ हो गया है। ठीक उसी प्रकार लल्ला नाम भी समझना चाहिये। जिस प्रकार शिष्ट जनताके लोगोंमें सूरदास नाम नहीं पाया जाता इसी प्रकार लल्ला नाम भी काश्मीरीमें लोगोंमें नहीं पाया जाता है, कारण कि लल्ला नाम लल्लेश्वरीके अनन्तर भद्दा समझा जाने लगा, यतः उसकी अभिधा केवल मोटी तोन्द पर ही नियन्त्रित होने लगी। कहनेका सारांश यह है कि 'लल्ला' नाम लल्लेश्वरीका जन्म नाम है, यह मोटे पेट होनेके कारण नहीं पड़ा था। 'लल्ला' नाम वास्तवमें संस्कृतके 'ललिता' शब्दका अपभ्रंश प्रतीत होता है। लल्लेश्वरीने जहां जहां भी अपना नाम कहा है वहां वहां 'लल्ला' या 'लल्' नाम से ही अपना परिचय दिया है। यदि उसका कोई अन्य नाम होता तो कहीं-न-कहीं पर उसका भी निर्देश अवश्य किया होता।

अध्ययन

लल्लाका बाल्यकाल बहुत ही सुखसे बीता। उस के घरमें सब विद्वान् थे। उसने घर पर ही शास्त्रों को पढ़ा था। कई विद्वान् कहते हैं कि लल्ला अपठित थी, परन्तु मैं इसका समर्थन नहीं करता हूँ। कारण यह कि 'लल्ला' ने स्वयं कई स्थानों पर कहा है कि 'मैं पढ़-पढ़ कर थक गई पर मुझे इन बड़े-बड़े ग्रन्थों के रटनेसे परमात्मा न मिला' इत्यादि। इन बातोंसे स्पष्ट अनुमान किया जा सकता है कि लल्लेश्वरी अवश्य ही पढ़ी लिखी थी। उसने उपनिषद् वेदान्त और शैव-दर्शनका अवश्य ही मनन किया था। इस बातका प्रमाण उसके काश्मीरी-भाषा-बद्ध श्लोकोंमें इतस्ततः विद्यमान है। यद्यपि लल्लेश्वरी जैसी योगिनी के लिये अद्वैतज्ञानका प्रतिपादन करने वाले वाक्यों को कहनेमें यह आवश्यक नहीं कि शास्त्रोंका मनन किया हुआ हो, परन्तु यदि हम यह मानें कि उसने इन शास्त्रोंका अवलोकन और मनन किया हुआ था तो इसमें कोई विप्रतिपत्ति भी नहीं है। जो लोग यह कहते हैं कि लल्लेश्वरी शिक्षित नहीं थी, उनके भी भ्रमका कारण है। वह यह कि वे लोग समझते हैं

कि उस समय स्त्रियां शिक्षित नहीं थीं और तिस पर भी लल्लेश्वरी गांवमें उत्पन्न हुई थी तो उसने शिक्षा कहांसे पानी थी । परन्तु यह वस्तुतः भ्रम है। भगवती लल्लेश्वरीके समय काश्मीरकी प्राचीन संस्कृति पूर्णतया नष्ट नहीं हो चुकी थी । हिन्दुओंने अभी मुस्लिम संस्कृति अधिक नहीं अपनाई थी, उस समय स्त्रियां घरोंमें और पाठशालाओंमें बराबर शिक्षा प्राप्त करती थी, उनको विद्याके अमर भण्डारसे उत्तरकालकी भांति वञ्चित नहीं किया जाता था। अतएव लल्लेश्वरीके विषयमें अशिक्षित होनेकी धारणा रखनी निष्प्रमाण और निराधार है । सबसे बड़ा प्रमाण तो लल्लेश्वरीके अपने वाक्य ही है जिनमें उसने शास्त्रों और अन्य ग्रन्थजालोंमें फंसकर आत्मज्ञानकी विस्मृतिका निर्देश किया है। इससे तो यही अनुमान होता है कि वह अवश्य पढ़ी लिखी थी।

विवाहित-जीवन

'लल्ला' का विवाह पाम्पोर (पद्मपुर) के एक ब्राह्मण घरमें हुआ था । उसको श्वसुरालयमें सुख नहीं मिला। उसकी सास बहुत ही प्रचण्ड प्रकृति कीं थी। उसका पति भी कुछ विशेष पढ़ा लिखा न था। वह कृषिकर्मसे अपनी आजीविका चलाता था। अध्यात्म-भावोंमें उसकी कुछ भी प्रवृत्ति न थी। केवल लल्लाका श्वसुर समझदार और पण्डित था। वह अपनी बहूसे बहुत प्रेम करता था । परन्तु सास अपनी बहूसे निष्कारण ही द्वेष करती रहती थी। उससे काम बहुत करवाती थी और उसके कामोंमें निराधार दोष निकाल कर उसे अयोग्या और मूर्खा प्रमाणित करनेका प्रयत्न करती थी । वह अपने लड़केके कान भरकर 'लल्ला' को कभी कभी पिटवाती भी थी। उसको ऊन कातनेके लिये देती थी। यद्यपि लल्ला ऊन कातनेमें मृणालके तन्तुओंकी भांति तार कातती थी, तथापि उसकी सास उसे डाटती थी और उसकी काती हुई ऊनको बाहर फेंकती थी। निष्कारण ही लल्लाको दूषण देती थी कि यह सारी ही ऊनको खराब करके वृथा ही व्यय बढ़ाती है। परन्तु लल्ला कभी भी कुछ नहीं कहती थी। लल्लेश्वरीकी सहिष्णुताका भी उपमान मिलना दुर्लभ है। कहते हैं कि जब उसकी सास उसको खानेके लिये थालीमें भोजन परोसती थी तो वह नीचे एक गोल पत्थर रखती थी और ऊपर उसके थोड़ेसे मुट्ठी भर चावल रखती थी, इससे देखनेमें भात अधिक लगता था। परन्तु धन्य है लल्लीकी सहनशीलता। उसने इस रहस्यको किसीसे भी नहीं कहा। वह अपनी साधना भी करती थी, परन्तु साथ ही घरका सम्पूर्ण कार्य भी करती रहती थी। अन्तमें उस रहस्यका उद्घाटन इस प्रकार हुआ कि एक समय लल्लाके ससुरने अपने जामाताको निमन्त्रित किया । घरमें बड़े समारोहसे भोजन का प्रबन्ध किया गया। जब लल्ला नदी पर पानी भर रही थी तो स्त्रियोंने कहा कि "आज लल्लाको स्वादिष्ट भोजन खाना होगा।" लल्लाने तो उत्तर दिया कि—

'ललि लल्लवठ चलि नो जाड़्' । 'अर्थात् लल्लाको तो वही बट (गोल पत्थर) भोजनके साथ मिलना है। स्वादु भोजन चाहे न हो'। इस बातसुको लल्लीके सर ने दैववश सुन लिया। तब वह इसके अन्वेषणमें रहा। जब भोजन परोसनेका समय हो गया तो उसने लल्लाकी थाली देखी और देखा कि लल्लाके पात्रमें एक बट्टा (गोल पत्थर) रखा हुआ है जिसके ऊपर कुछ चावलके दाने बिखरे हुए हैं । इस बात पर उसने अपनी पत्नीको अत्यन्त ही डाटा, परन्तु लल्लाको इससे क्या, वह तो इस प्रकारकी तपस्या कई वर्षोंसे करती आ रही थी। लल्लाको पतिका सुख भी भाग्यमें नहीं था । पति तो अपनी माताकी मिथ्या-उत्तेजनाओंसे उस पर कभी कभी इतना क्रुद्ध होता था कि उसे निर्दयता पूर्वक पीटने लगता था, परन्तु सती लल्ला कभी भी इसकी प्रतिक्रिया नहीं करती थी। वह तो इसे अपनी ही आत्मकला का विलास मानती हुई अपनी साधना करती ही जाती थी। उसके सामने तो रागद्वेषात्मक बुद्धिका नितान्त ही अभाव था।

(क्रमशः)

वेदोंमें वायुयान विज्ञान

(लेखक—श्री पं० जयदेव जी विद्यालङ्कार वेदभाष्यकार)

[विद्वान् लेखकके शुभ नामसे प्रत्येक वेदानुरागी तथा संस्कृत-प्रेमी व्यक्ति सुपरिचित ही है। आर्य सा० मं० लि० अजमेर द्वारा प्रकाशित पण्डितजीके वेदभाष्योंने पर्याप्त ख्याति प्राप्त की है और उनके द्वारा वैदिक-साहित्य-भण्डारकी महत्त्वपूर्ण सेवा हुई है। आपने अपने इस मौलिक अन्वेषणात्मक वैज्ञानिक लेखमें सिद्ध किया है कि भारतके प्राचीनतम युग अर्थात् वैदिकयुगमें भी वायुयान विज्ञान पर्याप्त उन्नत था। पाठक यह जानकर प्रसन्न होंगे कि भविष्यमें भी श्रद्धेय पण्डितजीके इस प्रकारके वैज्ञानिक लेख 'श्रीस्वाध्याय' में निरन्तर प्रकाशित होते रहेंगे। —सम्पादक]

वर्त्तमान युग विमानोंका है। वर्त्तमान विज्ञानसे आविष्कृत विमानोंको वर्त्तमानकी राजसत्ताओंने युद्ध एवं जनसंहार करनेका आवश्यक उपकरण बना लिया है। ब्रिटेन, जर्मनी, अमेरिका, जापान, रूस, इटली तथा अन्य प्रायः सभी स्वतन्त्र देशोंके पास अनेक प्रकारोंके भू-गगन-जल-विहारी विमान-सहस्रोंकी संख्यामें हैं। प्राचीन कालमें हमारे देशमें विमान थे या नहीं, इस प्रश्नके उत्तरमें हमारी संस्कृतिको अपमानित करनेके लिये सरकारी स्कूलों और कालेजोंमें जो कुटिल शिक्षा दी जाती है उसमें हमारी प्राचीन सभ्यताका सर्वथा हीन-चित्र विद्यार्थियोंके समक्ष रक्खा जाता है और उसमें विमानोंकी सत्ताको लेशमात्र भी स्वीकार नहीं किया जाता। परन्तु हमें अपनी वैदिक सभ्यता और संस्कृतिका अभिमान है, हम उसकी उपेक्षा नहीं कर सकते। इसलिये कर्त्तव्य हमें बाधित करता है कि हम प्राचीन सभ्यता और संस्कृतिकी उन्नतिकी यथार्थ बातोंका अपने प्राचीन साहित्यमें अनुसंधान करें।

सबसे प्राचीन साहित्य संसारके पुस्तकालयोंमें वेद हैं। वही हमारी आर्य-वैदिक आर्ष सभ्यता व संस्कृतिके आश्रय हैं। पौराणिक साहित्य, बौद्ध साहित्य, जैन साहित्य और वर्त्तमान देशीय भाषा-साहित्य सब उसके ही अनुवाद-प्रत्यनुवाद, छाया-प्रतिछाया, रूपान्तर-प्रतिरूपान्तर हैं।

सबसे प्रथम हमें विमानोंका अनुसंधान वेद-साहित्यमें ही करना है, वर्त्तमान युगमें सबसे प्रथम ऋषि दयानन्दने वेदोंमें विमान विद्याकी घोषणा की। अपनी प्रसिद्ध पुस्तक 'ऋग्वेदादि-भाष्यभूमिका' के नौ-विमानादि-विद्या विषय प्रकरणमें ऋषि दयानन्दने १० मन्त्रोंका उल्लेख किया है। ये मन्त्र ऋग्वेदके १ मण्डल। सू० ११६ मन्त्र ३, ४, ५, ६ तथा सू० ३४। मन्त्र २, ६॥ सूक्त ४६ मन्त्र ८। सूक्त ८५ मन्त्र ४॥ सू० १६४ मन्त्र ४७, ४८ हैं। ये मन्त्र वैदिक विमान विद्याके केवल निदर्शन मात्र हैं, ऋषि दयानन्द लिखते हैं—

"इस विषयके वेदोंमें बहुत मन्त्र हैं, परन्तु यहां थोड़ा ही लिखनेमें बुद्धिमान् लोग बहुत समझ लेंगे।'

इस प्रकार ऋषि दयानन्दकी दृष्टिमें विमानविद्याके बहुतसे मन्त्र थे, परन्तु पश्चात् वैदिक विद्वानोंने उनका निर्देश नहीं किया।

वैदिक सम्पत्तिके कर्ता श्री पं० रघुनन्दन शर्माने विमान सम्बन्धी साहित्यका थोड़ा सा परिचय दिया है। और बोधायन, भारद्वाज आदि ऋषियोंके ग्रन्थोंके कुछ उद्धरण देकर विमान विद्याकी उन्नतिका दिग्दर्शन कराया है।

श्री पं० प्रियरत्न आर्य (वर्त्तमान ब्रह्ममुनि) ने 'विमान-शास्त्र' नामक पुस्तिका प्रकाशित करके विमान-विद्याकी उन्नतिको अधिक स्पष्ट किया है, जिसका विस्तृत वर्णन अगले किन्हीं लेखोंमें करेंगे।